संशोधित संस्करण –दिसम्बर १९६० ई०

अनुवादक—रामगोपाल विद्यालंकार

सम्पादक –विद्या भास्कर

मूल्य—तीन रुपये

मुद्रक—कृष्ण कुमार जौहरी,
माडेस्ट प्रिंटिंग वर्क्स,
जीरो रोड, इलाहाबाद

The United States Political System
And How It Works
By David Cushman Coyle

लोकतन्त्र की क्रियाविधि

"जब मानव जाति लोकतन्त्र को अपनाती है, तब वह राजनीति के माध्यम से व्यवहार करती है। लोकतन्त्रात्मक समाज में शासन के कार्यों और नीतियों के बारे में परस्पर विरोधी मत शान्तिपूर्वक सुलझा लिये जाते है। इसके लिए साधारणतया गृह-युद्ध नही किये जाते। राजनीति के द्वारा ही लोग अपने निर्णय तथा विधान स्थिर करते हैं और उन्हे लागू करने के लिये सरकारी अधिकारियो का चुनाव करते है, जिससे ऐसा परिणाम निकले जो समाज के किसी महत्वपूर्ण अंग को बुरा न लगे।"

"अमेरिका की भली या बुरी राजनीति अमेरिकी जनता के मिश्रित रूप तथा विगत इतिहास को अभिव्यक्त करता है, जिसमें न केवल शासकीय संस्थाओ का बल्कि राजनीतिक जीवन की परम्पराओं का रूप निर्धारण हुआ है .... ।"

डेविड कुशमन क्वायल

इस पुस्तक में संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक पद्धति की सजीव, सक्रिय व्याख्या की गयी है। इसमें वहां के राजनीतिक संगठनों तथा एजन्सियों के पेचीदे जाल सूत्रो का परिचय है जो दिन प्रति दिन प्रत्येक राज्य में उस पद्धति को कार्यान्वित करती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के लोकतन्त्र की गम्भीर क्रियाविधि को समझने की यह बहुमूल्य कुञ्जी है। यह पुस्तक उस दर्शन की भी व्याख्या करती है जिससे यह पद्धति संचालित होती है।

विषय-सूची

अध्याय १

आरम्भ

जब मानव जाति लोकतन्त्र को अपनाती है तब वह राजनीति के माध्यम से व्यवहार करती है। लोकतन्त्रात्मक समाज मे शासन के कार्यो और नीतियो के बारे मे परस्पर विरोधी मत शान्तिपूर्वक सुलझा लिये जाते हैं। इसके लिए साधारणतया गृह-युद्ध नही किया जाता। राजनीति के द्वारा ही लोग अपने निर्णय तथा विचार स्थिर करते हैं और उन्हे लागू करने के लिए सरकारी अधिकारियो का चुनाव करते हैं, जिससे ऐसा परिणाम निकले जो समाज के किसी भी महत्वपूर्ण अंग को बुरा न लगे।

अमेरिका की भली या बुरी राजनीति अमेरिकी जनता के मिश्रित रूप तथा विगत इतिहास को अभिव्यक्त करती है, जिसमे न केवल शासकीय संस्थाओ की बल्कि राजनीतिक जीवन की परम्पराओ का रूप-निर्धारण हुआ है। अमेरिकी शासन-प्रणाली कुछ तो अठारहवी शताब्दी की ब्रिटिश औपनिवेशिक पद्धतियो का परिणाम है और कुछ उस व्यवस्था का, जो अमेरिका के इतिहास मे विशिष्ट परिस्थितियो का सामना करने के लिए आविष्कृत की गयी थी।

आज केवल आधी के लगभग अमेरिकी निवासियो मे इगलैण्डवासियो का रक्त रह गया है। शेष प्राय सबकी सब जनता या तो युरोपियन महाद्वीप के निवासियो, या नीग्रो और या अमेरिकी इण्डियनो की सन्तान है। कुछ लोग पूर्वी देशो से आये हुए भी हैं। जिस राजनीतिक प्रणाली से अमेरिकी लोग अपना शासन चलाते है उसकी रचना सहज सूझ-बूझ से अधिक और किसी तर्क-पूर्ण योजना

द्वारा कम हुई है। इसका प्रधान आधार तो ब्रिटिश रीति-रिवाज और परम्पराएँ हैं, परन्तु इसके निर्माण मे उन अन्य लोगो का भाग भी है जो संयुक्त राज्य अमेरिका मे बस गये है। यह पुस्तक यह दिखलाने के लिए लिखी गयी है कि इस देश मे राजनीतिक पार्टिया और राजनीतिक काररवाईया शासन की विविध शाखाओ को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।

सन् १६०७ से सन् १७७६ तक के औपनिवेशिक काल मे, ब्रिटिश अमेरिकी उपनिवेशो मे शासन की वे ब्रिटिश पद्धतिया जम चुकी थी जो कि पीछे चलकर देश की अधिकतर वर्तमान राजनीतिक संस्थाओ का आधार बनी।

औपनिवेशिक विधान-मण्डल उपनिवेशो के लिए कानून बनाते, स्थानीय शासनो को अनुमति पत्र देते, कर लगाते, और सार्वजनिक व्यय के लिए धन-राशि का परिमाण निर्धारित करते थे। वे कभी-कभी गवर्नरो के कामो पर अपना नियन्त्रण रखने के लिए कोश-बलका प्रयोग भी करते थे।

स्थानीय शासनो का संगठन इंगलैण्ड के स्थानीय शासनो के नमूने पर किया गया था। स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार, उपनिवेशो मे भी 'काउण्टियो' (छोटे जिलो), टाउनशिपो (नगर-विस्तारो), जागीरो और बरो (स्व-शासित नगरो) की स्थापना की गयी थी। उनमे से अनेक आज भी बिना किसी बडे परिवर्तन के वैसे ही विद्यमान हैं। क्रान्ति से पूर्व भी उपनिवेश वासी 'काउण्टी-कोर्टो' (जिला-अदालतो), 'जस्टिस ऑव् पीस' या आनरेरी मजिस्ट्रेटो, 'शरिफो' (कानून का पालन कराने वाले अधिकारियो) और 'कोरोनरो' (मृत्यु के कारणो की जांच करने वाली अदालतो) से भली-भांति परिचित थे। प्रत्येक उपनिवेश मे अपीले सुनने के लिए सुप्रीम कोर्ट (सर्वोच्च न्यायालय) और गम्भीर मामलो की सुनवाई के लिए मध्यवर्ती न्यायालय थे। अन्तिम अपील इंगलैण्ड की प्रीवी कौंसिल मे होती थी।

सभा कर सकने, सरकार से प्रार्थना करने, मुकदमे की सुनवाई जूरी द्वारा कराने, और कर लगाने के अधिकारी विधान-मण्डल मे अपना निर्वाचित प्रतिनिधि भेजने सरीखे अंग्रेजो के परम्परागत अधिकारो को उपनिवेशवासियो ने सहज ही अङ्गीकृत

कर लिया था। वे न तो इंगलैण्ड को कोई कर देते थे और न इंगलैण्ड उन्हे कोई सैनिक सहायता भेजता था, फिर भी अधिकतर औपनिवेशिक काल मे, ब्रिटिश सरकार उपनिवेशो को बार-बार फ्रान्सीसियो और कनाडा-वासी फ्रेंच इण्डियनो के साथ युद्ध मे फंसा देती थी। अन्त मे जब ब्रिटिश पार्लमेण्ट ने अमेरिकी लोगो पर (जिनका ब्रिटिश पार्लमेण्ट मे कोई प्रतिनिधि नही होता था) कर लगाने का प्रयत्न किया तब उन्होने उसे अपने पैत्रिक अधिकारो का उल्लंघन माना।

कानून के शब्दो द्वारा औपनिवेशिक शासनो को जितने अधिकार प्राप्त होने की कल्पना की जाती थी, वे वस्तुत. उसकी अपेक्षा कही अधिक स्वतन्त्र और अधिकार सम्पन्न थे, क्योकि दूरिया बहुत बडी थी और अतलान्तक समुद्र के पार आने-जाने मे समय बहुत लगता था। विशेषत अपने स्थानीय शासनो मे और पश्चिम की ओर धीरे-धीरे फैलते हुए अपने सीमान्त मे, अमेरिकी लोगो को अपने स्वामी ब्रिटिश राजा की उपस्थिति के चिह्न दिखलाई नही पडते थे। अंग्रेजो की आधीनता के एक-सौ-सत्तर वर्षों मे वे स्वशासन और आत्मनिर्भरता के बडी मात्रा में अभ्यस्त हो चुके थे। परन्तु उनके शासन के सर्वोच्च-नायक ब्रिटिश राजा और ब्रिटिश पार्लमेण्ट ही थे, जिसमे उनका एक भी प्रतिनिधि नही जाता था। इसलिए सगठित राजनीतिक दलो का वैसा विकास पहले नही हो पाया जैसा इगलैण्ड के साथ उपनिवेशो का सम्बन्ध विच्छिन्न होने के पश्चात् हुआ। राजनीतिक विवाद मुख्यतया गवर्नरो और विधान मण्डलो मे या स्थानीय पदो के उम्मीदवारो मे ही होते थे।

औपनिवेशिक काल मे फ्रान्सीसियो और इण्डियनो के साथ बार-बार जो युद्ध होते थे उनकी व्यवस्था करने के लिए एक औपनिवेशिक संघ बना लेने के कई सुझाव कई बार दिये गये। परन्तु इन पर अमल एक बार भी नही हुआ। हां, इनके कारण अमेरिकी लोग संयुक्त काररवाई करने के विचार से परिचित अवश्य हो गये। जब सन् १७७० के बाद के वर्षो मे इंगलैण्ड के साथ झगडे अधिकाधिक तीव्र होने लगे तब अमेरिकियो ने संयुक्त रूप से काररवाई करने पर गम्भीरता से ध्यान दिया। सन् १७७४ मे उन्होने महाद्वीप की एक कांग्रेस बुलायी।

महाद्वीप की काग्रेस का कानूनी आधार कुछ नही था . यह एक गैर-सरकारी प्रतिवाद सभा मात्र थी। इसने 'अधिकारो और शिकायतो की एक घोषणा' करके सन् १७७५ मे एक और काग्रेस बुलायी। इस काग्रेस ने अधिक निश्चित रूप धारण कर लिया, क्योकि मैस्सेच्यूसेट्स मे युद्ध छिड गया था और दोनो तरफ से गोलिया चलने लगी थी। इसने उपनिवेशो पर शासन करने का अधिकार अपने हाथ मे ले लिया। इसने एक राष्ट्रीय सेना संगठित करके उसके सेनापति पद पर जार्ज वाशिंगटन को नियुक्त कर दिया।

सन् १७७६ मे महाद्वीप की द्वितीय काग्रेस ने "स्वतन्त्रता की घोषणा" स्वीकृत की। "घोषणा" मे अंग्रेजो के परम्परागत अधिकारो और स्वतन्त्र मनुष्यो के अनपहरणीय अधिकारो पर बल देकर कहा गया था कि यही नीव है जिस पर अमेरिकी राज्य अपना शासन स्थापित करने का दावा करते हैं। "स्वतन्त्रता की घोषणा" मे कानून का वह बल नही है जो 'संविधान' मे है। परन्तु जिन नैतिक सिद्धान्तो के द्वारा संयुक्त-राज्य अमेरिका के कार्य-कलापो को समझा जा सकता है उनका विवरण इस घोषणा-पत्र मे होने के कारण इसका प्रभाव बहुत है।

सन् १७७७ मे महाद्वीप की काग्रेस ने संघीय एकता का प्रस्ताव कुछ शिथिल रूप मे अपना कर उसे राज्यो की स्वीकृति के लिए उनके पास भेजा। सन् १७८१ तक सब राज्यो ने उस पर अपनी स्वीकृति की छाप लगा दी और वह लेख-पत्र "आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" अर्थात् संघ-बद्धता के अनुच्छेदो के नाम से गणतन्त्र का प्रथम संविधान बन गया।

"आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" द्वारा स्थापित संघीय शासन व्यवहार मे आ सकने की दृष्टि से अति सरल और अति निर्बल था, परन्तु उस समय राज्य इससे अधिक कुछ मानने के लिए तैयार भी नही थे। जो थोडे बहुत अधिकार केन्द्रीय शासन को सौंपने के लिए राज्य तैयार थे, वे काग्रेस को दे दिये गये। काग्रेस तब एक सीधी-सादी सभा थी, जिसमे प्रत्येक राज्य का एक-एक वोट था। शासन मे न न्याय-पालिका की शाखा थी और न कार्य-पालिका की।

"आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" के आधीन होकर देश और राज्य द्रुतगति से संकट की ओर को लुढकने लगे। "काण्टिनेण्टल" (महाद्वीप की कागजी मुद्रा)

की इतनी स्फीति हुई कि वह प्राय. निरर्थक पदार्थ हो गयी। यहाँ तक कि आज तक भी "काण्टिनेण्टल के बराबर भी नहीं" यह अमेरिकी भाषा का एक मुहावरा बना हुआ है। राज्यों के बीच व्यापार अति न्यून रह गया। बहुत से अमेरिकी व्यापारी एक ऐसे अधिक बलशाली संघीय शासन की माग करने लगे, जो कि व्यापार को नियन्त्रित कर सके, कर लगा सके, और आर्थिक व्यवस्था को नष्ट होने से बचा सके। उन् १७८५ और सन् १७८६ मे व्यापारियों के दो अन्तर्राज्यीय सम्मेलन हुए, और उनके कारण सन् १७८७ मे 'फिलेडेल्फिया कन्वेन्शन' (फिलेडेल्फिया की परिषद्) बुलायी गयी, जिसमे संविधान लिखा गया। यही कारण है कि सविधान की रचना "व्यापार के अनुच्छेद" और उससे सम्बद्ध उन अनुच्छेदो के आधार पर हुई जिनमे कि संघीय शासन के विविध आर्थिक अधिकार और कर्तव्य निर्धारित किये गये हैं।

इन अनुच्छेदो से उन लोगो का मुख्य उद्देश्य प्रकट हो जाता है जिन्होंने कि 'कन्वेन्शन' बुलाया और उसके विचार मे भाग लिया था।

'फिलेडेल्फिया कन्वेन्शन' के अधिकतर प्रतिनिधि ऐसे वकील, भूमिपति या व्यापारी थे जो काग्रेस मे या सरकारी कर्मचारी के रूप मे काम कर चुके थे। उनमे मजदूरों या छोटे किसानों या सीमान्त की ओर बढने वाले अग्रणी लोगो के प्रतिनिधि नही थे। ये प्रतिनिधि एक ऐसे शासन का गठन करना चाहते थे जो व्यापार मे सहायक हो सके और बलवान तथा स्थायी हो। वे यह तो चाहते थे कि शासन 'जनता' के प्रति उत्तरदायी हो, परन्तु उनका इरादा यह नही था कि साधारण जनता राष्ट्रपति का या काग्रेस का चुनाव भी करे। उनको बडे और छोटे राज्यो मे ऐसा समझौता भी कराना था जिससे उनकी परस्पर ईर्ष्या और भय का अन्त हो जाय।

संघ का गठन संविधान की एक आवश्यक विशेषता थी, क्योकि उसके निर्माताओं का उद्देश्य यह था कि एक बलवान केन्द्रीय शासन की स्थापना की जाय और साथ-साथ वे सब अधिकार राज्यो के ही हाथ में रहने दिये जायं जिन्हे राष्ट्र को हस्तान्तरित कर देना अनिवार्यरूपेण आवश्यक नही था। इस दुहरे

उद्देश्य की सिद्धि के साथ ही यह भय भी लग रहा था कि कही संघीय शासन अति प्रबल होकर अत्याचार न करने लगे। कार्य-पालन, न्याय और विधि-निर्माण के अधिकारो को पृथक् रखने के सिद्धान्त की जड मे भी यही भय काम कर रहा था कि यदि शासन की इन तीनो शाखाओ या इनमे से दो के अधिकार कही एक ही हाथो मे केन्द्रित हो गये तो स्थिति बडी भयंकर हो जायगी।

परन्तु संयुक्त-राज्य-अमेरिका का संविधान सन् १७८८ से अबतक बिना किसी विरोध के स्थिर चला आ रहा है और इस वास्तविकता को देख लेने के पश्चात् यह सन्देह नही हो सकता कि यह अमेरिकी जनता की आवश्यकता और प्रकृति के अनुकूल नही है। जिन लोगो ने इसकी रचना की थी उनमे अमेरिकी चरित्र को और अन्य देशो और कालो के ऐतिहासिक अनुभवो को समझ सकने की आश्चर्यकारक शक्ति थी। उनके परिश्रम का परिणाम, सन् १७८८ की तात्कालिक समस्याओ को सुलझाने की दृष्टि से और उन परिस्थितियो की दृष्टि से जिनको वे पहले से देख नही सकते थे किन्तु जिनके अनुसार उन्होने अपने को ढाल लिया था, असाधारण था।

एक शताब्दी के पश्चात्, प्रसिद्ध ब्रिटिश विद्वान् जेम्स ब्राइस ने संयुक्त-राज्य के सविधान के विषय मे लिखा था—

"इसका दर्जा अन्य किसी भी लिखित संविधान से ऊँचा है, क्योकि इसकी योजना ठोस तथा उत्कृष्ट है, यह जनता की परिस्थितियो के अनुकूल है, इसकी भाषा सरल, सक्षिप्त और स्पष्ट है, और इसके सिद्धान्त निश्चित होते हुए भी इसकी तफसील मे लचकीलापन है। इसमे इन दोनो गुणो का मल खूब सन्तुलित है।"*

सविधान द्वारा संगठित संघीय शासन बहुत कुछ उसी प्रकार बना हुआ कृत्रिम राज्य था जिस प्रकार कोई कार्पोरेशन एक कृत्रिम व्यक्ति होता है या जिस प्रकार

---

*जेम्स ब्राइस लिखित "अमेरिकन कामनवेल्थ" के प्रथम भाग का पृष्ठ २५ (मैकमिलन कम्पनी, न्यूयार्क द्वारा सन् १८८९ मे प्रकाशित)।

वैद्युतिक मस्तिष्क सोचने का कृत्रिम यन्त्र होता है। यह वनाया गया था, जन्मा नही था। इसके अस्थि-पंजर पर अव चढा हुआ मास जो है उसे उन लोगो ने प्रदान किया है जिन्होने इसे क्रियान्वित किया था, अर्थात् राजनीति और व्यवहार-नीति की कलाओ मे कुशल अमेरिकनो ने।

राज्य स्वयम्भू और स्वयम्प्रभु थे। उन्होने स्वतन्त्र अग्रेजो के सर्व-प्रभुत्व सम्पन्न सव अधिकारो को अपने प्रदेश मे प्रयुक्त करने का और उसके पश्चात् अपनी स्वयम्प्रभुता का रूप स्वयं निर्धारित करने का अधिकार युद्ध मे जीता था। उसकी स्वयम्प्रभुता का नियन्त्रण केवल राष्ट्र के कानूनो से हो सकता था।

जव क्रान्तिकारी युद्ध आरम्भ हुआ तव राज्यो ने अनियमित विधान मण्डल स्थापित कर लिए और सन् १७७६ से सन् १७८० तक के मध्य मे उन्होने अपने संविधान वनाकर पूर्णतया संगठित शासनो की सृष्टि कर डाली। पीछे जाकर जिन सिद्धान्तो के आधार पर संघीय ढाचा वना उनमे से अधिकतर सिद्धान्तो की परीक्षा पहले एक या अनेक राज्यो मे हो चुकी थी। राज्यो के प्रथम संविधान छोटे थे, परन्तु उन्हे वनाया गया था पूर्ण समझ कर। उदाहरणार्थ, राज्यो मे विधि-निर्माण की, न्याय-पालन की और कार्य-पालन की शाखाएं पृथक्-पृथक् थी, "आर्टिक्ल्स आव कानफेडरेशन" द्वारा स्थापित संघीय-शासन मे ऐसा नही था।

"आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" मे यह सिद्धान्त स्थिर कर लिया गया था कि प्रत्येक राज्य अपने अधिकार से स्वतन्त्र, स्वाधीन और स्वयम्प्रभु है और संयुक्त राज्य को राज्यो द्वारा दिये गये अथवा "प्रतिनिधि-रूपेण" प्राप्त अधिकारो के अतिरिक्त अन्य कोई अधिकार नही है। जव नया संविधान लिखा जाने लगा तब उसकी रचना इसी सिद्धान्त पर की गयी, अन्तर केवल इतना रहा कि नया संघ "अधिक पूर्ण" था, अर्थात् उसे राज्यो के प्रतिनिधि के रूप मे अधिक अधिकार प्राप्त हो गये थे।

सन् १७८७ मे जव प्रतिनिधि फिलेडेल्फिया मे एकत्र हुए तव उन्हे केवल "आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" मे संशोधन प्रस्तुत करने का अधिकार दिया

गया था। "आर्टिक्ल्स" (अनुच्छेदो) में लिखा था कि संशोधन राज्यो की सर्व-सम्मति से ही स्वीकृत हो सकते हैं। परन्तु जब प्रतिनिधियो ने कार्य आरम्भ किया तव उन्होने देखा कि पूर्णतया नये शासन से कम मे काम नही चलेगा। उन्होने तव न केवल "आर्टिकल्स आव कानफेडरेशन" को, अपितु उस संशोधन सम्बन्धी अनुच्छेद को भी समाप्त कर डालने का निर्णय कर लिया जिसमे कि मूल संविधान को वदलने की विधि बतलायी गयी थी। उसके स्थान पर उन्होने नवीन संविधान मे उसे अपनाये जाने का अनुच्छेद भी लिखा, और प्रथम नौ राज्यो का नया सघ स्थापित करके उनसे उसे स्वीकृत कर लेने के लिए कहा। अन्य राज्य उसमे, जब वे तैयार हो जायं तब, सम्मिलित हो सकते थे।

"कन्वेन्शन" का मुख्य काम ऐसे शासन की योजना बनाना था जो प्रतिनिधियो द्वारा सौंपे गये उत्तरदायित्वो का निर्वाह कर सके और साथ ही उन आपत्तियो का उत्तर दे सके जो उसके विरुद्ध उठायी जायं। पश्चिमी यूरोप के देशो का संघ बनाने के वर्तमान प्रयत्नो को अमेरिकी लोग ऐतिहासिक-अनुभव-जन्य सहानुभूति की दृष्टि से देखते हैं। वे अपनी बाल्यावस्था मे स्कूल मे पढ चुके है कि संयुक्त-राज्य के संस्थापको को लगभग इन्ही समस्याओ से किस प्रकार उलझना पडा था।

जव "कन्वेन्शन" शुरू हुआ तब उसके सामने प्रस्तावो का एक विस्तृत मसविदा पेश किया गया। वे प्रस्ताव बडे राज्यो के स्वार्थों का प्रतिनिधित्व करते थे, और पीछे वे "वर्जीनिया योजना" के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके विरोध मे छोटे राज्यो ने एक भिन्न योजना तैयार की, वह "न्यू जर्सी योजना" कहलायी। यह विवाद चलता रहा कि इन दोनो परस्पर-विरोधी योजनाओ मे से कौन-सी अपनायी जाय।

दोनो योजनाओ मे कुछ बाते तो समान थी, जैसे कि अधिकारो की पृथक्ता। दोनो मे शासन की कार्य-पालिका, विधि-निर्मात्री और न्याय-कर्त्री शाखाओ को पृथक्-पृथक् रखने की व्यवस्था थी। सबसे अधिक कठिन और विवादास्पद समस्या यह थी कि विधान मण्डल का रूप और छोटे तथा बडे राज्यो के साथ उसका

सम्बन्ध किस प्रकार निर्धारित किया जाय। इस समस्या के कारण "कन्वेन्शन" भंग हो जाने का भय होने लगा। यह समस्या हमारे काल मे संयुक्त-राष्ट्र-संघ के अनुमति-पत्र के सम्बन्ध मे फिर खडी हो गयी है। भविष्य मे भी जहां-कही छोटे और बडे राज्य मिलकर किसी विवादास्पद प्रश्न पर कोई सम्मिलित काररवाई करना चाहेगे, वहा यह समस्या खडी होती ही रहेगी।

"वर्जीनिया योजना" मे, उच्च और निम्न दो सदनो वाले औपनिवेशिक शासन के सुपरिचित नमूने के अनुसार, दो सदनो की काग्रेस का प्रस्ताव किया गया था। एक सदन तो जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यो से मिलकर बनता, और दूसरे सदन का चुनाव पहले सदन के सदस्य राज्यो के विधान मण्डलो द्वारा नामजद उम्मीदवारो मे से करते। सबसे अधिक विवाद इस सुझाव पर था कि दोनों सदनो मे राज्यो का प्रतिनिधित्व उनकी आबादी, उनके द्वारा दिये हुए करो अथवा इन दोनो के किसी मेल के आधार पर हो। इस सुझाव के अनुसार बड़े राज्यो को अपने बडे होने का पूरा लाभ मिल जाता, जो उन्हे महाद्वीप की काग्रेस मे नही था, क्योकि उसमें प्रत्येक राज्य का एक-एक ही मत था।

न्यू जर्सी की योजना में उस समय विद्यमान शासन मे बहुत कम परिवर्तन करने की बात कही गयी थी। इस योजना मे एक ही सदन की काग्रेस का प्रस्ताव था और उसमे प्रत्येक राज्य को एक-एक ही मत का अधिकारी माना गया था, जैसा कि "आर्टिकल्स" मे भी था।

कई सप्ताह तक प्रतिनिधियो में इस कठिन प्रश्न पर विवाद चलता रहा कि छोटे और बडे राज्यो के एक ही शासन में सम्मिलित होने पर उनमे अधिकारो का उचित बंटवारा किस प्रकार हो? क्योकि इस प्रश्न का कोई पूर्ण हल नही निकल रहा था, इसलिए ऐसा सन्देह होने लगा कि व्यवहार मे आने योग्य संयुक्त शासन का संगठन भी हो सकता है या नही।

अन्त मे कनेक्टिकट के विलिअम सेम्युअल जान्स्टन ने एक हल सुझाया, जो कि 'कनेक्टिकट समझौते' के नाम से विख्यात हुआ। हल यह था कि एक 'हाउस

ऑव रिप्रेज़ेण्टेटिव्ज़' अर्थात् 'प्रतिनिधियो की सभा' हो जिसमे राज्यो का प्रतिनिधित्व अपनी जन-सख्या के अनुपात से रहे, धन एकत्र करने के सब विधेयको को आरम्भ करने का एकमात्र अधिकार इसी सभा को हो। एक दूसरा ऊपर का सदन हो। उसमे सब राज्यो का प्रतिनिधित्व एक-सा अर्थात् समान रहे। यह योजना अपना ली गयी।

यत. प्रत्येक बिल को कानून का रूप प्राप्त करने के लिए "हाउस ऑव रिप्रेज़ेण्टेटिव्ज" और सेनेट, दोनो मे स्वीकृत होना पडता है, अतः व्यवहार मे छोटे राज्य जिस बिल को अपने लाभ का विरोधी समझे उसे वे सेनेट मे उसके विरुद्ध मत देकर रोक सकते हैं। इसी प्रकार वडे राज्य किसी बिल को हाउस में अपनी मत-बहुलता के बल पर रोक सकते हैं। यह पद्धति इतनी भली-भाँति क्रियान्वित हो रही है कि सन् १७८७ मे छोटे और बडे राज्यो का जो स्वार्थ-संघर्ष आकाश मे एक बडा काला बादल सा दिखाई पड रहा था, वह कठिनाई का उतना बडा कारण सिद्ध नही हुआ जितना संस्थापक लोग कल्पना करते थे। स्वार्थों के प्रादेशिक संघर्ष का रूप अब बहुधा दलीय अथवा उद्योग, कृषि, या खानो आदि के विभिन्न हितो के प्रतिनिधियो मे संघर्ष का हो जाता है।

उदाहरणार्थ, आबादी के लिहाज़ से न्यू मेक्सीको और ऐरीजोना राज्य केलेफोर्निया से बहुत छोटे हैं। इन दोनो का उसके साथ बहुत समय से यह विवाद चल रहा है कि हूवर बाध बनाकर कौलौरेडो नदी का जो पानी रोका गया है उसका बटवारा किस प्रकार किया जाय। परन्तु इस प्रश्न का निबटारा करने के लिए छोटे और बडे राज्य काग्रेस मे अपने क्षेत्रफल के अनुसार विभक्त नही हुए।

सन्निधान का विधान यह था कि निम्न सदन के सदस्य जनता द्वारा अर्थात् मताधिकारी जनता द्वारा चुने जायँ। परन्तु यह अधिकार राज्यो के ही हाथ मे रह गया कि वे चाहे तो मताधिकार को कुछ सम्पत्ति के स्वामी और धार्मिक योग्यता से युक्त स्वतन्त्र गोरे लोगो तक सीमित कर दे ।

वुडरो विल्सन ने अपनी पुस्तक "हिस्ट्री ऑव द अमेरिकन पीपल" अर्थात् 'अमेरिकी लोगो का इतिहास' मे अन्दाज लगाया है कि आरम्भ के दिनो मे ४० लाख मे से केवल १ लाख २० हजार व्यक्तियो को मत देने का अधिकार रहा होगा।

अठारहवी शताब्दी मे यह पद्धति भी भयानक जनतन्त्री समझी जाती थी। अगले सौ वर्षो मे मत देने का अधिकार अधिकाधिक प्रकार के लोगो को दिया जाता रहा। पश्चिम की ओर को सीमान्त का शीघ्र विस्तार होता गया और ज्यो-ज्यो नये राज्य बनते गये त्यो-त्यो सीमान्तवासी लोगो का प्रभाव देश को समानता की ओर धकेलता गया। सन् १८६० तक प्राय सभी राज्यो ने इक्कीस वर्ष से ऊपर आयु के सब गोरे लोगो को मताधिकार दे दिया था। गृह युद्ध के पश्चात् संविधान मे नीग्रो लोगो को भी मताधिकार देने का संशोधन कर दिया गया, परन्तु कई दक्षिणी राज्यो ने नीग्रो लोगो के मत देने के मार्ग मे बहुत सी बाधाएं सफलता पूर्वक खडी कर रक्खी हैं। सन् १९२० मे संविधान मे एक और संशोधन करके स्त्रियो को भी मताधिकार दे दिया गया।

सेनेट (उच्च सभा) को हाउस (प्रतिनिधि सभा) की अपेक्षा जनता से अधिक दूर रखने का विचार था। इसलिए संविधान मे यह विधान रक्खा गया था कि प्रत्येक राज्य के दो सेनेटर उसके विधान-मण्डल द्वारा चुने जायें। इसका फल यह हुआ कि सेनेट साधारणतया हाउस की अपेक्षा अधिक परिवर्तन-विरोधी रहने लगी। सेनेट मे बहुधा सम्पन्न व्यक्ति होते थे अथवा ऐसे व्यक्ति होते थे जिन्हे बडे-बडे व्यापारियो और महाजनो के साथ घनी सहानुभूति होती थी। परन्तु जनतन्त्र को अधिकाधिक जन-प्रतिनिधिक बनाने का दबाव बढता गया। परिवर्तन-विरोधियो के विरोधी राजनीतिक लोगो ने भी इस परिवर्तन को बढावा दिया। फल यह हुआ कि सन् १९१३ मे फिर सविधान का संशोधन किया गया और राज्यो की जनता को अपने सेनेटर सीधे चुन लेने का अधिकार दे दिया गया।

सन् १९१३ से सेनेटरो की स्थिति, अपने राज्य के शासन का प्रतिनिधित्व करने के लिए वाशिंगटन मे भेजे गये राजदूत या प्रतिनिधि की न रहकर, बहुत कुछ ऐसे काग्रेस-सदस्य जैसी हो गयी है जिसकी पद-मर्यादा बढा दी गयी हो।

हाल के वर्षो में सेनेट प्राय. हाउस की अपेक्षा कम परिवर्तन-विरोधी सिद्ध हुई है। बहुत से निरीक्षको को तो ऐसा लगता है कि हाउस के सदस्य प्रभावशाली शक्तियो के दबाव मे आकर जिन अविचार तथा अदूरदर्शितापूर्ण विधेयको या प्रस्तावो के पक्ष मे मत दे बैठते हैं उन्हे अस्वीकृत कर देने की आशा हाउस सेनेट से करता है। जब कभी मतदाता अधीर और सिरफिरे हो जाते हैं तब बहुधा सेनेट साहस करके जनता की चिल्लाहट का विरोध करती है और उसे आशा रहती है कि जनता की भावना बदल जायगी। सेनेटर अधिक स्वतन्त्र वृत्ति से काम करते हैं, क्योकि उनका कार्य-काल छ वर्ष का होता है, जब कि उनकी तुलना मे 'रिप्रेजेण्टेटिवो' को प्रति दो वर्ष पीछे मतदाताओ का सामना करना पड जाता है। 'मितव्ययिता' का लेखा कायम कर देने की धुन में हाउस बहुधा शासन के व्ययो मे इतनी कटौती कर डालता है कि वे व्यवहार्य स्तर से भी नीचे चले जाते हैं। परन्तु काग्रेस के सदस्यो को भरोसा रहता है कि शासन चलाने के लिए जितने धन की आवश्यकता होगी उतना सेनेटर फिर पास कर देगे।

संविधान का मूल विधान यह था कि राष्ट्रपति को एक 'इलेक्टोरल कालिज' अर्थात् प्रत्येक राज्य के विशिष्ट व्यक्तियो से मिलकर संघटित निर्वाचक-मण्डल द्वारा चुना जाय—'इलेक्टोरल कालिज' का चुनाव प्रत्येक राज्य जिस प्रकार चाहे उस प्रकार कर ले, चाहे विधान-मण्डल द्वारा, चाहे जनता द्वारा और चाहे गवर्नर द्वारा। ऐसा कोई इरादा नही था कि राष्ट्रपति का चुनाव जनता करे। निर्वाचको का चुनाव भी, जब तक राज्य ही वैसा निर्णय न करे, जनता द्वारा करवाने का इरादा नही था।

परन्तु इस मामले मे लोकतन्त्रीय भावना की तीव्रता ने चुपचाप संविधान का अर्थ ही बदल डाला। कोई संशोधन तक स्वीकृत करने की परवाह नही की। प्रत्येक राजनीतिक पार्टी निर्वाचक चुनने के लिए अपने उम्मीदवार खडे करती है, और वे निर्वाचक राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के चुनाव मे अपनी ही पार्टी के उम्मीदवारो को मत देने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होते हैं। निर्वाचको को मत देने की स्वतन्त्रता नही होती। पार्टी के जिन निठल्लुओ को राष्ट्रपति चुनने की कोई खास तमीज नही होती वे भी बहुधा निर्वाचक बन जाने का अभिमान करने लगते हैं।

सन् १६४८ मे आशंका हो गयी थी कि दक्षिणी राज्यो के कुछ निर्वाचिक डिमोक्रेट उम्मीदवार वनकर भी, राष्ट्रपति पद के डिमोक्रेट उम्मीदवार ट्रूमन के विरुद्ध मत देकर, इस परम्परागत पद्धति को विगाड न दे। ट्रूमन तो चुने गये, परन्तु सार्वजनिक अनवस्था और जनता की इच्छा की सम्भावित विफलता के भयो की ओर लोगो का ध्यान आकृष्ट हो गया।

"इलेक्टोरल कालिज" अथवा निर्वाचक-मण्डल की एक और विशेषता, जिसका संविधान मे विधान नही है, यह प्रथा है कि प्रत्येक राज्य मे सव निर्वाचक उसी पार्टी के चुन दिये जाते हैं जो राज्य के चुनावो मे जीतती है। पराजित पार्टी में से एक भी निर्वाचक नही लिया जाता, भले ही उसे जनता ने ४६ प्रतिशत मत क्यो न दिये हो। इसका परिणाम यह होता है कि निर्वाचको का मत जनता के मत से वहुत ही भिन्न वन जाता है। शायद विजेता के पक्ष मे जनता का मत ५५ प्रतिशत ही हो, परन्तु निर्वाचको का मत उसे ८० या ६० प्रतिशत तक मिल जाता है। यह परिणाम ऊपर से देखने मे 'सर्वसम्मत' दिखाई देता है और राष्ट्रपति की आवाज़ का वल इससे वहुत वढ जाता है, विशेपत. अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे।

परन्तु इसमे इस वात की भी सम्भावना है कि कोई उम्मीदवार कुछ राज्यो मे केन्द्रित वहुमत के वोटो को प्राप्त कर ले, जव दूसरा उम्मीदवार एलेक्टोरल कलिजो से प्राप्त नाम मात्र के वहुमत के वल पर राष्ट्रपति का चुनाव जीत ले। उदाहरणार्थ सन् १८८८ मे जनता का वहुमत ग्रोवर क्लीवलैण्ड के पक्ष मे था, परन्तु राष्ट्रपति चुने गये थे वेन्जामिन हैरिसन। यह सम्भावना इस पद्धति की एक विशेष बुराई मानी जाती है, परन्तु इससे "एक दलीय" राज्यो का तुलनात्मक महत्व अवश्य समाप्त हो जाता है। प्रश्न किया जा सकता है कि जो राज्य द्वि-दलीय राजनीतिक सघर्ष मे विशेष उत्साह नही दिखाता उसे भी राष्ट्रपति के चुनाव मे उतना ही भाग मिलना चाहिए जितना कि स्वस्थ-द्वि-दलीय पद्धति पर चलने का अभिमान करने वाले राज्य को।

अमेरिकी लोकमत किसी ऐसी तर्क-सम्मत विधि को अपनाने का पक्षपाती प्रतीत होता है जिससे जनता का बहुमत क्रियान्वित होने का निश्चय हो जाय,

परन्तु जिसमे यह भय न हो कि कोई निर्वाचक जब चाहे तब अपने संवैधानिक अधिकार का दावा पेश करके अपनी इच्छानुसार मत देने लगे। परन्तु जबतक जनता की इच्छा विफल होने का कोई बडा प्रदर्शन नही हो जाता तबतक संविधान मे इस प्रकार का सशोधन करने के प्रति जनता की उदासीन वृत्ति शायद चलती ही रहेगी।

शासन की किसी भी शाखा को उच्छृखल न होने देने के लिए संविधान में सावधानतापूर्वक "नियन्त्रणो और सन्तुलनो की पद्धति" का समावेश किया गया है।

उदाहरणार्थ, काग्रेस द्वारा स्वीकृत किसी बिल को राष्ट्रपति अपने 'वीटो' या निषेधाधिकार के द्वारा अस्वीकृत कर सकता है। तब वह विधेयक पुन. काग्रेस के सामने जाता है और वह तबतक कानून का रूप धारण नही कर सकता जब तक दोनो सदन उसे दो-तिहाई के बहुमत से पुन. पास न कर दें।

काग्रेस भी राष्ट्रपति के कई कामो का—प्रधान सेनापति के रूप मे उनके संवैधानिक अधिकार के प्रयोग तक का—धन के व्यय की अनुमति देने से इनकार करके 'वीटो' या निषेध कर सकती है।

राष्ट्रपति द्वारा की गयी किसी सन्धि को सेनेट 'वीटो' अर्थात् निषेधाधिकार द्वारा निषिद्ध कर सकती है। शासन के सब महत्वपूर्ण पदाधिकारियो और संघ के सब न्यायाधीशो को नियुक्त तो राष्ट्रपति करता है, परन्तु उन नियुक्तियो के सेनेट द्वारा सम्पुष्ट होने की शर्त पर।

संविधान मे यह विधान नही है कि सुप्रीम कोर्ट अर्थात् सर्वोच्च न्यायालय काग्रेस द्वारा स्वीकृत कानूनो को असवैधानिक बतलाकर निषिद्ध ठहरा सके। परन्तु घटनाओ की परम्परा ने न्यायालय को यह अधिकार अपने हाथ मे लेने दिया है।

राष्ट्रपति, सर्वोच्च न्यायालय के सदस्य और कार्यपालिका तथा न्यायपालिका शाखाओ के अन्य महत्वपूर्ण अधिकारी, 'इम्पीचमेण्ट' अर्थात् अभियोगारोपण द्वारा अपने पदो से पृथक किये जा सकते है। 'इम्पीचमेण्ट' की काररवाई मे इस्तगासा

हाउस दायर करता है और न्यायालय का कार्य सेनेट करती है। राष्ट्रपति जॉन्सन सेनेट मे केवल एक मत के कारण 'इम्पीचमेण्ट' से बच गये थे। सेनेट ने अबतक केवल चार मामलो मे 'इम्पीचमेण्ट' के पक्ष मे मत दिया है और वे चारो मामले संघीय न्यायालय के न्यायाधीशो के थे।

नियन्त्रणो और सन्तुलनो का सिद्धान्त, शासन की तीनो शाखाओ के अधिकारो की पृथक्ता के सिद्धान्त को काट देता है। परन्तु ये दोनो मिलकर व्यावहारिक समझौते का ऐसा मार्ग निकाल देते हैं जो अमेरिकी बुद्धि को खूब पसन्द आ जाता है। विधि-निर्माण, कार्य-पालन और न्याय-पालन के अधिकारो को एक दूसरे से सर्वथा पृथक् कर देना असम्भव है। परन्तु साथ ही यह देखना भी आवश्यक है कि उनमे से कोई से दो किसी भावी तानाशाह या गुप्त पुलिस-राज्य के हाथ मे न जाने पावे। इन शाखाओ की आंशिक पृथक्ता और नियन्त्रणो और संतुलनो की योजना, देश को उस आपत्ति से बचाने के लिए की गयी थी जिसे आज हम 'एकवर्गाधिकारवाद' के नाम से पुकारते हैं, और अब वह उसमे सफल भी हुई है।

जिन लोगो ने संविधान की रचना की थी उन्होने संघीय शासन के अत्याचार-पूर्ण कार्यो से नागरिको की रक्षा करने के लिए किसी आम 'बिल ऑव राइट्स' अथवा अधिकार-सूची का विधान नही किया था। निश्चय ही उसमे जहाँ तहाँ ऐसे वाक्याश थे जो उन कुछेक अन्यायो को रोकते थे जो भूत-काल मे लोगो को ब्रिटिश राजा और पार्लमेण्ट के हाथो सहने पडे थे। संविधान के प्रथम अनुच्छेद मे शासन को 'बिल ऑव अटेण्डर' स्वीकृत करने पर निषेध लगा दिया है, अर्थात् उसे नागरिक अधिकारो के अपहरण का ऐसा कोई विधेयक बनाने से वर्जित कर दिया गया था जिसके द्वारा किसी व्यक्ति या उसके परिवार को बदला लेने की भावना से दण्ड देने के लिए चुना जा सके। 'एक्स-पोस्ट-फैक्टो' कानून अर्थात् ऐसे कानून बनाने का भी निषेध कर दिया गया था जिनका प्रभाव कानून बनने से पूर्व के कार्यो पर पडता हो, जिससे जो कार्य किये जाने के समय अपराध नही था। वह पीछे उस कानून द्वारा अपराध न ठहराया जा सके।

"हेबियस कार्पस" (बन्दी प्रत्यक्षीकरण) का अर्थात् बन्दी बनाये हुए व्यक्ति को न्यायालय मे उपस्थित करवाने का अधिकार सुरक्षित रखा गया था, जिससे पुलिस किसी भी व्यक्ति को मनमाने ढंग से बन्दी न बना सके, जैसा रोम आदि बहुत से एकवर्गाधिकारी देशो मे होता देख चुके हैं। तृतीय अनुच्छेद मे सघीय अपराधो के मुकदमो की सुनवाई जूरी द्वारा होना आवश्यक ठहराया गया है। आजकल कम्युनिस्ट लोग 'राजद्रोह' के अपराध पर किसी को भी निष्कासित अथवा 'पर्जिङ्ग' कर राजनीतिक शुद्धि की प्रक्रिया करते हैं उसे करने के लिए उन दिनो राजा लोग इस (राजद्रोह के अभियोग) का बहुत दुरुपयोग किया करते थे। उस दुरुपयोग को सावधानता पूर्वक रोक दिया गया था।

परन्तु जब सविधान स्वीकृति के लिए राज्यो के पास भेजा गया तब विरोधियो ने इसकी आलोचना यह कहकर की कि इसमे कोई पूरा "बिल ऑव राइट्स" अर्थात् अधिकार-सूची सम्मिलित नही है। कुछ राज्यो ने अपनी स्वीकृति इसी शर्त पर दी कि नयी काग्रेस पहला काम यह करे कि संविधान मे इस प्रकार की सूची जोडने के लिए सशोधन का काम हाथ मे ले।

संविधान मे प्रथम दस सशोधन उसमे अधिकारो की सूची जोडने के रूप मे किये ही गये हैं। विस्तार की कई बातो मे यह संयुक्त-राष्ट्र संघ की सभा द्वारा अपनायी गयी "मानव अधिकारो की घोषणा" से भिन्न है। अठारहवी शताब्दि मे जिस प्रकार के अन्याय अग्रेजो ने अपनी सरकारो से सहे थे या जिसका उनके पुरखो ने दीर्घकालीन तथा कटुतापूर्ण संघर्ष के बाद अन्त कर दिया था, उसी की पृष्ठभूमि पर अमेरिकनो को उनके सविधान द्वारा अधिकार प्राप्त हुए थे। परन्तु हमारे समय मे हिटलर और कम्युनिस्टो ने अन्य अन्यायो का आविष्कार कर लिया या प्राचीन तथा असभ्य काल के अन्यायो को पुनरुज्जीवित कर लिया है। सिद्धान्त अब भी वही है।

संविधान की मुख्य विशेषताएँ यही थी। इन्होने एक ऐसा मजबूत ढाँचा तैयार कर दिया है जिसपर स्वयंप्रभु जनता जो भी कुछ बनाना चाहे, अमेरिकी जनता की राजनीतिक शक्तियाँ वही बना सकती हैं। कुछ विशेषताएँ तो, जैसे

कि कांग्रेस का निर्वाचन और उसके अधिकार, आज तक बिना किसी मौलिक परिवर्तन के वैसे ही चले आ रहे हैं। अन्यो का, जैसे निर्वाचक मण्डल के और सर्वोच्च न्यायालय के अधिकारो का, रूपान्तर हो गया है। परन्तु संविधान प्रारम्भ मे जो काम करने के लिए बनाया गया था—अर्थात् अमेरिकी जनता की स्वयंप्रभुता की रक्षा करते हुए उसकी आधीनता मे एक ऐसा दृढ शासन स्थापित करने के लिए जो कि अमेरिकी जनता के नाम पर एक राष्ट्र की भाति कार्य कर सके—उसे वह निरन्तर करता चला जा रहा है।

अध्याय २

राजनीतिक दल

अमेरिकी जनता स्पष्ट रूप से दो पार्टियो की पद्धति पसन्द करती है। गत दो सौ वर्षों मे जब कभी उसने देखा कि हमारे यहा केवल एक पार्टी रह गयी है तभी उसने उसे दो खण्डो मे विभक्त कर दिया या कोई नयी पार्टी खडी कर दी और जब उसने देखा कि पार्टिया तीन हो गयी हैं तब उसने उनमे से एक का निर्वाचन मे अन्त कर दिया।

औपनिवेशिक काल मे ह्विग और टोरी, दो अत्यन्त विभिन्न राजनीतिक प्रवृत्तियो के प्रतिनिधि थे—इतनी विभिन्न प्रवृत्तियो के कि उनमे विरोध के कारण सन् १७७५ मे युद्ध छिड गया था। इस समय दोनो पार्टिया प्रायः एक दूसरी से मिलती जुलती हैं, यहा तक कि कभी-कभी उनकी चर्चा होने पर "जैसे नागनाथ वैसे सापनाथ" कह दिया जाता है। प्रति दो वर्ष पीछे वे परस्पर सहमति से एक ऐसी लडाई लडती है कि उसमे दोनो पक्ष इतने सुरक्षित रहते हैं कि पराजित पक्ष की भी भारी क्षति नही होती।

अमेरिकी पार्टियो की विशेषताएं, देश के इतिहास और परिस्थितियो का परिणाम है। वे राजनीतिक नेताओ की किसी योजना का फल नही है। वास्तव मे, अमेरिकी संविधान की एक विचित्र विशेषता यह है कि उसमे पार्टियो का ज़िक्र तक नही किया गया।

क्रान्ति से पहले पार्टिया आधुनिक रूप मे संगठित नही थी। परन्तु जो लोग साधारणतया ब्रिटिश राजा और उसके द्वारा नियुक्त गवर्नरो के पक्ष मे रहते थे वे टोरी

कहलाते थे और दूसरे, जिनका झुकाव औपनिवेशिक विधान मण्डलो और स्वशासन के सिद्धान्तो के पक्ष मे होता था वे प्राय. ह्विग कहलाते थे। टोरियो और ह्विगो के पारस्परिक संघर्ष का अन्त युद्ध के द्वारा हुआ था। ह्विग अथवा 'देशभक्त' न केवल युद्ध मे जीत गये थे, बल्कि उन्होने विरोधी पक्ष को सर्वथा समाप्त भी कर दिया था। टोरी देश से निकाल दिये गये और वे भाग कर कैनेडा अथवा बहामाज चले गये थे।

यद्यपि आज भी संयुक्त राज्य अमेरिका मे परिवर्तन विरोधियो को कभी-कभी 'टोरी' कह दिया जाता है, परन्तु क्रान्ति के पश्चात् इस देश मे इंगलैण्ड के राजा को पुन. प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न करनेवाली कोई पार्टी नही रही।

इसलिए अन्य सब क्रान्तिकारी देशो की भाति, संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीति का आरम्भ भी एकदलीय राजनीतिक प्रणाली से हुआ था। जार्ज वाशिंगटन और अन्य अनेक क्रान्तिकारी नेता चाहते थे कि वह वैसा ही रहे। वाशिंगटन ने अपने 'विदाई भाषण' मे जनता को, पार्टियो के, "विशेषत: उन्हे प्रादेशिक भेदो के आधार पर स्थापित करने के" विरुद्ध सचेत किया था। उसने "साधारणतया पार्टी की भावना के हानिकारक परिणामो के विरुद्ध भी······अति गम्भीर" चेतावनी दी थी। उससे "कभी-कभी दंगा और विद्रोह तक भडक उठते हैं।"

वाशिंगटन को ह्विगो और टोरियो के युद्ध की याद थी। उसने उस परिस्थिति की कल्पना कर ली थी जो देश के विविध भागो में पार्टियो के संगठित हो जाने पर उत्पन्न होती और जिसमे वे प्रतिद्वन्दी शासन स्थापित कर सेनाएं खडी कर लेती। पीछे सन् १८६१ मे सचमुच ऐसा हुआ भी।

जेम्स मेडिसन ने "फेडरलिस्ट पेपर्स" मे संविधान को स्वीकृति कर लेने की वकालत करते हुए नवीन संघीय शासन का एक लाभ यह भी बतलाया था कि उसकी रचना "पार्टी-बाजी का झगडा मिटाने और उसे नियन्त्रित करने के लिए ही की गयी है।

उदाहरणार्थ, राष्ट्रपति के चुनाव मे निर्वाचक-मण्डल की कल्पना विशेष रूप से पार्टी-बाजी की राजनीति से बचने के लिए की गयी थी। बहुत से

संस्थापक राष्ट्रपति को एक प्रकार का निर्वाचित राजा मानते थे, जो आज के फ्रान्स के राष्ट्रपति या इंगलैंड के राजा की भाँति सब पार्टियो से पृथक् रहता है। संविधान की प्रथम रचना मे यह निर्देश था कि प्रत्येक राज्य के निर्वाचक एक स्थान पर एकत्र होगे और प्रत्येक निर्वाचक, अपनी प्रथम और द्वितीय पसन्द प्रकट किये विना, दो व्यक्तियो को मत देगा। इस प्रकार जिस व्यक्ति को सबसे अधिक मत मिलेंगे वह राष्ट्रपति हो जायगा और उसके बाद वाला उपराष्ट्रपति। आशा थी कि इस पद्धति मे इस बात की गारण्टी रहेगी कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति वही व्यक्ति बन सकेंगे जो प्रमुख लोगो की दृष्टि मे नम्बर एक और नम्बर दो होगे।

सन् १७८७ में भी संविधान लिखा जा चुकने पर लोगो मे इस प्रश्न पर मतभेद था कि उसे स्वीकृति किया जाय या नही, यद्यपि तबतक वे निश्चित राजनीतिक पार्टियो मे संगठित नही हुए थे। मोटे तौर पर व्यापारी, महाजन और परिवर्तन-विरोधी भूमिपति तो संविधान के पक्षपाती थे। उनका नेता ऐलेग्जेण्डर हैमिल्टन था। श्रमिक तथा किसान, विशेषत. स्थानीय राजनीतिक नेता, राज्यीय तथा स्थानीय स्वशासन का अधिकार छिन जाने के भय से, उसका विरोध कर रहे थे। सविधान बहुत थोड़े बहुमत से स्वीकृत हो सका था, वह भी केवल इस कारण कि मताधिकार जनता के अति न्यून प्रतिशत को, मुख्यतया जमीन-जायदाद के मालिको को, प्राप्त था।

परन्तु परस्पर एक दूसरे का विरोध करने वाली पार्टियो का संगठन प्रायः वाशिंगटन के द्वितीय कार्य-काल की समाप्ति तक नही हुआ। इसके दो कारण थे। पहला वाशिंगटन की लोकप्रियता और दूसरा व्यापार तथा समृद्धि पर संविधान का अनुकूल प्रभाव। उक्त काल के पश्चात्, लोग इस प्रश्न पर परस्पर विरोधी राजनीतिक सँगठनो मे विभक्त होने लगे कि नया राष्ट्रपति कौन हो। एक पक्ष तो व्यापार, पूंजी और नगरो के मध्य-वर्ग के प्रतिनिधियो, 'फेडरलिस्टो' (अर्थात् संघ-पक्षपातियो) का था, जिसका सर्वाधिक प्रभाव उत्तर-पूर्वी राज्यो मे था, और दूसरा पक्ष "रिपब्लिकनो" का था, जिनका नेता टामस जेफर्सन था। वे मुख्यतया

ग्रामीण जनता के—वर्जीनिया के भद्र-जनो से लेकर टेनसी के अग्रगामियो तक के—प्रतिनिधि थे। नगरो के श्रमिक भी उन्ही के साथ थे।

जब वाशिंगटन ने यह विभाजन होता देखा तब वह बहुत दु:खी हुआ। परन्तु उसकी पुकार बेकार रही, क्योकि स्वतन्त्र लोग आपसी झगडो को सुलझाने का मार्ग स्वयं ही तलाश किया करते हैं।

इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका का एकदलीय क्रान्तिकारी शासन शीघ्र ही बंट कर द्विदलीय पद्धति मे परिणत हो गया।

सन् १७९६ मे जीत 'फेडरलिस्टो' की हुई और उन्होंने जान ऐडम्स को राष्ट्रपति चुना। सन् १८०० तक दोनो पार्टिया अच्छी तरह पृथक् हो चुकी थी और तब राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के पदो के लिए दोनो ने अपने-अपने उम्मीदवार पृथक्-पृथक् खड़े किए थे। इस बार जीत रिपब्लिकनो की हुई और उनके सभी निर्वाचको ने अपना मत टामस जेफर्सन और आरौनबर्र के पक्ष मे दिया। परन्तु चूंकि तब निर्वाचक अपने दो मतो मे से कौन प्रथम और कौन द्वितीय यह प्रकट नही कर सकते थे, इसलिए दोनो विजेताओ को बराबर मत प्राप्त हो गये। संविधान के नियमानुसार इन दोनो मे से एक का चुनाव 'हाउस' ने किया और उसने जेफर्सन को राष्ट्रपति चुना। परन्तु जेफर्सन की जीत 'हाउस' मे पैंतीसवी बार जाकर मत लेने पर हुई, जिससे यह प्रकट हो गया कि हारती हुई पार्टी भी 'हाउस' मे मतो का जोड-तोड़ करके जीतती हुई पार्टी की इच्छा को सुगमता से विफल कर सकती है।

इस उपहासास्पद परिणाम के कारण ही संविधान मे बारहवा संशोधन किया गया, जिसके अनुसार अब निर्वाचक, राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति को अपना मत पृथक्-पृथक् देते हैं और जीते हुए उम्मीदवारो मे फैसला कांग्रेस को नही करना पडता। परन्तु इस संशोधन से निर्वाचक-मण्डल बनाने का मूल प्रयोजन नष्ट हो गया। इसके द्वारा यह तथ्य मान लिया गया है कि पार्टिया विद्यमान हैं और निर्वाचक निरी रबर की मुहरें हैं जो कि पार्टियो द्वारा पहले से निश्चित उम्मीदवारो को ही मत देने के लिये बाधित हैं।

यहा यह समझा देना उचित होगा कि जेफर्सन की पार्टी जो आज की डिमोक्रेटिक पार्टी की पूर्ववर्ती मानी जाती है, आरम्भ मे रिपब्लिकन पार्टी क्यो कहलायी थी।

सन् १८०० मे जेफर्सनियनो ने अपने आपको "रिपब्लिकन" केवल इस कारण कहा था कि वे राजाओ के विरोधी थे। वे फ्रेंच क्रान्ति के भी पक्षपाती थे। उसे वे अमेरिकी क्रान्ति का अच्छा अनुकरण मानते थे। उनके विपरीत, 'फेडरलिस्ट' कुलीन फ्रेंचो को फासी दिये जाने से और उनकी हत्याओ से क्षुब्ध हो उठे थे। फ्रास के राजा से भी उनकी खासी सहानुभूति थी। उन्होने जेफर्सनियनो पर 'डेमोक्रेट' अर्थात् फ्रेंच क्रान्ति का प्रेमी होने का आक्षेप किया। उस समय 'डेमोक्रेसी' शब्द का अर्थ था 'भीड का राज', और उसका प्रयोग उसी प्रकार किया जाता था जिस प्रकार हम "रेडिकलिज्म" शब्द का प्रयोग करते हैं, जिसका अर्थ है 'चरम परिवर्तन तक का पक्षपात।' पीछे, नेपोलियन के देहान्त के पश्चात्, इस शब्द की तीव्र भावना बहुत कुछ नष्ट हो गयी। परन्तु जब जेफर्सन राष्ट्रपति था तब वह अपने आपको उसी प्रकार 'डिमोक्रेट' नही कहता था जिस प्रकार आज के युग मे फ्रेंकलिन रूजवेल्ट "रेडिकल" कहलाना पसन्द न करता।

'फेडरलिस्टो' ने जो फेडरल अर्थात् संघीय शासन स्थापित किया था उसकी सफलता के कारण ही वे शीघ्र नष्ट हो गये। एक बार संघ की स्थापना हो जाने पर, देश का विस्तार अति शीघ्र होने लगा। लोग अपालेचियन पर्वतमालाओ मे होकर ओहायो और टेनिसी घाटियो मे उमड पडने लगे, और पश्चिमी देश के मतदाताओ की संख्या उतर-पूर्वी नगरो से कही अधिक हो गयी।

सन् १८०१ मे राष्ट्रपति का पद ग्रहण करने के पश्चात् जेफर्सन ने भी अमेरिका के विस्तार की लहर को तीव्र करने मे योग दिया। उसने बलशाली संघीय शासन के विरुद्ध अपनी पहली आपत्तियो को भुला दिया और साहस करके मिसिसिपी नदी की समूची पश्चिमवर्ती घाटी लूइजयाना को खरीद डाला।

'फेडरलिस्ट' मुकाबला करने लायक नही रहे। उनकी पार्टी मृतप्राय हो गयी और सन् १८२० मे वे अपना उम्मीदवार तक खड़ा नही कर सके। देश एक बार

पुनः एकदलीय बन गया। इस समय को 'सद्भावना' का युग कहा जाता है, क्योंकि कुछ वर्ष तक विरोधी पार्टी रही ही नही थी। परन्तु धीरे-धीरे रिपब्लिकन नेताओ मे ही मतभेद उत्पन्न होने लगे और शीघ्र ही द्विदलीय सिद्धान्त पुन. लौट आया। रिपब्लिकन दो गुटो मे बँट गये। एक गुट का नेता जौनक्विन्सी ऐडम्स था। वह 'नेशनल रिपब्लिकन' कहलाता था और अधिक पुराने विचारो का पक्षपाती था। ऐडम्स सन् १८२४ मे राष्ट्रपति चुना गया। परन्तु सन् १८२८ मे दूसरा गुट, जो कि अपने आपको 'डिमोक्रटिक-रिपब्लिकन' कहता था, जीत गया और उसका प्रतिनिधि ऐण्डरू जेक्सन राष्ट्रपति हो गया।

सन् १८३२ मे नेशनल-रिपब्लिकनो के उत्तराधिकारी ह्विग कहने लगे। इन ह्विगो का अठारहवी शताब्दी के क्रान्तिकारी ह्विगो या 'देश भक्तो' या इंगलैण्ड के ह्विगो के साथ कोई सम्बन्ध नहीं था। ये परिवर्तन- विरोधी थे और किसी ऐसे नाम की तलाश मे थे जिसके सहारे मत बटोरे जा सकें। इस काल मे 'फेडरलिस्ट-नेशनल रिपब्लिकन ह्विग' पार्टी पीछे रह गयी, क्योंकि सीमान्त के राज्यो की संख्या बढती चली गयी और वे अपना मत जैक्सन-छाप राजनीति के पक्ष में देते थे परन्तु ह्विग दो सैनिक नेता चुनने मे सफल हो गये, सन् १८४० मे विलियम-हेनरी हैरिसन को और सन् १८४८ मे जैकारी टेलर को।

सन् १८५० के पश्चात् दासता का प्रश्न अति तीव्र हो गया। ह्विगो और डिमोक्रेट रिपब्लिकनो, जो अब डिमोक्रेट कहलाने लगे थे, दोनो की पार्टियो मे दासता के प्रश्न पर आन्तरिक मतभेद हो गया। उत्तरी और दक्षिणी डिमाक्रेटो मे भी परस्पर विरोध हो गया। ह्विग पार्टी बिखर गयी और दासता के विरोध के आधार पर एक नयी पार्टी बनी, जिसने अपना नाम 'रिपब्लिकन पार्टी' रखा। उसने अपना उम्मीदवार अब्राहम लिंकन को बनाया। सन् १८६० मे वह राष्ट्रपति चुना गया।

वाशिंगटन की चेतावनी के अनुसार सन् १८६० की दोनों पार्टिया "प्रदेशिक भेदो के आधार पर संगठित थी" और भावना मे इतना बही जा रही थी कि

उनका मतभेद भडकीला सिद्ध हो गया। उच्च तट-कर के पक्षपाती उत्तर-पूर्वी व्यवसायियो और निम्न तट-कर के समर्थक दक्षिणी कपास उत्पादको में, दासता के भावना पूर्ण प्रश्न के अतिरिक्त, पुराना विरोध भी बहुत समय से चला आ रहा था। इन दोनो विरोधो ने राष्ट्र को भी इन्ही भौगोलिक प्रदेशो मे बाट दिया। इस कारण विरोधी पक्ष, गृह-युद्ध के लिए अपना-अपना पृथक् संगठन करने लगे, और लिंकन के निर्वाचित होते ही गृह-युद्ध छिड गया।

गृह-युद्ध के पश्चात् अमेरिकी लोग उस प्रकार फिर कभी विभक्त नही हुए। उनके प्रादेशिक विवाद इतने तीव्र नही हुए कि वे अन्य विवाद उनकी तुलना मे गौण हो जायं, जिनके कारण जनता भिन्न प्रकार विभक्त होती है—जैसे कि श्रमिको के कानून, राष्ट्रीय व्यय, टैक्स, सामाजिक सुरक्षा, अथवा ट्रस्टो के विरोध आदि के विवाद। साराश यह है कि अमीरो और गरीबो, नगरनिवासियो और किसानो के विवाद, उत्तर और दक्षिण अथवा उत्तर-पूर्व और पश्चिम के विवादो की अपेक्षा अधिक प्रवल रहते आये हैं। इन विवादो के कारण गृह-युद्ध की पृष्ठ-भूमि नही वनने पायी।

संयुक्त राज्य अमेरिका क्रान्तियो से भी सुरक्षित रहा है। सन् १७७५ के पश्चात् आन्तरिक क्रान्ति के लिए वैसी पृष्ठ-भूमि नही वनी जैसी कि रूस मे केरेन्सकी वाली क्रान्ति अथवा जर्मनी और इटली मे हिटलर और मुसोलीनी वाली क्रान्तियो के लिए वन गयी थी। संयुक्त राज्य अमेरिका मे भीड ने कभी जो दंगे किये भी वे देश की विशालता के कारण और देश के बडे भाग मे न फैलने के कारण स्वयं ठण्डे पड गये। शासन को उलट देने वाले वैसे अभियान के कभी वाशिंगटन पर हो जाने की कल्पना तक करना कठिन है जैसा कि मुसोलीनी ने रोम पर किया था और जिससे इटली का शासन उलट गया था।

इन भाग्यपूर्ण परिस्थितियो से यह भली प्रकार प्रकट हो जाता है कि आज की रिपब्लिकन और डिमोक्रेटिक पार्टिया किस प्रकार वनी। लगभग सौ वर्ष तक द्विदलीय पद्धति के अनेक रूपो की परीक्षा करने के पश्चात् अमेरिकी जनता पार्टियों

के ऐसे मेल पर पहुँच गयी है जिसमे अनेक उलझनो से भरे राजनीतिक झगड़े तो चलते रहते है, परन्तु गृह-युद्ध तथा विद्रोह छिड जाने का भय नही रहता।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे जो द्विदलीय पद्धति आजकल प्रचलित है उसका निर्माण किसी योजना की अपेक्षा स्वत.प्रेरणा से अधिक हुआ है। उसके द्वारा बहुमत का ऐसा शासन संगठित हो जाता है जिस पर नियन्त्रण एक विजेता पार्टी का रहता है। अधिकतर समय, राष्ट्रपति, सेनेट और 'हाउस ऑव रिप्रेजेण्टेटिव्ज' (प्रतिनिधियो की सभा), तीनो पर एक ही पार्टी का नियन्त्रण रहता है। साथ ही, अल्पमत पार्टी इतनी बुरी तरह कभी पराजित नही होती कि वह आशा का सर्वथा परित्याग कर बैठे।

यह पद्धति, एक ओर तो युरोप मे प्रचलित बहुदलीय शासनो से और दूसरी ओर ब्रिटेन की द्विदलीय पद्धति से, सर्वथा भिन्न है। अमेरिकी पद्धति का अपना ही विशिष्ट युक्ति क्रम है, जो किसी युरोपियन की समझ मे तो आता ही नही, अंग्रेज की समझ मे भी बहुत नही आता।

युरोपियन लोकतन्त्र के किसी भी नमूने मे अनेक पार्टिया होती है और उनमे से प्रत्येक के कुछ स्पष्ट निश्चित सिद्धान्त रहते है। एक पार्टी क्रिश्चियन-सोशलिस्ट और दूसरी कैथोलिक कन्जर्वेटिव हो सकती है। इतिहास की विचित्र गति के कारण हो सकता है कि जो पार्टी अपने को रेडिकल-सोशलिस्ट कहती हो वह, सम्भव है कि, मध्य वर्ग के व्यापारियो की प्रतिनिधि हो। और, कम्युनिस्ट तो वहां सदा रहते ही हैं। उनका अनुशासन सर्वोत्तम है और, वे उसी का साथ देने को तैयार हो जाते हैं जो उनके बहकावे मे आकर उनकी स्वार्थ-सिद्धि का साधन बनने की हामी भर ले।

बहुदलीय पद्धति की कल्पना इस आधार पर की गयी है कि प्रत्येक पार्टी को किसी सिद्धान्त का समर्थक होना चाहिए, जिससे कि जो भी कोई उस सिद्धान्त के पक्षपाती हो वे उस पार्टी मे सम्मिलित हो जायं और आगे बढने मे उसकी सहायता करें। आधुनिक जीवन अनेक उलझनो से भरा हुआ है, और राजनीतिक, आर्थिक

तथा सामाजिक सिद्धान्त भी बहुत से हैं, इसलिए पार्टियो की अनेक शाखा-प्रशाखायें हो सकती हैं और होती भी है।

परन्तु संसदीय पद्धति के जनतन्त्रीय शासन को अपनी संसद मे बहुमत का समर्थन प्राप्त करना पडता है। जब कभी प्रधान मन्त्री और उसके मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत कोई महत्वपूर्ण बिल स्वीकृत नही हो पाता तभी शासन का पतन हो जाता है। तब या तो प्रधान मन्त्री और उसके मन्त्रिमण्डल को पदत्याग कर देना पडता है और या, यदि उसके संविधान मे वैसी व्यवस्था हो तो, वे संसद को भंग करके नया निर्वाचन करवा सकते है।

इसलिए युरोप के लोकतन्त्रीय देशो मे शासन का संगठन करने के लिए कई पार्टियों को परस्पर मेल करना पडता है, जिससे कि उनका बहुमत हो जाय। इनमे से प्रत्येक पार्टी अपना 'दूध शुद्ध' होने का दावा करती है, परन्तु यदि वह संसदीय जनतन्त्र की समाप्ति करके तानाशाही की स्थापना न कर दे तो वह अकेली अपने 'शुद्ध दूध' के भरोसे देश का शासन नही कर सकती। लोकतन्त्रीय शासन मे भाग लेने के के लिए उसे अपने 'शुद्ध दूध' को अन्य दो या तीन पार्टियो के मिलावटी माल से पतला करना पडता है। इस कारण परम्परा ही यह पड गयी है कि अनेक संयुक्त मन्त्रिमण्डल बनते और बिगडते हैं और कोई भी टिक्कर उन्नति के मार्ग पर स्थिर प्रगति नही कर पाता।

अमेरिकियो की दृष्टि से इस पद्धति मे अधिक निरुत्साह करनेवाली बात यह है कि जहाँ अनेक पार्टिया होती हैं वहा कभी-कभी नरम या "मध्य-मार्गी" पार्टियो का ही एक मात्र मोर्चा ऐसा रह जाता है जो देश को स्वतन्त्र रख सकता है।

साधारणतया स्थिति का वर्णन यह कहकर किया जाता है कि दक्षिण पक्ष में तो फासिस्ट होते है, जो स्वतन्त्र शासन को उलटने और किसी नये मुसोलीनी या हिटलर को खडा करने का यत्न करते रहते है; और वामपक्ष मे कम्यूनिस्ट होते हैं जो सत्ता हथियाने का यत्न करते रहते हैं; जैसा उन्होने जेकोस्लोवेकिया मे किया

था। इस स्थिति से स्पष्ट है कि लोकतन्त्र पक्षपाती पार्टियो की स्थिति मध्य में होती है। उनमे से कुछ का झुकाव दक्षिण की ओर को अधिक होता है और कुछ का वाम की ओर को।

अनेक पार्टियो की पद्धति का वर्णन करने का यह तरीका दोषपूर्ण है क्योंकि इसमे इस बात का खतरा है कि दो एक तन्त्रवादी पार्टिया स्वातन्त्र्यप्रिय पार्टियो को एक दूसरे से विलग और दूर करने की प्रवृत्ति दिखलावें। उदाहरणार्थ, फासिस्ट या नव नाजी, कुछ ईमानदार परिवर्तन-विरोधियो को यह कहकर अपनी ओर घसीट सकते है कि सभी दक्षिण-पक्षीय हृदय ने इन्ही विचारो के है। इसके विपरीत, असावधान 'लिबरलो' (उदार विचारवालो) को कम्यूनिस्ट प्राय यह नारा लगाकर बहका लेते हैं कि सभी 'वाम-पक्षियो' का एक सयुक्त मोर्चा होना चाहिए। ये जोड-तोड यदि सफल हो जाएं तो राजनीतिक जीवन सर्वथा विरोधी दो पक्षो मे बंट जाता है, और मतदाताओ को फासिस्ट या कम्यूनिस्ट एकवर्गाधिकार वादो मे से एक का चुनाव करना पड जाता है। आत्मघात की दो विधियो मे से एक को अपना लेने के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग बचा नही है, इस भ्रम मे फंसने से बचे रहने का उत्तम उपाय यह है कि ऐसी आलंकारिक भाषा का प्रयोग न किया जाय जिसके कारण स्वतन्त्र ससार खाई और खड्डे के मध्य मे फंसा हुआ प्रतीत होने लगे।

राजनीतिक प्रवृतियो की इस स्थिति को चित्रित करने का अच्छा उपाय एक ऐसी सीधी रेखा खीच देना नही है जिस के सिरो पर बैठ कर फासिस्ट और कम्यूनिस्ट, मध्य मे बैठी हुई लोकतन्त्रीय शक्तियो पर आक्रमण कर रहे हो। वास्तविक स्थिति उस लम्बे पतले त्रिकोण के समान है जिसके शीर्ष पर तो लोकतन्त्रीय संस्थाएं और पार्टिया हो, और शेष दोनो कोणो पर प्रतिस्पर्धी एकवर्गाधिकार पक्षपाती शक्तिया जमी हुई हो। फासिस्ट अर्थात् चरम-प्रतिक्रियावादी और कम्यूनिस्ट अर्थात् चरम-परिवर्तन पक्षपाती, दोनो, एक-वर्गाधिकारवादी पुलिस-राज स्थापित करने का यत्न करते रहते है। वे लडते भी हैं तो बदमाशो के उन दो गिरोहो की तरह जिन मे झगडा इस बात पर होता

है कि लूट पर अधिकार किसका रहे। वे बहुधा मिल भी जाते हैं, जैसे कि सन् १६३६ मे हिटलर और स्टालिन मिल गये थे। जिस संसद मे फासिस्ट और कम्यूनिस्ट पार्टियो की सदस्य-संख्या इतनी अधिक होती है कि वे भय का कारण बन सकें, वहा वे पार्टिया शासन को नष्ट कर देने की आशा में प्रायः मिलकर मत देती हुई दिखाई पडती हैं।

लोकतन्त्र विरोधी पार्टियो के सदस्यो को जहा भी लूट का अधिक अच्छा अवसर दिखाई पडता है वे अपनी पार्टी छोडकर झट वही चले जाते हैं। उदाहरणार्थ, पूर्वी जर्मनी की कम्यूनिस्ट सरकार को बहुत से भूतपूर्व नाजियो का भी खासा उपयोग दिखाई देता है, विशेषतः सेना मे।

अमेरिकियो को अनेक पार्टियो की पद्धति मे सबसे भयानक निर्बलता यह दीखती है कि प्रत्येक नये निर्वाचन मे देश की स्वतन्त्रता एकमात्र इस बात पर निर्भर करने लगती है कि जीत लोकतन्त्रीय 'मध्यम' पार्टियो की हो। दूसरे शब्दो मे, प्रत्येक नया चुनाव स्वतन्त्रता और आपत्ति के मध्य मे एक साम्मुख्य हो जाता है। इसमे एकमात्र विकल्प जलते तेल की कढाई मे से कूद कर आग मे गिरने का रह जाता है। द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात् युरोप के कई देश इसी स्थिति में पडे हुए हैं। लोगो को अपने यहाँ का शासन पसन्द हो या न हो, उनके लिए कढाई मे पडे रहने के सिवाय और कोई चारा है भी नही। यदि वे इससे बाहर निकलेंगे तो एकवर्गाधिकार की उस आग मे गिर जायेंगे जिसमे पूर्वी युरोप के लोग भुन रहे हैं।

अमेरिकी पद्धति यद्यपि अपूर्ण है तथापि इसमे इतना गुण अवश्य है कि यह जनता को स्वतन्त्र शासन के विकल्पो मे से चुनाव का अवसर प्रदान करती है। लोगो को यह सोचने का अवसर मिलता है कि समृद्धि को स्थिर रखने, या राष्ट्र की रक्षा-व्यवस्था करने, या अपव्यय और भ्रष्टाचार से बचकर चलने के लिए, दोनो मे से कौन सी पार्टी अच्छी रहेगी। चुनाव की गरमी के क्षणो के अतिरिक्त, लोगो को विश्वास रहता है कि जिस पार्टी का हम विरोध कर रहे हैं यदि वही

जीत गयी तो वह भी कम से कम अमेरिका-प्रेमी और लोकतन्त्र-पक्षपाती तो रहेगी ही। बडी पार्टियो मे ऐसी आत्मघाती एक भी नही जो यदि जनता की असावधानता से कभी पदारूढ पार्टी को पद-च्युत करने में सफल हो जाय तो देश को सोवियट रूस के सपुर्द करने की सोचने लगे।

परन्तु इस स्वतन्त्र चुनाव का मूल्य यह है कि दोनों पार्टियो को संयुक्त राज्य अमेरिका का उचित प्रकार शासन करने के लिए आवश्यक नेताओं, अनुयायियो और सिद्धान्तो से सम्पन्न होना चाहिए। विजेता पार्टी को न्यून या अधिक इमानदारी से, उन सब सुस्थापित सिद्धान्तो मे विश्वास रखनेवाला होना चाहिए जिसका जनता अपने शासक से पालन करवाना चाहती है।

एक बार यह मान लेनेपर कि अमेरिकी द्विदलीय पद्धति मे दोनो पार्टियो के लिए प्राय. उन सब सिद्धान्तो और कार्यक्रमो को अपनाना आवश्यक है जिनकी मतदाताओ का कोई बडा भाग मांग करे, "जैसे नागनाथ वैसे सापनाथ" की कहावत का प्रयोग अर्थपूर्ण और आवश्यक लगने लगता है। प्रत्येक पार्टी चुनाव से पहले ही मतदाताओ को यह दिखलाने का प्रयत्न करती है कि उसके शासन का रूप क्या होगा। इसलिए उसे उनकी अधिक महत्वपूर्ण आवश्यकताओ की पूरी सूची भी तैयार करनी पड़ती है। इस कारण इसमे आश्चर्य की बात कुछ नही कि अमेरिकी मतदाताओ को प्राय· ऐसा लगता है कि रिपब्लिकन और डिमोक्रेटिक कार्यक्रम एक से हैं और अन्तर केवल उनके उम्मीदवारो मे है। पार्टी का संगठन चुनाव जीतने और शासन पर नियन्त्रण प्राप्त करने के लिए है, एक आदर्श के स्थान पर दूसरे की स्थापना करने के लिए नही।

परन्तु यह सर्वथा सत्य नही है कि पार्टियो के उम्मीदवार ही पृथक् होते हैं, उनके सिद्धान्त और कार्यक्रम प्राय. एक से होते हैं। नागनाथ सर्वथा वही नहीं होता जो कि सापनाथ।

किसी अमेरिकी के लिए किसी विदेशी को यह समझाना कठिन है कि रिपब्लिकनो और डिमोक्रेटो मे अन्तर क्यों है। अंग्रेज द्विदलीय पद्धति का अभ्यासी

है परन्तु उक्त अन्तर वह भी सुगमता से नही समझ पाता। आन्दोलन के भाषणो के अतिरिक्त भी दोनो पार्टियो के परिवर्तन विरोधियो, उदार-विचारवालो, जिन्हे "जंगली गीदड के बच्चे" कहा जाता है उनमे, और दोनो की प्रादेशिक स्थितियो मे कुछ अन्तर है ही। अल्पमत पार्टी प्राय: पदारुढ पार्टी की अपेक्षा बजट को अधिक कठोरता से घटाना चाहती और राज्यो के अधिकारो का अधिक पक्ष लेती है। अनेक स्थानीय अथवा प्रादेशिक स्वार्थो से भी एक पार्टी दूसरी की अपेक्षा अधिक प्रभावित होती है।

'फेडरलिस्टो' और जेफर्सनियनो मे पुराने अन्तर के अवशेष भी अभी शेष हैं। कुछ रिपब्लिकन व्यावसायिक स्वार्थो का और कुछ डिमोक्रेट श्रमिको का अधिक ध्यान रखते हैं, परन्तु दोनो पार्टियो मे बहुत से अपवाद भी हैं। व्यवहार मे साधारणतया देखा जाता है कि वैदेशिक या आन्तरिक मामलो के महत्वपूर्ण बिलो पर कांग्रेस के बहुमत और अल्पमत, दोनो दलो मे आन्तरिक मतभेद हो जाता है, परन्तु सदा एक ही प्रकार नही।

दोनो पार्टियो के जो मतदाता, उम्मीदवार का विचार किये बिना, सदा रिपब्लिकन या डिमोक्रेट पक्ष मे ही मत देते हैं उनका निर्वाचक-मण्डल में निश्चित बहुमत नही है। अमेरिकी लोग द्विदलीय पद्धति का जो रूप समझते हैं उसकी यह भी एक विशेषता है। यदि एक ही पार्टी की जीत निश्चित हो जाती तो मतदाताओ पर एक ही दलीय पद्धति लद जाती। तब एक पार्टी को दो भागो मे विभक्त होना पडता, जैसा कि डिमोक्रेटिक-रिपब्लिकनो ने सन् १८२४ मे किया था। जब द्विदलीय पद्धति ठीक प्रकार काम कर रही होती है तब चुनाव का निर्णय वे मध्यवर्ती निर्वाचक करते हैं जो स्वतन्त्र कहलाते है। वे दोनो पार्टियो के वचनो को तोल कर अपना मत देने का निश्चय करते हैं। प्रत्येक चुनाव मे ये स्वतन्त्र मतदाता डिमोक्रेटो और रिपब्लिकनो मे अन्तर के किसी प्रचलित विचार को ठीक मान कर चलते हैं। उनको उस समय जैसा भी लगता है उसके अनुसार ये रिपब्लिकनो को डिमोक्रेटो की अपेक्षा, अथवा उससे उलटा डिमोक्रेटो को रिपब्लिकनो की अपेक्षा, अधिक परिवर्तन-विरोधी मान लेते हैं। इसके अतिरिक्त समृद्धि, या

भ्रष्टाचार या शान्ति सम्बन्धी विचारो का भी इन पर प्रभाव पडता है। परन्तु सबसे अधिक ये यह देखते है कि राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार कौन व्यक्ति है।

कुछ राज्यो का 'ठोस' डिमोक्रेटिक और कुछ का 'ठोस' रिपब्लिकन होना संयुक्त राज्य अमेरिका मे साधारणतया लोकतन्त्रीय पद्धति का दोष माना जाता है। संघीय निर्वाचन मे इन राज्यो के सामने कोई विकल्प नही रहता, स्थानीय रूप से प्रबल पार्टी के प्रारम्भिक निर्वाचनो मे ये प्रतिस्पर्धी उम्मीदवारो मे से एक का चुनाव भले ही कर दे। परन्तु राष्ट्रीय निर्वाचनो मे इन एकदलीय राज्यो की प्रबलता नही होती, इसलिए राष्ट्र मे लोकतन्त्र सुरक्षित रहता है। भाग्यवश संयुक्त राज्य अमेरिका मे किसी ऐसे 'ठोस' धार्मिक या जातीय समाज का प्रभाव नही है जो कि उम्मीदवारो या समस्याओ का विचार किये बिना अपने मत सामूहिक रूप से दे। अमेरिकनो की दृष्टि मे लोकतन्त्र का आधार ही यह है कि मतदाता निर्वाचनो का निर्णय उम्मीदवारो और नीतियो का स्वतन्त्र चुनाव कर के करे।

ब्रिटेन की द्विदलीय पद्धति कुछ भिन्न प्रकार की है। ब्रिटिश लोगो का विश्वास है कि 'लेबर' और 'कन्जर्वेटिव' पार्टियाँ अपनी नीतियो और सिद्धान्तो के कारण, डिमोक्रेटो और रिपब्लिकनो की अपेक्षा, एक दूसरे से अधिक भिन्न है। यदि ऐसा हो तो इसे कुछ स्पष्ट कर देना आवश्यक है।

शायद इसका उत्तम स्पष्टीकरण यह है कि किसी भी अच्छी द्विदलीय पद्धति मे मतदाताओ को, बिना किसी गृह-युद्ध के, दोनो मे से एक पार्टी को चुनने की स्वतन्त्रता तो होती ही है, वे नीतियो और मार्गों का चुनाव भी यथा-सम्भव अधिक विविध प्रकारो मे से करना चाहते है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे राष्ट्रीय प्रगति की मुख्य दिशा के विषय मे किसी भी प्रकार का विवाद नही है। बडी पार्टियो मे से कोई भी तानाशाही या अर्थव्यवस्था के विनाश, या अन्य किसी आपत्ति के मार्ग को अपनाना नही चाहती। परन्तु यह एक चौडी सडक है, जिसमे छोटी बडी गलियाँ तो है ही। कभी-कभी घूमकर छोटे रास्ते से निकल जाने का अवसर भी है। पार्टियो के रुख मे वास्तविक अन्तर निर्वाचन मे जनता के चुनाव का विषय बन जाता है।

विरोधी पार्टी निर्णतव्य प्रश्नो का निश्चय मतदाताओ की ऐसी आलोचनाओ और असन्तोषो को देखकर करती है जिनके सहारे उसे आशा हो कि वह उन्हे पदारूढ पार्टी का विरोधी बना सकेगी। परन्तु दोनो पार्टिया ऐसे प्रश्नो से बचकर चलती है जिनके कारण बहुसंख्यक मतदाताओ के बिदक जाने की सम्भावना हो। व्यवहार कुशल राजनीतिज्ञो द्वारा निर्णतव्य प्रश्नो के निश्चय का फल यह होता है कि पार्टियो मे मतभेद तो यथेष्ट रहता है, परन्तु उन पर "संविधान को उलट देने" का आक्षेप नही आने पाता।

अमेरिकी पार्टियाँ यदि ब्रिटिश पार्टियो से अधिक भिन्न हैं तो इसका कारण यह है कि ब्रिटिश राजनीतिक नेता, जनता को इस प्रकार डराये बिना कि वे चुनाव हार जायं, चुनाव जीत जाने की दशा मे अधिक बडे परिवर्तन करने की प्रतिज्ञाएं कर सकते है। ब्रिटिश जनता अमेरिकनो की अपेक्षा कम उत्तेजित होती है, कम से कम तब से जब कि प्रथम विश्व युद्ध से कुछ पहले उत्तरी आयरलैंड मे विद्रोह हो जाने का भय हो गया था। ब्रिटिश लोग एक भी गोली छोड़े बिना चर्चिल से कूदकर ऐटली पर जा सकते और फिर वापिस चर्चिल पर आ सकते हैं। अमेरिकी लोग शायद समाजवादियो की जीत का सामना इतनी शान्ति से न कर सकते, परन्तु वे भी गृह-युद्ध के बिना ही हूवर से रूजवेल्ट पर ट्रूमन से आईजनहावर पर छलाग लगा सकते हैं। व्यावहारिक द्विदलीय पद्धति में दोनों पार्टियो में अन्तर का यह यथासम्भव ठीक अन्दाजा है।

डिमोक्रेटिक और रिपब्लिकन पार्टियो में अनेक बेसुरे तत्व हैं परन्तु विभिन्न अनुपातो मे दोनो पार्टियो को सदा अपने जाने का भय रहता है। परन्तु नेताओ की अगले चुनाव जीतने की इच्छा पार्टी को एकत्र बनाये रखने की शक्ति का काम करती है। कभी-कभी कोई विद्रोही नेता पार्टी से पृथक् होकर एक तीसरी लेड पार्टी बना लेता है, क्योकि वह समझता है कि पार्टी अत्यन्त परिवर्तन-विरोधी हो गयी है। थियोडोर रूजवेल्ट ने सन् १९१२ मे इसी प्रकार रिपब्लिकनो से पृथक् होकर "प्रोग्रेसिव' अथवा 'बुल-मुज' पार्टी बना ली थी। रार्बट ला शोलैट (बड़े ने) सन्

१९२४ मे एक प्रोग्रेसिव की हैसियत से ही आन्दोलन किया था। वह भी रिपब्लिकन पार्टी से ही फूटकर पृथक् हुआ था। सन् १९४८ मे दो पार्टियां डिमोक्रेटिक पार्टी से फूटकर बनी थी। डिमोक्रेटिक पार्टी की आलोचना वालेस के अनुयायी 'प्रोग्रेसिव' उसे अति अपरिवर्तन-वादी बतलाकर, और 'डिक्सीक्रैट' उसे अत्यन्त चरम-परिवर्तन-पक्षपाती (रेडिकल) बतलाकर करते थे। इन दोनो फटवा पार्टियो मे से कोई भी पुरानी पार्टी को नष्ट करके उसका स्थान नही ले सकी। परन्तु सन् १९१२ मे 'बुल-मूजरो' के फट जाने के कारण रिपब्लिकन हार गये थे और उडरो विलसन चुनाव जीत गया था।

अन्य पार्टियो की आधार-भूत निर्बलता यह है कि वे झगडे का आरम्भ सदा किसी सैद्धान्तिक कारण से करती है और उनकी ओर आकृष्ट केवल वे मतदाता होते है जो उस सिद्धान्त के भक्त होते है। इन फटी हुई खण्डित पार्टियो के अनेक अनुयायी स्पष्ट भाषा मे नागनाथ और सापनाथ को समाप्त करके पार्टियो का पुनर्गठन सिद्धान्तो के आधार पर करने का प्रतिपादन करते है।

वे सब परिवर्तन-विरोधियो को—दक्षिण-पन्थियो मे पागलपन की सीमा पर पहुचे हुए फासिस्टो तक को—एक 'कन्जर्वेटिव' (परिवर्तक विरोधी) पार्टी मे, और सब उदार विचार वालो को,—जो कम्युनिस्टो का और वामपन्थियो मे पागलो तक का स्वागत कर सकें—एक "प्रोग्रेसिव" अर्थात् प्रगतिशाली पार्टी मे एकत्र देखना चाहते हैं। उनका विचार है कि मतदाताओ को सच्चे निर्वाचन का अवसर तभी मिल सकेगा।

परन्तु भेडो और बकरियो की छटाई के इस सुझाव का फल दोनों के एक दूसरे से बिल्कुल दूर भाग खडे होने के अतिरिक्त और कुछ नही होगा, और यह आत्मघात कर लेने का मूर्खतापूर्ण मार्ग है। कोई भी जीवित रहने योग्य जनतन्त्र किसी न किसी प्रकार ऐसी किसी दलीय पद्धति की खोज कर ही लेता है जिससे लोगो को अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने का अवसर मिल जाय, वह कितनी ही अपूर्व क्यो न हो। अमेरिकी रिपब्लिकनों और डिमोक्रेटो की पद्धति, अनेक परस्पर विरोधी स्वार्थों को, एक दूसरे के नाश का प्रयत्न किए बिना, एकत्र रहने के लिए

सहमत कर लेती है। यह त्रुटियो और तर्क-विरुद्ध समझौतो से परिपूर्ण है, परन्तु अब तक यह विनाश से बचती चली आयी है।

सयुक्त राज्य अमेरिका मे दो मुख्य पार्टियो के संचालक अनुभवी राजनीतिज्ञो में से अधिकतर इस विचार से सहमत नही हैं कि परस्पर विरोधी पार्टियो का संगठन तर्क के आधार पर किया जाय। यदि कुछ असन्तुष्ट मतदाता, फूटकर कोई तृतीय पार्टी खडी कर ले तो वे अपना द्वार उनके लिए बन्द नही कर देते। वे समझौते का मार्ग पसन्द करते है, जिससे तृतीय पार्टी के जितने भी मतदाता आ सके उतने वापिस आ जायं। वे तृतीय पार्टी के केवल उन नेताओ के लिए दरवाजा बन्द करते है जिन्हे वे झगडालू समझते है और जिनसे भय होता है कि वे अन्य मतदाताओ को भी बहका ले जायंगे। विभिन्न विरोधी तत्वो को एकत्र करने की यह प्रवृत्ति ही द्विदलीय पद्धति का मुख्य बल है।

मुख्य संगठनो को चुनौती देने का यत्न करनेवाली इन तृतीय पार्टियो के अतिरिक्त, अनेक गौण पार्टियाँ भी अनिश्चित संख्या मे होती हैं। इनमे से कुछ अपने प्रदेश मे प्रभावशाली होती है। उदाहरणार्थ, इस शताब्दी के आरम्भिक वर्षो मे फार्मर-लेबर (किसान-मजदूर) और प्रोग्रेसिव (प्रगतिशाली) पार्टियाँ मध्य-पश्चिम मे राज्य विधान मण्डलो के चुनाव जीत गयी थी।

अन्य गौण पार्टियो का क्षेत्र तो राष्ट्र-व्यापी होता है, परन्तु उन्हे कुछ लाख से अधिक मत कभी नही मिलते। उनके सदस्यो को राज्यो तक के चुनाव जीतने की आशा नही होती—यद्यपि मिलवौकी और ब्रिजपोर्ट नगरो पर सोशलिस्टो का नियन्त्रण बहुत समय तक रह चुका है। छोटी पार्टियो को आशा रहती है कि यदि हमारा नाम निर्वाचन मे सामने आ गया और हमने अपने उत्साही अनुयायियो को, थोडी संख्या में भी क्यो न हो, संगठित कर लिया तो हम बडी पार्टियो को अपने संगठित मतो का लालच देकर अपना कार्यक्रम अपनाने के लिए प्रेरित कर सकेंगे। छोटी पार्टियो से एक लाभ यह होता है कि उनके सहारे छोटे संगठन भी अपने ऐसे विचारो का विज्ञापन कर सकते हैं जो अभी अपनाये जाने योग्य नही हुए। परन्तु उनके नेताओ को शासन मे सम्मिलित करने का वचन कोई नही देता। उदाहरणार्थ,

बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे जो समाजवादी विचार प्रकट किए गये थे उनमे से अधिकतर आज विभिन्न नामो से, डिमोक्रेट और रिपब्लिकन, दोनो पार्टियो के आन्दोलनो का अंग बन चुके हैं। एक बार मद्य-निषेध के पक्षपातियो ने अपने विचार को संविधान के एक संशोधन के रूप मे स्वीकृत करवा लिया था। कम्यूनिस्ट पार्टी बहुत कम मत प्राप्त कर पाती है, परन्तु यह अपने मत किसी प्रतिक्रिया-वादी उम्मीदवार को देकर या किसी उदार उम्मीदवार का अनचाहा समर्थन करके, निर्वाचन को शायद कुछ न कुछ प्रभावित कर लेती है।

अन्त मे उन छोटी-छोटी टुकडियो की चर्चा कर देना भी आवश्यक है जो कि चुनाव मे चुस्ती से भाग लेती और उस पर कुछ प्रभाव डाल लेती है, क्योकि उसके बिना संयुक्त राज्य अमेरिका की दलगत राजनीतिक पद्धति का विवरण पूरा नही होगा। इन टुकडियो का नाम निर्वाचन मे सामने नही आता। ये अपने उम्मीदवार को अप्रत्यक्ष रूप से खडा करती हैं, अर्थात् उसे किसी बडी पार्टी से नामज़द करवा देती है।

उदाहरणार्थ, अमेरिका मे 'लेबर' या श्रमिक पार्टी नही है। इसका कारण यह है कि बहुत समय हुआ जब 'अमेरिकन फेडरेशन ऑव् लेबर' अर्थात् अमेरिकी श्रमिक-संघ ने निश्चय कर दिया था कि श्रमिको के मत भी दोनो बडी पार्टिया आपस मे बाट सकेंगी। श्रमिक नेता उन्ही उम्मीदवारो का समर्थन करने लगते है जिन्हे वे अपना मित्र समझते हैं। किसी स्थान पर वे किसी रिपब्लिकन का समर्थन करते हैं तो किसी अन्य स्थान पर किसी डिमोक्रेट का। उनका विचार है कि श्रमिक मतो को एक असफल पार्टी के रूप मे अलग बाध कर डाल देने की अपेक्षा जीतती हुई पार्टी को प्रभावित करके अधिक लाभ उठाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट नही है कि संयुक्त राज्य अमेरिका मे कोई पृथक् "श्रमिक मतदाता" है। अमेरिकी श्रमिक अपना मत अपनी यूनियन के नेताओ की सलाह से नही देते। इससे प्रकट होता है कि जिसे "वर्ग-चेतना" कहा जाता है वह अमेरिका मे उतनी प्रबल नही है जितनी युरोप के कई देशो मे।

राजनीति मे भाग लेने वाले संगठन और भी हैं। ये प्राय: व्यवसाय के आधार पर संगठित हैं। उनके नाम है—"युनाइटेड स्टेट्स चेम्बर ऑव कामर्स ऐण नेशनल

असोसिएशन ऑव मेन्यूफेक्चरर्स" अर्थात् अमेरिका के व्यापारियो की सभा तथा निर्माताओ का राष्ट्रीय संघ, "द फार्म ब्यूरो फेडरेशन" या किसान-संस्था-संघ, "द ग्रेन्ज" (ग्रामीण जमीदारो की पंचायत), और "द फार्मर्स् यूनियन और एग्रिकलचर" (कृषि की उन्नति चाहनेवाली किसान-सभा), "द लीग ऑव विमेन वोटर्स ऐण्ड जनरल फेडरेशन ऑव् विमेन्स क्लब्स" (स्त्री मतदाताओ की लीग तथा स्त्री क्लबो का संघ); "अमेरिकन लीजन ऐण्ड वेटरन्स ऑव फारिन वार्स" (अमेरिकी सेना और विदेशी युद्धो से निवृत्त सैनिक), और "द डॉटर्स ऑव् द अमेरिकन रेवोल्यूशन" (अमेरिकी क्रान्ति की पुत्रिया) ।

कर लगाने के प्रयोजन से कानून इन संगठनो को दो भागो मे बाट देता है। एक तो वे जो अपने स्वार्थो की सिद्धि के लिए कानून-निर्माताओ पर प्रभाव डालने का यत्न करते है और दूसरे वे जो देश के लाभ के लिए सार्वजनिक समस्याओ का अध्ययन करते हैं। जिस आय पर सघीय आय-कर लग सकता है उसमे से राजनीतिक पार्टियो अथवा कानून-निर्माताओ को प्रभावित करने के लिए बनाये गये सगठन को दिया हुआ चन्दा घटाया नही जाता ।

इस प्रकार प्रमुख राजनीतिक पार्टियो को अनेक प्रकार के प्रभावो और दबावो के उलझे हुए जाल मे काम करना पडता है। वे न केवल प्रत्येक मतदाता की सम्भावित आवश्यकताए समझ कर उसे सन्तुष्ट रखने का यत्न करती हैं, उन्हे उन 'दुष्ट स्वार्थो" की पूर्ति भी करनी पडती है जो कि 'धुआ भरे कमरे' मे बैठे व्यक्तियो की अदृश्य नकेल खीचते रहते हैं। दोनो पार्टिया नाना प्रकार की ऐसी छोटी पार्टियो और निजी संगठनो से घिरी रहती हैं जो कि न जाने किस-किस स्वार्थ की सिद्धि करना चाहते हैं और जिन मे से प्रत्येक यह दावा करता है कि उसके पास हजारो मत बंधे-बंधाये तैयार है और जो कोई खरा वचन देगा वे उसकी भेंट कर दिये जायगे। पार्टियो के नेताओ का काम न केवल यह देखना है कि किस-किस को मिलाकर क्या वचन देना ठीक होगा, अपितु अन्त मे क्या काम करना ठीक रहेगा, जिससे मतदान मे उनकी ही पार्टी जीते ।

अध्याय ३

राजनीतिक दलों का विकास और उनकी कार्य प्रणाली

अमेरिकी राष्ट्रपति के निर्वाचन मे जब राजनीतिक दलो ने पहले पहल भाग लिया तब उनके सगठन राष्ट्रव्यापी नही थे। तब जो राष्ट्रीय नेता राष्ट्रपति बनना चाहते थे उनकी परस्पर प्रतिस्पर्धा और राष्ट्रीय नीतियो के विषय मे लोगो के मतभेदो के अतिरिक्त, सगठित पार्टियो जैसी कोई वस्तु नही थी। कांग्रेस ही परस्पर विरोधी भागो मे विभक्त हो जाती थी और प्रत्येक भाग अपना कॉकस (सम्मेलन) करके अपना उम्मीदवार चुन लेता था। परन्तु शीघ्र ही इन 'कॉकसो' की लोक-प्रियता नष्ट हो गयी। पार्टियो के जो नेता काग्रेस मे नहीं थे वे भी चाहते थे कि चुनाव और नामजदगी मे हमारी बात रक्खी जाय। वे एक ओर तो मतदाताओ को नाराज करना और खोना नही चाहते थे और दूसरी ओर उम्मीदवारो की नामजदगी अपने हाथो मे रखना चाहते थे। उन्होने अपनी इस इच्छा-पूर्ति के लिए जो प्रयत्न किये उनसे ही पार्टियो का विकास हो गया।

सन् १८२४ मे डिमोक्रेटिक 'कॉकस' ने ऐण्डरू जैक्सन को नामजद नही किया। इससे मतदाताओ को निराशा हुई। चार वर्ष पश्चात् यह भूल सुधार दी गयी, जैक्सन चुन लिया गया, परन्तु नामजदगी की 'कॉकस' पद्धति की लोकप्रियता समाप्त हो गई। तब विरोधी पार्टिया 'कन्वेन्शनो' अर्थात् इसी प्रयोजन से बुलाये

गये विशेष सभा-सम्मेलनो मे एकत्र होने लगी। स्थानीय 'कन्वेन्शनो' में प्रतिनिधियो का चुनाव राज्य 'कन्वेन्शनो' के लिए, और राज्य 'कन्वेन्शनो' मे राष्टीय 'कन्वेन्शन' के लिए होता था। ये 'कन्वेन्शन' क्रमशः स्थानीय, राज्यीय और राष्ट्रीय पदो के उम्मीदवारो का चुनाव भी करते थे। यह पद्धति एक प्रकार से लोकतन्त्रात्मक थी क्योकि इसमे पार्टी के कार्यकर्ता-सदस्यो को विविध स्तरो पर एकत्र होने और मत देने का अवसर मिल जाता था। दूसरी ओर जो साधारण मतदाता पार्टी के कार्यकर्ता-सदस्य नही होते थे उन्हे निर्वाचन-दिवस के अतिरिक्त कभी कुछ कहने-सुनने का अवसर नही मिलता था। इसके विरुद्ध भी शिकायत हुई और कालान्तर मे इसका परिणाम बहुत से राज्यो मे 'प्राइमरी' अर्थात् प्राथमिक चुनावो की पद्धति अपनाये जाने के रूप मे प्रकट हुआ।

अब प्राय सब राज्यो मे निर्वाचन-वर्ष के वसन्त मे या ग्रीष्म के आरम्भ मे 'प्रा मिक चुनाव' होते हैं, और उनमे पार्टियां स्थानीय और राज्यीय पदो और कांग्रेस की सदस्यता के उम्मीदवार चुनती हैं। कुछ राज्यो मे राष्ट्रीय 'कनवेन्शन' के प्रतिनिधि भी प्राथमिक चुनाव मे चुने जाते हैं। वे 'कन्वेन्शन' मे कम से कम शुरू के कुछ मतदानो मे राष्ट्रपति के किसी विशेष उम्मीदवार का समर्थन करने के लिए वचन-बद्ध हो सकते हैं। यह भी सम्भव है कि 'प्राथमिक' के मत-पत्र मे एक स्थान ऐसा रक्खा जाय जहा मतदाता राष्ट्रपति पद के लिए अपनी पसन्द प्रकट कर सके।

परन्तु 'प्राथमिक' चुनावो की पद्धति अभी इतनी विकसित नही हुई कि रि ब्लिकन या डिमोक्रेटिक कन्वेन्शनो के एकत्र होने से पहले ही राष्ट्रपति पद के लिए उस पार्टी के उम्मीदवार का निश्चय हो जाय। जो उम्मीदवार प्राथमिक चुनावो मे सफल होने के पश्चात् 'कन्वेन्शन' मे नामजदगी प्राप्त नही कर पाते वे स्वभावतः चाहते हैं कि राष्ट्रपति का उम्मीदवार चुनने के लिए राज्यो के प्राथमिक चुनाव मण्लो की संख्या और अधिकार बढ जाय। इसके विपरीत, जिन पेशेवर रा नीतिज्ञो को 'कन्वेन्शन' चलाने का अभ्यास पड़ चुका है, वे चाहते है कि नि न्त्रण हमारे ही हाथ मे रहे।

जबतक राष्ट्रपति पद के लिए पार्टी का उम्मीदवार नामजद करने का वास्तविक अधिकार राष्ट्रीय 'कन्वेन्शन' के हाथ मे बना रहेगा तबतक जनता की रुचि उसमे एक राजनीतिक उत्सव के रूप से ही रहेगी।

जिन लोगो ने 'कन्वेन्शन' की अव्यवस्थित भीड और हल्ले-गुल्ले को देखा है वे प्राय आश्चर्य करते है कि अमेरिका सरीखा महान् लोकतन्त्रीय राष्ट्र अपने राष्ट्रपति को ऐसे गडबड, भीड और हल्ले-गुल्ले मे चुना जाना सहन भी कैसे कर लेता है। परन्तु ऐसा भ्रम उन्हे ऊपर के दृश्य को ही वास्तविक वस्तु समझ लेने के कारण होता है। 'कन्वेन्शन' मे प्रतिनिधि राष्ट्रपति को चुनने के लिए एकत्र नही होते। वे वहा पार्टी के अन्य साथी सदस्यो से परिचय करने और जनता का उत्साह बढाने के लिए एकत्र होते है। परन्तु अनुभवी राजनीतिक नेता उस दृश्य की ओट मे ऐसे उम्मीदवार की खोज पर अपना ध्यान और शक्ति केन्द्रित किये रहते है जो पार्टी को संगठित रख सके और स्वतन्त्र मतदाताओ को आकर्षित कर सके। नेता लोग प्रतिनिधियो की इच्छा की भी उपेक्षा नही करते। वे छोटी-छोटी बैठको मे उनमे बातचीत करके उनकी इच्छा जानते रहते हैं। ये सभाए टेलिवीजन के पर्दे पर नही दिखाई जाती।

इसी समय प्रतिनिधियो का उत्साह बैण्ड-बाजो, फौजी कवायदो और अन्य प्रदर्शनो के द्वारा बढाया जाता है। और ऋतु की स्वाभाविक गरमी तो वहा होती ही है। जब उम्मीदवार अन्तिम रूप मे चुना जा चुकता है तब 'युद्ध का नाच' अपनी चोटी पर पहुंच जाता है, और वह तबतक चलता ही रहता है जबतक कि पराजित पक्षवाले भी जोशखरोश और हल्ले-गुल्ले मे हारकर खुशियो और खेलो मे शामिल नही हो जाते।

जो लोग इस हा-हू और उछल कूद को टेलिवीजन के पर्दे पर देखते है उनमे से बहुतो को यह हरकत असभ्यतापूर्ण लगती है। नि सन्देह यह वैसी हो है भी। परन्तु मानव जाति के विकास मे युद्ध के नाचो का इतिहास बहुत पुराना और सफलता का इतिहास है। सारे संसार मे असभ्य जातिया कबीलो को इकट्ठा करने

और सुस्त लोगो को उठाने तथा लडाई मे लगाने के लिए अन्त. प्रेरणा से युद्ध के नाचो का प्रयोग करती रही है। जिन अनुभवी राजनीतिज्ञो ने राष्ट्रीय 'कन्वेन्शनो' की नीव डाली थी उनकी सूझ-बूझ की उपेक्षा शायद लापरवाही से नही की जा सकती।

परन्तु टेलिवीजन के प्रयोग के कारण कन्वेन्शन के बहुत से कामो का रूप निश्चय ही बदल जायगा। इससे प्रतिनिधियो के दो-दो मण्डल भेजने की प्रथा मे भी परिवर्तन हो जायगा। इनमे से प्रत्येक मण्डल आधे मतो का अधिकारी होता है। इस प्रथा के कारण मतदान असाधारण मन्द गति से हो पाता है, और शायद उन राजनीतिक नेताओ की दृष्टि से लाभदायक भी रहता है जो कि समय टालना चाह रहे होते हैं। इससे उन प्रतिनिधियो के आत्म विज्ञापन की भूख भी मिट जाती है जो कि सन् १९५२ मे एक क्षुब्ध प्रतिनिधि नेता के कथनानुसार, 'टेलिवीजन के भूखे' होते हैं। परन्तु इससे टेलिवीजन के दर्शक उब जाते है और किसी को उबा देना निश्चय ही राजनीतिक चतुरता नही है। जब प्रतिनिधियो को यह पता लग जायगा कि टेलिवीजन का चित्र दूर-दूर तक दिखलाई पड़ता है और बहुत से बहरे नागरिक होठो को देखकर ही बात को समझ जाते हैं तब शायद कन्वेन्शन मे उनका व्यवहार भी सुधर जायगा।

परन्तु राष्ट्रीय कन्वेन्शन करने की प्रणाली मे चाहे जो परिवर्तन हो जाय, यह सन्दिग्ध ही है कि पार्टियो के नेता राष्ट्रपति की नामजदगी का नाटक उन लोगो के हाथ से निकल जाने देने के लिए कभी तैयार हो जायंगे जो अब कन्वेन्शन मे उसे खेलते हैं।

कन्वेन्शन मे पार्टी अपना 'प्लेटफार्म' या चुनाव-घोषणापत्र भी तैयार करती है। कन्वेन्शन के आरम्भिक दिनो मे एक प्रस्ताव-समिति अपनी बैठकें करती है। वह श्रमिको, व्यापारियो, स्त्रियो के क्लबो, नीग्रो लोगो, किसानो, युद्ध-निवृत्त सैनिको और अन्य उन सब लोगो की बात सुनती है जो उसे यह विश्वास दिला सके कि तनातनीवाले चुनाव-संघर्ष मे बहुत से मतदाता हमारे कहने पर चलेंगे।

यदि समिति यह समझे कि प्रार्थी को 'प्लेटफार्म' मे एक तख्ता या पैराग्राफ दे देने से पर्याप्त मत मिल सकेंगे तो वह वैसा कर देती है, परन्तु शर्त यह रहती है कि उससे "पार्टी के सिद्धान्तो का उल्लंघन न हो" । इसका अर्थ यह है कि जिस किसी बात से पार्टी के अनुयायी बिगड जायं और चुनाव के दिन बहुत से मतदाताओ के घर बैठ रहने का भय हो जाय वह पार्टी के सिद्धान्तो का उल्लंघन करने वाली है ।

उदाहरणार्थ, सन् १९४८ के डिमोक्रेटिक कन्वेन्शन मे 'मानवता के अधिकारो' अथवा अल्पसंख्यको के साथ भी समानता का बरताव करने का कानून बनाने के 'तख्तो' का प्रबल विरोध किया गया था । एक ओर तो वे लोग थे जिनका तर्क था कि मानवता के अधिकारो का तख्ता मजबूत करके अल्पसंख्यक लोगो के लाखो मतो को खीचा जा सकेगा, और दूसरी ओर वे थे जो पार्टी के 'नियमित' लाखो सदस्यो के रूठ जाने का 'भय' प्रकट कर रहे थे । इसी प्रकार की युक्तिया मजदूरो और किसानो से सम्बद्ध नीतियो के विषय मे दी जा सकती हैं, विशेषत. तब, जब कि इस 'तख्ते' मे रुचि रखनेवाले, एक पक्ष को दूसरे से लडा सकें और इस प्रकार नेताओ को तुरन्त सीधा उत्तर देने के लिए विवश कर सकें ।

नि सन्देह, "प्लेटफार्म कमेटी" अपनी बात यथासम्भव ऐसे शब्दो मे प्रकट करती है जो खुश तो सबको और नाराज किसी को भी न करने वाले हो । वह गृह-नीति, सन्तुलित बजट, हलके टैक्सो, और अमेरिकी जीवन-पद्धति पर विशेष बल देती है ।

वस्तुत. पार्टी "रिकार्ड पर चलती है, जिसका अर्थ व्याख्याताओ की भाषा मे यह दावा होता है कि हमारी ही पार्टी अच्छी, खरी, मजबूत और भरोसे के लायक है । वे अपनी पार्टी की प्रशसा करके, विरोधी पार्टी के ऐसे कामो का विशद वर्णन करते हैं जिनके कारण वह मतदाताओ मे लोकप्रिय न रही हो । प्रत्येक पार्टी अपना परम्परागत व्यक्तित्व सुरक्षित रखने का और उसके मुकाबले मे विरोधी पार्टी की दुर्दशा चित्रित करने का यत्न करती है । उदाहरणार्थ, रिपब्लिकन

अपनी पार्टी की तो कुशलता और ईमानदारी का चित्र खीचते हैं और अपने मुकावले मे डिमोक्रेटो को अकुशल और अर्ध-कम्यूनिस्ट बतलाते है। डिमोक्रेट मतदाताओ से कहते है कि हम जनता के मित्र और उन्नति के पक्षपाती हैं; और हमारे मुकावले मे रिपब्लिकन उन अमीरो के मित्र है जिन्हे 'बीसवी शताब्दी मे लातें झाडते और चिल्लाते चीखते हुए भी घसीटना पड रहा है।' दोनो पार्टियो मे अनेक ऐसे प्रमुख सदस्य होते है जिनके व्यवहार से इन दावो का खण्डन हो जाता है, फिर भी मतदाता यही समझते हैं कि पार्टी की परम्परागत विशेषताओ मे कुछ सत्यता है।

बहुत कम मतदाता 'प्लेटफार्म' पढने का कष्ट करते हैं। राजनीतिक व्याख्याता अवश्य उसके उद्धरण देते रहते है। यदि उसमे कोई बात ऐसी हो जिससे बहुत से मतदाताओ के अप्रसन्न हो जाने की सम्भावना हो तो विरोधी पार्टी उसका उद्धरण देती है। परन्तु व्यवहार मे 'प्लेटफार्म' की रचना उम्मीदवार के आन्दोलन भाषणो से ही होती है। वह अपनी पार्टी के 'प्लेटफार्म' का प्रत्यक्ष विरोध तो कभी नही करता, परन्तु उसकी व्याख्या करते हुए वह उन भागो को छोड देता है जिन पर वह जोर देना नही चाहता, और जिन्हे वह महत्वपूर्ण समझता है उनके विषय मे वह अपने स्वतन्त्र वक्तव्य दे डालता है। निर्वाचन हो चुकने पर लोग राष्ट्रपति के भाषणो को पार्टी की प्रतिज्ञाएं मान कर चलते हैं और उससे आशा करते हैं कि वह कांग्रेस को मानकर या दबाकर उससे प्रतिज्ञाए पूरी करवा लेगा।

इसलिए पार्टी का 'प्लेटफार्म' तैयार करने मे पार्टी के कन्वेन्शन की विधि-निर्माण शक्ति का दर्जा दूसरा होता है, प्रथम स्थान राष्ट्रपति के ही कार्यक्रम का होता है। कन्वेन्शन के वास्तविक काम केवल दो हैं—उम्मीदवार का चुनाव और दलीय कार्यक्रम के प्रदर्शनात्मक उत्सवो के द्वारा पार्टी को एक कर देना।

उपराष्ट्रपति का चुनाव साधारणतया राष्ट्रपति पद के लिए नामजद व्यक्ति करता है और थके-थकाये प्रतिनिधि बिना विशेष विवाद के उसे स्वीकार कर लेते

हैं। उपराष्ट्रपति पद का उम्मीदवार प्राय कन्वेन्शन मे पराजित पक्ष को सन्तुष्ट करने की दृष्टि से चुना जाता है। ऐसा इसलिए किया जाता है कि पार्टी के जीते हुए पक्ष को यह भय रहे कि राष्ट्रपति का देहान्त हो जाने पर शासन की सत्ता हाथ से चली जायगी। इस प्रथा के आलोचक बराबर यह माग करते रहते है कि नामजदगी का ढंग ऐसा होना चाहिए कि वही व्यक्ति उपराष्ट्रपति पद के लिए नामजद किया जाय जो कि यदि राष्ट्रपति पद के लिए खडा किया जाता तो अपने बल से चुनाव जीत सकता।

प्रत्येक पार्टी की एक राष्ट्रीय समिति होती है, जो कन्वेन्शनो के मध्यवर्ती काल मे उनका काम करती रहती है, क्योंकि वे तो प्रति चार वर्ष पश्चात् ही होते है। परन्तु समिति अपना अधिकतर कार्य राष्ट्रपति के चुनाव के वर्ष मे ही करती है। राष्ट्रीय कन्वेन्शन के स्थान और समय का निश्चय भी यही समिति करती है; इसके ही कर्मचारी आन्दोलन-साहित्य तैयार करते और स्थान-स्थान पर वक्ताओं को भेजते हैं। राष्ट्रपति और कांग्रेस के चुनाव आन्दोलन के लिए धन-संग्रह भी यही समिति करती है।

समिति का गठन, प्रत्येक राज्य प्रदेश और अमेरिका के आधीन द्वीपो से एक पुरुष और एक स्त्री सदस्य लेकर किया जाता है। उनका चुनाव या तो राज्य के प्रतिनिधि करते हैं या राज्य के प्राथमिक मण्डल करते हैं। समिति के सदस्यो को अधिकतर कार्य अपने-अपने गृह-राज्य मे ही करना पडता है। वहाँ वे सब काम राज्य-समितियो के सहयोग से करते हैं। राष्ट्रीय समिति के प्रधान को राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार चुनता है, क्योंकि समिति को उसका ही आन्दोलन करना होताहै।

प्रधान के अतिरिक्त, समिति के अति महत्वपूर्ण पदाधिकारी सचिव और कोषाध्यक्ष हैं। समिति का प्रधान राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के साथ मिलकर आन्दोलन का कार्यक्रम तैयार करता, सचिव पत्र-व्यवहार आदि दफ्तरी काम सम्भालता, और कोषाध्यक्ष कोष का संग्रह करता है।

उम्मीदवारो और अन्य वक्ताओ के लिए आवश्यक सूचनाएं और जानकारी संग्रह करने के लिए समिति कुछ अनुसन्धान-कर्मचारी भी रखती है। ये सूचनाएं ऐसी होती हैं जैसे कि प्रत्येक जिले की आर्थिक, जातीय, धार्मिक और राजनीतिक विशेषतायें, कांग्रेस के उम्मीदवारो के निर्वाचन मे मतदान का पुराना लेखा, और अन्य जानकारियाँ जिनकी सहायता से वक्ता मतदाताओ को आकृष्ट तो कर सके, परन्तु उन्हे खिजावे नही। समिति कुछ कुशल लेखक भी रखती है, जो कि अन्दोलनो के मध्य मे कांग्रेस के विवादो मे पार्टी का पक्ष पुष्ट करने के लिए, अति-व्यस्त कांग्रेस सदस्यो और सेनेटरो को भाषण तैयार करके देते रहते हैं।

कांग्रेस मे प्रत्येक पार्टी की एक विशेष समिति चुनाव मे काग्रेस-सदस्यो की, और एक दूसरी समिति सेनेटरो की सहायता करने के लिए होती है। इन समितियो के पास अपना कोष भी होता है, और जिन स्थानो पर चुनाव की सफलता मे सन्देह होता है वहा ये धन और वक्ता भेजने का प्रबन्ध करती हैं।

प्रत्येक राज्य मे प्रत्येक पार्टी की एक राज्य-समिति होती है। ये समितियां स्वभावत उन राज्यो मे अधिक चुस्त होती हैं जिनमे चुनाव वस्तुत' अधिक संघर्षमय होता है। इस प्रकार यह संगठन बढता हुआ जिलो, नगरो, कस्बो और अन्त मे उन मुहल्लो तक पहुच जाता है जिनमे चुनाव के केन्द्र बनाए जाते हैं, और उन सबकी पृथक् समितिया होती हैं।

मुहल्लो के काम को "दरवाजे की घण्टी बाजाना" कहते हैं। पार्टियो के कार्य-कर्ता, लोगो को व्यक्तिश. समझाते रहते है कि मताधिकारी बनने के लिए अपना नाम समय रहते रजिस्टर करवा लो। जब उम्मीदवार उनके नगर मे आता है तब वे लोगो को उसकी सभाओ मे जाने और अन्त के चुनाव के दिन मत देने के लिए भी प्रेरित करते रहते है। मुहल्ले से ऊपर के संगठनो का काम मुख्यतया मुहल्ला-कार्य-कर्ताओ के प्रयत्नो का सहारा लगाने का होता है। वे वक्ताओ, पुस्तक, पुस्तिकाओ, साहित्य, रेडियो और टेलिवीजन आदि के लिए धन सग्रह भी करते है जिससे मतदाताओ को प्रभावित किया जा सके।

देश के विस्तार का और जितने मतदाताओ तक पहुंचना पड़ता है उनकी विशाल संख्या का विचार करते हुए, राष्ट्रीय चुनाव लड़ने का व्यय बहुत भारी नहीं होता। समस्त व्यय के अधिकतर अनुमानो के अनुसार प्रति मतदाता पीछे व्यय लगभग २५ सेण्ट का अर्थात् १८-१६ आने का होता है और सारा व्यय २ से ३ करोड़ डालर तक बैठता है। उदाहरणार्थ, सन् १६४४ मे डिमोक्रेटो ने अपना व्यय अधिकृत रूप से ७५ लाख डालर और रिपब्लिकनो ने १ करोड़ ३० लाख डालर बतलाया था। राष्ट्रीय-समितियो मे से प्रत्येक को एक आन्दोलन मे ३० लाख डालर से अधिक व्यय करने की अनुमति नही होती, परन्तु राज्यीय और स्थानीय समितियाँ अपना कोश स्वयं एकत्र करती है। इसके अतिरिक्त, अपने-अपने प्रिय उम्मीदवार को सफल बनाने के लिए सब प्रकार के लोग और संगठन धन तो अपनी गाठ से व्यय करते हैं, अपना समय भी मुफ्त देते हैं। हैच ऐक्ट के अनुसार फेडरल-सिविल-सर्विस के सदस्यो के लिए राजनीतिक आन्दोलन मे भाग लेना निषिद्ध है, परन्तु अभी तक ऐसा कोई उपाय नही निकला जिसके द्वारा चुनाव-आन्दोलन मे भाग लेने वाले प्रत्येक नागरिक को यह हिसाब देने के लिए विवश किया जा सके कि उसने अपना कितना समय और धन इस कार्य मे व्यय किया।

यह शिकायत सदा ही होती रहती है कि दूसरी पार्टी ने बहुत धन व्यय किया। ऐसा कानून बनाने की माग भी बार-बार की जाती है कि जिससे आन्दोलन व्यय इतना सीमित कर दिया जाय कि कम सम्पन्न पार्टी भी उसे सुगमता से उठा सके। परन्तु धन देकर मत खरीदने की प्रथा अब पहले जितनी आम नही रही; और यह विश्वास भी अनेक चुनाव-परिणामो से भ्रान्त सिद्ध हो चुका है कि अधिक सम्पन्न पार्टी अवश्य जीतती है।

सरकार द्वारा पार्टियों को आर्थिक सहायता दी जाने का प्रस्ताव भी कुछ लोग करते हैं परन्तु उसके स्वीकृत होने मे बडी बाधा यह है कि लोग यह मानने में संकोच करते हैं कि राजनीति भी शासन का एक अवश्यक और विशेष अंग है। कांग्रेस यदि प्रत्येक प्रमुख पार्टी को डेढ या दो करोड डालर देना चाहे, जैसा कि बार-बार सुझाया भी जाता है, तो उसे पहले स्वयं जॉर्ज वाशिंगटन के समय से चला आया

यह विश्वास छोडना पडेगा कि पार्टियो मे किसी प्रकार का अनौचित्य अवश्य है। कांग्रेस अपनी समितियो का संगठन और उनके संचालक पदाधिकारियो का चुनाव तो पार्टी के आधार पर करती है, परन्तु विधि-निर्माण के समय पार्टियो का जिक्र तक करने मे उमे घबराहट होती है। पार्टियो को राजनीतिक पद्धति का आवश्यक अंग मानने मे एक और बाधा यह है कि बहुत-से बडे-बड़े चंदा देने वाले उसी ढंग को पसन्द करते है जो अब प्रचलित है। वे पार्टियो को अपनी सहायता के बिना स्वतन्त्रता-पूर्वक चलता देखने की अपेक्षा, उनके कामो के लिए धन एकत्र करना अधिक पसन्द करते है।

एक सुझाव यह है कि जो तीन-एक करोड उत्साही समर्थक अगले नवम्बर मे पार्टी के उम्मीदवार को मत देने वाले हो उनमे एक डेढ करोड से एक-एक डालर एकत्र कर लिया जाय। परन्तु अनुभव बतलाता है कि उचित मात्रा मे धन व्यय करके इस सुझाव पर अमल नही किया जा सकता।

टेलिवीजन के विकास के कारण राष्ट्रीय आन्दोलन के व्यय का प्रश्न और भी विकट हो गया है। लोग न केवल कन्वेन्शनो को टेलिवीजन मे देखना चाहते है, वे आन्दोलन के समय प्रमुख उम्मीदवारो के दर्शन भी पर्दे पर करना चाहते हैं।

ज्यो-ज्यो पर्दे पर उम्मीदवारो के दर्शन करने की इच्छा बढ़ती जायगी त्यो-त्यो आन्दोलन का व्यय भी बढ़ता जायगा और यदि उसका हिसाब ईमानदारी से रखा गया तो यह असम्भव नही कि वह प्रति व्यक्ति चालीस या पचास सेण्ट तक पहुच जाय।

यदि सगठन सुव्यवस्थित हो और अगले निर्वाचन तक भली प्रकार तथा निर्विघ्न चलता रहे तो उसे आमतौर पर "मशीन" कहा जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे राजनीतिक "मशीनो" के विकास के लिए परिस्थितिया अनुकूल है, क्योंकि प्रति दो वर्ष पीछे तो कांग्रेस के चुनाव आ जाते हैं, और राज्यों के तथा प्राथमिक मण्डलो के चुनाव बीच मे भी होते रहते हैं। केवल बड़े राष्ट्रीय कन्वेन्शन चार वर्ष पश्चात् होते है। बीच मे उनकी हलचल समाप्त-सी हो जाती

है। पार्टियो की राष्ट्रीय समितिया राष्ट्रपति के चुनावो के मध्य मे अपना काम चुपचाप करती रहती हैं, और राज्योय तथा स्थानीय 'मशीनें' तो सदा ही काम मे लगी रहती है।

'मशीन' का निर्माण ऐसे बहुत-से पेशेवर राजनीतिक कार्यकर्त्ताओ से मिलकर होता है जिनकी आजीविका ही राजनीति से चलती है। उनकी तुलना मे, जो सुधारक उसे केवल फुरसत के समय राजनीतिक आन्दोलन करके नष्ट कर देना चाहते हैं वे निरे शौकिया राजनीतिज्ञ होते हैं, और उनके 'मशीन' से पराजित हो जाने की ही सम्भावना अधिक रहती है। 'मशीन' के राजनीतिज्ञ ऐसे-ऐसे कठिन काम प्राय प्रतिदिन करते रहते है जैसे कि समाज से सम्पर्क रखना, अपने शत्रुओ की गति-विधि का पता लगाते रहना, जिन लोगो के कानून-सम्मत या कानून-विरुद्ध स्वार्थो पर क़ानून का प्रभाव पड़ता हो उनसे मेल रखना, और विधि-निर्माताओ तथा शासको को यह बतलाते रहना कि कौन-कौन क्या-क्या हैं, इत्यादि। 'मशीन' के कार्यकर्त्ता पुरस्कृत भी नाना प्रकार से होते रहते हैं। कुछ के नातेदारो को सरकारी नौकरियाँ मिल जाती है, और कुछ स्वयं ही सरकार के राजनीतिक चक्र मे नाके के स्थानो पर तैनात हो जाते हैं। सम्भव है कि उन्हे उन व्यापारिक फर्मो से भी कुछ मिलता हो जो कोई लाइसेंन्स या सरकारी ठेका लेना चाहती है या केवल इतना चाहती हैं कि पुलिस उनकी ओर से आँख मीचे रहे।

सर्वाधिक-सुसंचालित मशीनो का संचालन एक 'मालिक' करता है। वह प्रायः कोई पद स्वीकार नही करता। जिन डोरियो से पदाधिकारियो को काबू मे रखा जाता है वह उन्ही मे इतना उलझा रहता है कि रोजाना के दफ्तरी काम के लिए वह समय नही निकाल सकता। वह अपने गिरोह को कठोर अनुशासन मे रखता है और बदले मे उसका ऐसा मार्ग-प्रदर्शन करता और ऐसा मेल मिलाता है कि उसे अपनी सफलता का निश्चय हो जाता है।

जब किसी को कोई राजनीतिक काम निकालना हो तब "मालिक" से "मिलना चाहिए"। वह सब का मित्र होता है, विशेषतः गरीबो का, विदेशो से आये हुए वासाथियो का, और छोटे-मोटे अपराधियो का। 'मालिक' स्वयं भी प्राय. किसी

विदेश से आये हुए पिता का ही पुत्र होता, और गरीबो की किसी बस्ती मे से उठकर अपनी संगठन-कुशलता और गरीबो के विषय मे अपनी जानकारी के बल पर राजनीतिक 'मशीन' मे ऊपर तक पहुचा हुआ होता है।

प्रसिद्ध राजनीति-विशेषज्ञ जॉर्ज-प्लु'किट को बहुधा यह कहते उद्धृत किया जाता है "यदि मेरे जिले मे कोई परिवार जरूरतमन्द हो तो मुझे उसका पता धर्मार्थ संस्थाओ से भी पहले चल जाता है, और मैं और मेरे आदमी सबसे पहले उनके पास पहुंच जाते है। मेरे पास ऐसे मामलो की देख-भाल करने के लिए एक विशेष सेना है। इसका फल यह है कि गरीब लोग जॉर्ज डब्लू० प्लु'किट को अपना पिता समझते और कोई भी कठिनाई होने पर उसके पास चले आते हैं और चुनाव के दिन उसे भूलते नही।"

राजनीतिक "मालिक" का काम ही दुखियो को सहारा देना है, वे चाहे गरीब हो चाहे अमीर। एक हाथ से तो वह किसी विदेश से आयी हुई ऐसी परेशान माता को सहायता देता है जिसका पुत्र कष्ट मे हो, अथवा उस वृद्ध दम्पति को इन्धन या भोजन भेजता है जिसे सम्मानित धर्मार्थ संस्थाओ ने 'अपात्र' ठहरा दिया हो, अथवा पार्टी के किसी कार्यकर्ता के पुत्र की नौकरी पुलीस मे लगवा देता है। इन कामो को उदारतापूर्वक करते हुए वह सदाचार या धर्म के बारीक विचारो में नही पडता। उसकी इन सेवाओ के कारण उसके ग्राहक हृदय से उसके प्रशंसक बन जाते हैं और उनके सब नातेदार अपने मत उसी उम्मीदवार को देते हैं जिसे वह अपना कृपा-भाजन बतलाता है।

दूसरे हाथ से वह अमीरो और उनके मित्रो की कठिनाइया हल करता है—ठेकेदारो की, माल ढोने वाली कम्पनियो की, भूमिपतियो की, शराब के व्यापारियो की, या शायद उन कम प्रतिष्ठित नागरिको की जिनका काम चल सकता है बशर्ते कि कानून सख्ती से लागू न किया जाय। वह टाउन हॉल या राज्य के बड़े दफ्तर मे उन लोगो से "कह" देता है जो "मालिक" के मित्रो या अनुयायियो के मतो के बल पर चुने गये होते हैं। वह अपने धनी ग्राहको से उनका कृतज्ञता-पूर्ण दान लेकर उसे अपने कार्यकर्ताओ और गरीबो मे बाट देता है।

दुस्साहसी डाकुओ के ढंग की पुरानी राजनीतिक 'मशीन' अब परिस्थितिया बदल जाने के कारण खोखली पड गयी है। अब सामाजिक सुरक्षा वढ गई, विदेशो से आने वाले वासार्थियो के लिये नये कानून वन गये और नौकरियो मे योग्यता का आदर अधिक होने लगा है। वडे नगरो मे अब ऐसे गरीव और परेशान विदेशी वासार्थी पहले से कम रह गये हैं जिनकी सेवा राजनीतिक पार्टियो के कार्यकर्ता, अपरिचित देश मे एकमात्र दयालु मित्र के रूप मे कर सके। अब 'मेहरवानी' की ऐसी नौकरिया भी पहले से कम रह गयी हैं जिनका उपयोग पार्टी के कार्यकर्ताओ को इनाम देने के लिए किया जा सके। वहुत-से शहरो की पुलिस अब भी भ्रष्टाचारी है, और उससे 'मशीन' को सहारा मिलता है। परन्तु सारे देश को मिलाकर देखने पर सन् १९५२ के चुनावो मे प्रकट हो गया था कि जिन वड़े नगरो मे मन्दी के समय डिमोक्रेटिक 'मशीन' का वोलवाला था उनमे उसका वल प्राय. समाप्त हो चुका था।

दोनो वडी पार्टियो ने राजनीति मे भाग लेने के 'शौकीन' लोगो की 'मशीन' संगठित करने के प्रयत्न भी किये हैं। पार्टिया अपने ऐसे उत्साही समर्थको का स्वागत करती हैं जो केवल शौक के लिए, या सभा और कन्वेन्शन मे जाने का या कभी नामजदगी मिल जाने का अवसर पाने के लिए, काम करें। सन् १९५२ मे आइजनहोवर और स्टीवन्सन, दोनो के व्यक्तित्व से वहुत-से उत्साही कार्यकर्ता आकर्षित हो गये थे। उनमे वहुतेरे युवक भी थे। सम्भव है इन 'शौकीन लोगो के संगठन, भविष्य मे मत प्राप्त करने के लिए जनता तक पहुचने मे और भी अधिक उपयोगी सिद्ध हो। यदि ऐसा हुआ तो राजनीतिक शक्ति के स्रोतो मे यह एक नया परिवर्तन होगा। भूतकाल मे शक्ति का स्रोत वे असहाय निर्धन थे जिन्हे दया के मूल्य से खरीदा जा सकता था, और भ्रष्टाचारी 'मशीन' के व्यवहारकुशल कार्यकर्त्ता चुनाव-केन्द्रो मे उनकी भीड लगा दिया करते थे। शक्ति का यह पुराना स्रोत अब सूखता जा रहा है, क्योंकि असहाय निर्धनो की संख्या घटती जा रही है। सन् १९५२ मे शक्ति के स्रोत राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार व्यक्तियो मे केन्द्रित हो गये प्रतीत होते थे। दोनो व्यक्तियो, को उम्मीदवार, 'मशीनो' को प्रसन्न करने के लिए नही, अपितु स्वतन्त्र मतदाताओ और मध्य-वित्त वर्ग के 'शौकीन' कार्यकर्ताओ को आकृष्ट करने के लिए वनाया गया

था। ये कार्यकर्त्ता कृतज्ञता या इनाम पाने की आशा से इतना प्रेरित नही थे, जितना कि ये अपने प्रिय उम्मीदवारो के प्रति हार्दिक प्रशंसा के भावो से प्रभावित थे। यदि यह परिवर्तन स्थायी हो गया तो सम्भव है कि इसका प्रभाव उन वहुत-से व्यावहारिक नियमो पर भी हो जाय जो कि राजनीति के क्षेत्र मे परम्परा से चले आ रहे है।

चुनाव के दिन मतदान करवाने मे राजनीतिक पार्टिया महत्वपूर्ण भाग लेती है। सयुक्त राज्य अमेरिका मे कोई १ लाख ३० हजार क्षेत्र अर्थात् चुनाव-केन्द्र है। इनमे से प्रत्येक मे ३०० से १००० तक मतदाता अपना मतपत्र डालते हैं। चुनाव का स्थान प्राय' किसी स्कूल या खाली गोदाम, या आग वुझाने के इंजन-घर, या पुलीसथाने मे होता है। जवसे स्त्रियो को मताधिकार मिला है तव से चुनाव के स्थान, सन् १९२० से पहले की अपेक्षा अधिकाधिक स्वच्छ रहने लगे हैं।

चुनाव-अधिकारियो का चुनाव तो दोनो मुख्य पार्टिया करती हैं, परन्तु उनको पारिश्रमिक राज्यो के कानूनो के अनुसार सरकारी कोप से दिया जाता है। वे मतदाताओ के नामो को जांचते हैं, यह देखते है कि प्रत्येक मतदाता को एक ही मतपत्र मिले, मतपत्र-पेटी या मत देने के यन्त्र पर दृष्टि रखते है कि किसी प्रकार का धोखा न होने पावे, और अन्त मे शाम को देर तक वैठ कर मतो को गिनते और परिणाम की सूचना देते हैं। दोनो पार्टिया चुनाव के प्राय' प्रत्येक स्थान पर अपने निरीक्षक नियुक्त कर देती हैं कि वे किसी भी प्रकार की अनियमितता को तुरन्त वतला दें। इन निरीक्षको को पारिश्रमिक पार्टी ही देती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे मतपत्र की गोपनीयता का सिद्धान्त भली-भाँति स्थिर हो चुका है। हो सकता है कि कही-कही राजनीतिक 'मशीन' यह जाचने का प्रवन्ध कर दे कि मतदाता मत किस प्रकार डाल रहे हैं, परन्तु इस प्रवन्ध पर विरोधी पार्टी के निरीक्षको द्वारा प्राय. आपत्ति की जाती है।

मतदान की अमेरिकी पद्धति की एक भारी त्रुटि "लम्बा मतपत्र" है। मतपत्र पर राज्य, जिले और नगर के पचास से सौ तक पदो का अंकित होना कोई असाधारण वात नही है। और हैरान मतदाता से उस पर ही निशान वनाने की आशा

रक्खी जाती है। एक बार एक मतपत्र बारह फुट लम्बा था और उस पर लगभग पाच सौ नाम थे। मतदाताओ को राज्य के गवर्नर के अतिरिक्त, कोई आधा दर्जन अन्य अधिकारियो, काउण्टी कमिश्नरो, जजो, कोपाध्यक्ष, जिला-अटर्नी और अन्य कई पदाधिकारियो के लिए मत देने को कहा जाता है। नगरो मे उन्हे मेयर, ऐल्डरमैनो, स्कूल बोर्ड के सदस्यो, नगर की कचहरी के जजो, असेसरो, टैक्स कलेक्टरो और अन्य दर्जनो पदो का चुनाव करना पडता है।

केवल किसी पेशेवर राजनीतिज्ञ के लिए यह सम्भव हो सकता है कि वह इतने पदो मे कुछेक से अधिक के नाम जानता हो, और उसके भी उन्हे जानने का कारण यह है कि उन्हे नामजद करने मे उसका हाथ होता है। मतदाता केवल राष्ट्रपति, गवर्नर (राज्यपाल), मेयर (नगर प्रमुख) और कुछेक अन्य पदो के लिए मत देते हैं, और शेष को वे या तो छोड देते हैं या आंख मीच कर मत दे देते हैं।

पुराने ढंग के राजनीतिज्ञ लम्बा मतपत्र इसलिए पसन्द करते है कि इससे उन्हे जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व से बचे रहने का अवसर मिल जाता है। जिन व्यक्तियो को वे किसी कारण पुरस्कृत करना चाहते हैं उन्हे वे ऐसे गौण पदो के लिए नामजद कर देते हैं जिन्हे जनता याद नही रख सकती या जिनकी उपयोगिता वह समझ नही सकती। फल यह होता है कि इन पदो का चुनाव जनता आंख मीच कर देती है। जनता द्वारा निर्वाचित हो जाने के पश्चात्, राजनीतिक नेताओ के ये मित्र उक्त गवर्नर या मेयर तक से स्वतन्त्र हो जाते हैं जो जनता द्वारा आंख खोलकर चुने होते हैं।

इस पद्धति के कारण राज्यीय या स्थानीय निर्वाचन, संघीय की अपेक्षा कम लोकतन्त्रीय होते हैं। राष्ट्र की दृष्टि से देखा जाय तो जनता केवल इन पदो के लिए मत देती है—राष्ट्रपति, कांग्रेस-सदस्य, और सेनेटर। ये सब व्यक्ति इतने महत्वपूर्ण हैं कि ये जनता की आंखो के सामने रहते हैं और वह उन्हे उनके कामो के लिए उत्तरदायी ठहरा सकती है।

बडे मतपत्र की त्रुटिया दूर करने के लिए मतपत्र को छोटा करने का आन्दोलन बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे आरम्भ हुआ था। "शार्ट-बैलट आर्गेनाइजेशन" अर्थात्

लघु मतपत्र संगठन का प्रथम अध्यक्ष उडरो विलसन था। उसका अभिप्राय अधिकतर निर्वाचित पदो को नियुक्त पदो मे बदल देने का था, जिससे कि राज्यो मे भी निम्न कर्मचारियो की नियुक्ति, संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के समान गवर्नर या मेयर कर दे और स्वयं प्रशासन का उत्तरदायी प्रमुख बना रहे। परन्तु राजनीतिज्ञो को अब भी लम्बा मतपत्र ही अच्छा लगता है। राज्यो के शासन मे जनता की रुचि, मन्द और अस्थिर होती है। इसलिए वहा इस दशा मे बहुत कम उन्नति हो पायी है। परन्तु नगरो मे अच्छी उन्नति हो गयी है। वहा सन् १९१० के पश्चात् अधिकाधिक नियुक्तियो पर मेयर का नियन्त्रण रहने लगा है। और कई नगरो मे स्थानीय शासन का रूप कमीशन का या सिटी-मैनेजर का (अध्याय ६ देखिये) हो जाने के कारण मतदाताओ को छोटे मतपत्र का लाभ मिलने लगा है।

सम्भव है कि लम्बे मतपत्र के कारण मतदाताओ को विशेषत: स्वतन्त्र मतदाताओ की संख्या घटाने मे कुछ सहायता मिली हो। जो मतदाता देख भाल कर चुनाव करना चाहता है वह मतपत्र पर दर्जनो अज्ञात नाम देख कर खीझ जाता है। परन्तु जिस मतदाता की पार्टी निश्चित हो उसे लम्बा मतपत्र अधिक स्वाभाविक लगता है।

समस्त मतदाताओ मे से कोई तीन चौथाई के विषय मे ख्याल है कि वे वंश परम्परा से किसी एक ही पार्टी के सदस्य चले आ रहे हैं और वे विरोधी पार्टी के किसी आदमी को मत देकर अपने हाथ मलिन करने के विचार मात्र तक से घृणा करते है। इसलिए चुनावो का फैसला, द्विदलीय राज्यो मे तो शेष २५ प्रतिशत मतदताओ द्वारा होता है और एकदलीय राज्यो मे उन छोटे-छोटे दलो द्वारा, जो कि पार्टी की सम्मानित परिधि के भीतर रहकर भी नामजदगियो पर झगडा करते रहते है। स्वतन्त्र मतदाताओ के इस भाग का महत्व सर्वाधिक है। इनकी संख्या बढ रही दीखती है, और इनके कारण ही राष्ट्रीय चुनावो को वह अनिश्चितता प्राप्त होती है जो कि लोकतन्त्रीय पद्धति का आधार समझी जाती है।

राष्ट्रीय संकट के समय राजनीतिक पार्टिया अपनी निर्वाचन शक्ति को अपने नेता अर्थात् राष्ट्रपति मे या उस पद के उम्मीदवार मे केन्द्रित कर देती है। उसे

ही वंश परम्परागत मतदाताओ को चुनाव के दिन उनकी आराम कुरसियो पर से उठाकर मत देने के लिए बाहर लाना होता है। उसे ही, अपने प्रतिस्पर्धी अर्थात् विरोधी पार्टी के उम्मीदवार के मुकाबले मे स्वतन्त्र मतदाताओ के मत जीतने पड़ते है।

निर्वाचन और पद-ग्रहण के पश्चात् विजयी राष्ट्रपति से आशा की जाती है कि वह कांग्रेस मे अपनी पार्टी का नेतृत्व करेगा, जिससे कि वह जो कानून बनवाना चाहे सो बनवा सके। संकट के समय राष्ट्रपति चाहता है कि वह इतिहास मे अपना नाम कर जाय। आन्दोलन की झोक मे की हुई अदूरदर्शता पूर्ण प्रतिज्ञाओ और इतिहास के निर्माताओ के उत्कृष्ट कार्यों से तुलना का प्रसंग आने पर वह स्वभावत भूत की अपेक्षा भविष्य पर दृष्टि रखकर चलना पसन्द करता है। इस प्रयत्न मे उसे कांग्रेस के नेताओ, अपने से बहुधा ईर्ष्या करने वाले अपनी पार्टी के नेताओ और उन विरोधी नेताओ से भी भुगतना पड़ता है जो कि अब शायद गत चुनाव मे पराजित, राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार अपने नेता के प्रभाव और नेतृत्व मे रहना या न रहना चाहते हो।

सकट के समय सब पार्टियो का नेता बन जाने का अवसर यही होता है, और युवक अमेरिकनो को जीवन मे एकमात्र समय यही दीखता है। बूढे अमेरिकनो का एक भिन्न प्रकार के समय की, सन् १९२० सरीखे की, याद है, जब कि प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् लोग थके हुए थे और किसी के चलाये कही भी जाना नही चाहते थे।

प्राय देखा गया है कि जब अमेरिकी जनता का आपत्ति से सामना नही होता तब पार्टियां उम्मीदवारो के रूप मे मतदाताओ के सामने ऐसे पुतले खड़े कर देती हैं जिन मे नेतृत्व का गुण प्राय एक भी नही होता। परन्तु जब आंधी का मौसम आता है तब वे न जाने किस रहस्यमय विधि से लिंकन और विलसन सरीखे पुरुष खोज निकालती हैं।

कुछ विद्यार्थियो का विचार है कि इस विधि मे ऊपर-ऊपर से जो रहस्यमयता दीख पड़ती है, वह वास्तविक नही है। 'ह्वाइट हाउस' (राष्ट्रपति का कार्यालय

और निवास-भवन) सूचनाओ के संसार व्यापी जाल का केन्द्र है। वहा राष्ट्रपति को, देशी और विदेशी, गुप्त और प्रकट, सब जानकारिया, वह संक्षिप्त या विस्तृत जिस किसी भी रूप मे चाहे, मिल सकती हैं। अनेक राष्ट्रपति ऐसे हो चुके है जो कि पहले साधारण मनुष्य जान पडते थे, परन्तु जब उन पर संसार की जानकारियो की तीव्र धारा छोडी गयी तब वे रातो-रात कुशल राजनीतिज्ञ बन गये। एक कल्पना यह भी है कि जब कोई गम्भीर संकट सामने नही होता तब राष्ट्रपति आलसी हो जाता है और उसमे महत्ता के कोई चिह्न दिखलाई नही पडते। परन्तु आन्धी के समय वही मनुष्य जाग कर अपने आसपास उपलब्ध साधनो से ऐसे बडे-बडे काम कर गुजरता है जिन की उसके मित्रो तक ने कभी कल्पना भी नही की होती।

सम्भव है कि आज की उत्तेजक घटनाओ के प्रभाव से मुख्य पार्टियो का संगठन और काम-काज के ढंग, परिवर्तन की प्रक्रिया मे से गुजर रहे हो। सन् १९३० से निरन्तर संकट की जो स्थिति चल रही है और जिसके अभी कई वर्ष तक चलते रहने की सम्भावना है उसके कारण 'ह्वाइट हाउस' और कांग्रेस, दोनो मे लोकप्रिय नेतृत्व और राजनीतिज्ञता के असाधारण गुणो की अपेक्षा होने लगी है। रेडियो और टेलिवीजन के कारण अब ऐसे अवसर बहुत कम रह गए हैं कि 'अन्धकारमय' कमरो मे गुप्त रूप से किये हुए रहस्यमय कामो से भी किसी को यश की प्राप्ति हो जाय। रहन-सहन का दर्जा ऊंचा हो जाने के कारण अब वह 'भीड' छंट गयी है जो कभी स्थानीय राजनीतिक "मालिको" की कृतज्ञ रहा करती थी, और जो पीछे से राष्ट्रपति रूजवेल्ट को अनुगामी बन गयी थी, क्योकि वह आवश्यकता के समय उसका मित्र सिद्ध हुआ था। आज शायद वही लोग अच्छे सुन्दर मकानो मे रहते हैं और अपना मत देने की माग की जाने पर सर्वथा भिन्न प्रकार का मूल्य चाहते हैं। चुनावो मे धन शक्ति अब भी बहुत है और दोनो पार्टियो पर चंदा देने वालो का प्रभाव प्रत्यक्ष है। परन्तु मतदाता भ्रष्टाचार को बुरा मानने लगे प्रतीत होते हैं, शायद भूत-काल की अपेक्षा कही अधिक।

अब पार्टिया अपने अनुयायियो को निम्नतम स्तरो पर संगठित करने के लिए नये से नये उपाय सोचने लगी हैं। राजनीति-विज्ञान वेत्ता पार्टियो के नेताओ को

अधिक अच्छे उपायो से पार्टियां संगठित करने के लिए प्रेरित करने लगे है, जिससे वे उनके "प्लेटफार्मो" की तैयारी वाद-विवाद आदि की लोकतन्त्रीय विधियो से कर सके। वे कहते हैं कि 'कन्वेन्शनो' को लोकतन्त्रीय पद्धति से करने पर पार्टी के सदस्य उनमे एकत्र होने लगेंगे और काग्रेस मे तथा राज्यीय विधान मण्डलो मे भी उनके प्रतिनिधि अपना मत अधिकाधिक पार्टी के ही पक्ष मे देने लगेंगे। लक्षणो से प्रतीत होता है कि पार्टियो के कुछ नेता नये उपायो पर विचार करने लगे है और सम्भव है कि कई दृष्टियो से पुरानी परम्परागत विधियो मे परिवर्तन हो जाय।

अध्याय ४

शासन

संविधान मे लिखा है कि "एक्जेक्यूटिव (कार्यपालिका) के अधिकार राष्ट्रपति मे निहित होगे।" ये 'कार्यपालिका के अधिकार' क्या हैं, इस प्रश्न पर कांग्रेस और राष्ट्रपति मे सदा किसी न किसी प्रकार का संघर्ष चलता रहता है। राष्ट्रपति के अधिकारो की अनिश्चितता तथा उनके एक ही व्यक्ति के हाथ मे रहने के कारण, यह सम्भावना रहती है कि कही उसे किसी ऐसी असाधारण परिस्थिति मे अपना पद और अधिकार ग्रहण न करना पडे जिसके लिए कोई नियम निर्धारित नही किये गये।

निश्चय ही, संविधान ने राष्ट्रपति को निश्चित कुछ अधिकार दिये हैं। वह किसी बिल के विरुद्ध अपने 'वीटो' अर्थात् निषेधाधिकार का प्रयोग कर दे तो वह कांग्रेस के समस्त मत-बल से षष्ठाश के समान हो जाता है, क्योकि यदि राष्ट्रपति 'हां' कह दे तब तो बिल कांग्रेस के बहुमत मात्र से पास हो सकता है, और यदि वह 'ना' कर दे तो कांग्रेस के दो तिहाई मतो की अवश्यकता पडती है।

वैदेशिक मामलो मे पहल राष्ट्रपति ही करता है। राष्ट्रपति ने जो सन्धि की हो उसे सेनेट कार्यान्वित होने से अवरुद्ध तो कर सकती है, परन्तु वह स्वयं न तो कोई सन्धि कर सकती है और न राष्ट्रपति को किसी से कोइ सन्धि करने के लिए विवश कर सकती है।

इसी प्रकार, शासन की 'एक्जेक्यूटिव' (कार्यपालिका) शाखा और सैनिक विभागो के उच्च अधिकारियो की नियुक्ति करना राष्ट्रपति का काम समझा जाता

है। परन्तु उन नियुक्तियो की पुष्टि सेनेट करती है। बहुधा ऐसा होता है कि कोई सेनेटर नौकरी के किसी उम्मीदवार की ओर राष्ट्रपति का ध्यान आकृष्ट करता है, और राष्ट्रपति बिना इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार किए उसे इनकार नही कर सकता कि 'ह्वाइट हाउस' (अर्थात् राष्ट्रपति की सरकार) को उस सेनेटर के समर्थन की आवश्यकता कहां तक पड़ेगी। "सेनेटर का शिष्टाचार" नाम का एक रिवाज भी है। इसके अनुसार बहुमत दल का कोई सेनेटर अपने राज्य मे किसी संघीय पद पर किसी व्यक्ति की नियुक्ति को यह कहकर रोक सकता है कि यह आदमी मुझे "व्यक्तिश नापसन्द" है। तब उसके साथी सेनेटर भी उस नियुक्ति को पुष्ट करने से इनकार करके "शिष्टाचार" का पालन करते है। परन्तु इस रिवाज के कारण, जब रिपब्लिकन पार्टी के लोग पदारूढ हो तब व दक्षिणी राज्यो मे संघीय पदो पर अपनी नियुक्तिया करने मे, और जब डिमोक्रेटो की बारी आती है तब वे उत्तर के रिपब्लिकन राज्यो मे वैसा करने मे संकोच नही करते।

अंग्रेज विचारक जान लॉक के विचारो ने संयुक्त राज्य अमेरिका के संस्थापको को बहुत प्रभावित किया था। उसने अपनी पुस्तक "ट्रिटिजेज ऑव गवर्नमेण्ट" (शासन के निबन्ध) मे इंगलेण्ड के कानूनी "विशेषाधिकारो" अर्थात् राजा द्वारा अपने अधिकारो के विशिष्ट तथा तर्क-विरुद्ध प्रयोग के रूप का वर्णन किया है। लॉक ने कहा है—

"विशेषाधिकार हमारे चतुरतम और उत्कृष्टतम राजाओ के हाथ मे सदा सबसे अधिक रहता था, क्योंकि प्रत्यक्ष ही उनके व्यवहार का लक्ष्य प्रधानतया जनता के हित के अतिरिक्त और कुछ होता था। इसलिए जब ये राजा कानून की लीक से हट कर अथवा उसके विपरीत भी कोई कार्रवाई कर देते थे तब जनता उनसे संतुष्ट होने के कारण, वह जो कुछ भी करते थे उससे अपनी सहमति प्रकट कर देती थी... उसका यह निर्णय ठीक ही होता था कि राजा अपने कानूनो के विरुद्ध कुछ नही करते, क्योकि वे सब कानूनो के आधार और लक्ष्य—जनहित—के अनुकूल ही कार्य करते थे।"

लॉक का कथन यह भी था कि विधि-निर्माण का अधिकार सर्वोपरि है और "जनता ने एकवार उसे जिन हाथो मे सौप दिया वे पवित्र और अपरिवर्तनीय" हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका का बहुत सा राजनीतिक इतिहास, इंगलैण्ड के समान, इन परस्पर-विरोधी सम्बन्धो मे व्यावहारिक संगति लगाने का ही इतिहास है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे 'एक्जेक्यूटिव' अर्थात् कार्यपालक शासको के अधिकारो की सीमाओ का निर्धारण, अधिकाधिक मात्रा में, राष्ट्रपति के सम्बन्ध मे जनता का जो मत होता है उसके अनुसार ही होता आया है, विशेषत तव से जव से कि रेडियो और टेलिविजन ने राष्ट्रपति को जनता के अधिक निकट सम्पर्क मे ला दिया है। परन्तु हमारे आरम्भिक इतिहास मे भी, राष्ट्रपति कभी-कभी "कानून की लीक से हटकर अथवा उसके विपरीत" काररवाई कर लेते थे।

उदाहरणार्थ, सन् १७९३ मे जब फ्रास ने इंग्लैण्ड से युद्ध की घोषणा कर दी तव राष्ट्रपति वाशिगटन ने संयुक्त राज्य अमेरिका की तटस्थता घोषित कर दी थी। उसने अपना मत यह वना लिया था कि फ्रान्स के साथ अमेरिका की मित्रता की सन्धि वहा लागू नही होती जहा फ्रान्स आक्रान्ता हो। मैडीसन ने तव वाशिगटन पर सवैधानिक अधिकार के विना आचरण करने का और इंगलैण्ड के राजा के विशेपाधिकार का अनुकरण करने का आक्षेप किया था।

पुन सन् १८०३ मे, राष्ट्रपति जेफर्सन को अकस्मात ही नेपोलियन से ल्यूइजियाना का प्रदेश खरीद लेने का अवसर मिल गया। यदि इस अवसर का लाभ तुरन्त ही न उठा लिया जाता तो नेपोलियन का मन बदल जाने की पूरी सम्भावना थी। जेफर्सन ने उसे खरीद लिया। उसने निजी बातचीत मे माना भी था कि यह "काम संविधान की सीमा से वाहर का" था, परन्तु उसे आशा थी कि कांग्रेस उसे खरीदने के लिए धन देकर उसकी सहायता करेगी। कांग्रेस ने उसका साथ दिया, और यही कारण है कि आज भी मिसिसिपी घाटी के पश्चिमी आधे पर संयुक्त राज्य अमेरिका का ही अधिकार है।

अब्राहम लिंकन ने सम्भवत. संविधान की उपेक्षा, अन्य किसी राष्ट्रपति की अपेक्षा अधिक भिन्न प्रकार की थी, और अमेरिकी जनता उसके इस कार्य का स्मरण

करके उसकी निन्दा नही करती। उदाहरणार्थ, लिंकन ने संविधान के वावजूद, "हेवियस-कॉर्पस" के (अर्थात् किसी वन्दी को अदालत मे पेश करने की प्रार्थना करने के) अधिकार का प्रयोग स्थगित कर दिया था, और कारण यह वतलाया था कि सारे संविधान को नाश से वचाने के लिए वैसा करना आवश्यक था। उसने प्रश्न किया था, "क्या एक के अतिरिक्त शेष सब कानून अ-पालित ही रहेंगे, और क्या उस एक कानून का उल्लंघन न होने देने के लिए शासन को छिन्न-भिन्न हो जाने दिया जायगा? और ऐसा करने के पश्चात् भी यदि शासन उलट गया तो क्या वह शासको की प्रतिज्ञा का भंग नही होगा, जवकि हमारा विश्वास है कि एक कानून की उपेक्षा कर देने से शासन की रक्षा हो सकती है?"

सन् १९१७ में, संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रथम विश्व-युद्ध मे सम्मिलित होने से पूर्व, उडरो विलसन ने कांग्रेस से अमेरिकी व्यापारिक जहाजो को शस्त्रसन्नद्ध करने का अधिकार प्राप्त करने का यत्न किया था। जव कांग्रेस नही मानी तव उसने अपने सेनापतित्व के अधिकार का प्रयोग किया और अपनी कुछ सेना को व्यापारिक जहाजो पर तैनात कर दिया।

संविधान के अनुसार, युद्ध की 'घोषणा' करने का अधिकार कांग्रेस का है, और सम्भवत इस विधान का अभिप्राय यह था कि युद्ध छेडने न छेडने का निर्णय कांग्रेस किया करे। परन्तु व्यवहार मे देश का कोई भी शक्तिशाली अंग ऐसी स्थिति मे आ सकता है कि वह संयुक्त राज्य अमेरिका को युद्ध मे फंसा दे। यहा तक कि सन् १९०३ मे सैन फ्रान्सिस्को के शिक्षण-वोर्ड तक ने, केलिफोर्निया मे प्रचलित जन-भावना का लिहाज करके, यह आज्ञा दे दी थी कि स्कूलो मे जापानी वालको को गोरे वालको से पृथक् रक्खा जाय। इस आज्ञा के कारण जापान मे साधारण जनता की भावनाएं भयंकर रूप मे भडक उठी। तव राष्ट्रपति थिओडोर रूजवेल्ट ने अपने मन्त्रिमण्डल का एक सदस्य जापानियो को यह विश्वास दिलाने के लिए सैन फ्रान्सिस्को भेजा कि मैंने तुम्हारे अपमान का प्रतिकार करने का यत्न कर देखा है, यद्यपि मुझे उक्त आज्ञा वापस लेने के लिए शिक्षण-वोर्ड को विवश करने का कोई अधिकार नही है।

अपने अधिकार के अन्तर्गत कोई भी कार्रवाई करके और युद्ध की परिस्थिति उत्पन्न करके, राष्ट्रपति भी युद्ध को देश के द्वार पर लाकर खडा कर सकता है। उदाहणार्थ, उडरो विलसन ने सन् १९१७ मे ब्रिटिशो और जर्मनो द्वारा अमेरिका की तटस्थता के अधिकारो के उल्लंघन का प्रतिवाद ऐसे शब्दो मे किया था कि उनसे प्रकट होता था कि अमेरिकी जनमत धीरे-धीरे तटस्थता से हटकर जर्मनी विरोधी होत. जा रहा है। जब उसने कांग्रेस से युद्ध की घोषणा करने के लिए कहा तब उसके लिए इनकार करने का अवसर ही नही रहा था । इसके विपरीत, सन् १८१२ मे कांग्रेस का बहुमत इंगलैण्ड से युद्ध करने का प्रबल पक्षपाती था। कुछ ऐतिहासिको का मत है कि राष्ट्रपति मैडीसन को सन् १८१२ के युद्ध मे उसकी इच्छा के विरुद्ध घसीट लिया गया था।

वतुस्त , राष्ट्रपति को युद्ध अथवा शान्ति के प्रश्नो का निर्णय, बहुधा, कांग्रेस या अमेरिकी जनता द्वारा उन पर विचार की प्रतीक्षा किए बिना करना पड जाता है। राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने पर्ल-हार्बर पर जापान के आक्रमण से पहले कई बार हिटलर के विरुद्ध शीघ्र-शीघ्र ऐसी काररवाइयाँ की थी जो विलम्ब करने से शायद न की जा सकती। ग्रीनलैण्ड के तट पर एक जर्मन चौकी पर अधिकार कर लेने और आइसलैण्ड की रक्षा के लिए सेनाएँ भेज देने की काररवाई भी इन्ही मे से एक थी। बर्लिन पर रूसियो की घेरा-बन्दी और दक्षिणी कोरिया पर कम्यूनिस्ट आक्रमण के समय राष्ट्रपति ट्रूमन को भी ऐसी ही आकस्मिक आपत्तियो का सामना करना पडा था। ये दोनो आक्रमण भी उसी प्रकार स्वतन्त्र संसार को टटोलने के लिए किए गए थे, जैसे कि जापानियो, जर्मनो और इटालियनो ने किए थे और जिनका परिणाम द्वितीय विश्व-युद्ध हुआ था। यदि बर्लिन और कोरिया मे रूसियो को तुरन्त ही जवाब न दिया जाता तो संसार तृतीय विश्व-युद्ध के मार्ग पर जा पडता। संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति ही अपने अधिकार का प्रयोग करके इन आकस्मिक संकटो का सामना कर सकता था, अन्य कोई नही।

राष्ट्रपति को जब कोई कार्रवाई करने का संवैधानिक अधिकार हो तब भी विरोधी कांग्रेस उसे अपनी नीति कार्यान्वित करने के लिए धन देने से इनकार करके

उसका मार्ग अवरुद्ध कर सकती है। राष्ट्रपति ट्रूमन ने जब "नाटो" (नार्थ-ऐटालाण्टिक-ट्रीटी-ऑर्गेनाइजेशन) की आरम्भिक रक्षा-सेना को सहारा लगाने के लिए अमेरिकी सेनाएं युरोप भेजी थी तब उन्होंने वैसा सेनापति की हैसियत मे किया था। भूत-काल मे अन्य भी कई राष्ट्रपति ऐसा कर चुके थे। जब उन्हे विदेशो मे सेना भेजना उचित जान पडा तब उन्होंने अपने अधिकार का प्रयोग करके वैसा कर दिया। राष्ट्रपति ट्रूमन के ऐसा करने पर कांग्रेस मे बडा विवाद हुआ था कि राष्ट्रपति को सेनाएँ युरोप भेजने का अधिकार है या नही, और उनके कई विरोधियो ने तो व्यय मे कटौती का प्रस्ताव करके उनके हाथ बाघ देने का भी यत्न किया था परन्तु यह संघर्ष संवैधानिक कम और राजनीतिक अधिक था।

कांग्रेस के साथ राष्ट्रपति के सम्बन्धो का रूप, 'एक्जेक्यूटिव' (कार्यपालको) और विधि-निर्माताओ मे अधिकार-प्राप्ति तथा राजनीतिक लाभ-प्राप्ति के उलझन-भरे संघर्षो का मिला-जुला रूप है। संसदीय पद्धति मे प्रधान मन्त्री के दल के प्राय. सभी सदस्य उसका समर्थन ही करते है, क्योकि यदि वह किसी महत्वपूर्ण प्रश्न पर पराजित हो जाय तो वह और उसका दल दोनो, पद-च्युत हो जाते हैं। परन्तु कांग्रेस में 'ह्वाइट हाउस' के किसी भी प्रस्ताव पर दोनो दल साधारणतया बंट जाते है। कुछ सदस्य तो राष्ट्रपति से सहमत या असहमत होते हैं, और अन्य, उसकी नीतियो के पक्ष या विपक्ष मे मत केवल दलीय कारणो से देते हैं। वास्तव मे जिन शक्तियो का प्रभाव पड रहा होता है उनका परिचय संविधान को पढने से नही मिल सकता। यदि राष्ट्रपति कांग्रेस मे, और विरोधी दल मे भी मित्र बनाने की कला मे कुशल हो तो वह बहुतेरे मत केवल मित्रता के द्वारा प्राप्त कर सकता है। यदि राष्ट्रपति को केन्द्रीय सरकार मे नियुक्तियां करनी हो और उसने नियुक्त व्यक्तियो के नामो की घोषणा अभी न की हो तो वह,अपने शत्रुओ को भी अपने समर्थक पोषको को नौकरी दिलवाने की सुविधा देकर उनके मत खरीद सकता है। प्राय. देखा जाता है कि जिस कांग्रेस सदस्य को अपने सिद्धातो के कारण राष्ट्रपति का पक्ष लेना पडता है उसे अपने समर्थको को नौकरियो पर लगवाने का उतना अवसर नही मिलता जितना कि राष्ट्रपति के विरोधी दल के किसी-किसी सदस्य को मिल जाता है। तेल उसी धुरी मे डाला जाता है जो आवाज करती है।

इसीलिए कहते है कि प्रत्येक राष्ट्रपति जब पहले पहल 'ह्वाइट हाउस' मे पहुँचता है तब वह "हनीमून" (सुहाग यात्रा) करता है। उस समय उसके हाथ मे बहुतेरी नौकरियां होती हैं जिनसे वह अपने शत्रुओ को शान्त कर सकता है। ज्योही उसकी नौकरियो का खजाना घटता है त्योही कांग्रेस और 'ह्वाइट हाउस' मे परम्परागत संघर्ष फिर छिड जाता है ; और तभी से राष्ट्रपति को अपनी आकर्षण-शक्ति और जनता के समर्थन पर निर्भर रहना पडता है।

राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रूज़वेल्ट ने अपनी "अंगीठी के पास बैठकर बातचीत करने" का सिलसिला शुरू करके रेडियो का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से करने की परम्परा डाली थी। कई बार क्रुद्ध और गुर्राती हुई कांग्रेस के साथ कठिन संघर्षो मे रूज़वेल्ट अपनी बात स्वीकृत करवा लेने में सफल हुए थे, क्योंकि कांग्रेस मे उसके शत्रुओ को अपने राज्य की जनता का भय लगा रहता था।

इसके विपरीत, यदि राष्ट्रपति अपने दल के किसी कांग्रेस-सदस्य या सेनेटर को छांटने का यत्न करे, तो उनका समर्थन करने के लिए जनता खडी हो जाती है। सन् १९३८ मे रूजवेल्ट ने कुछ ऐसे डिमोक्रेटो को मतदाताओ से हरवाने का प्रयत्न किया था जो उसकी नीति का विरोध करते थे, परन्तु वे सभी प्रबल बहुमत से पुनर्निर्वाचित हो गये थे। जब राष्ट्रपति की पार्टी मतदाताओ के पास जावे तब उसे पार्टी का संगठित मोर्चा तोड़ने का प्रयत्न नही करना चाहिए। हां, वह कभी-कभी, विशेषत. गुप्त रूप से, दल के किसी भीतरी शत्रु के विरुद्ध अपने प्रभाव का उपयोग कर सकता है।

राष्ट्रपति की दलगत छंटनियो का सर्वत्र विरोध होने का कारण प्रत्यक्ष वही तर्क है जिससे अमेरिकी द्विदलीय पद्धति का समर्थन किया जाता है और जिसके प्रति जनता की गहरी और स्वाभाविक आदर बुद्धि है।

अमेरिका का मन्त्रिमण्डल वैसा नही है जैसा कि ग्रेट ब्रिटेन के संसदीय लोकतंत्र का मन्त्रिमण्डल होता है। अमेरिका मे प्रशासकीय विभागो के अध्यक्ष कांग्रेस के सदस्य नही होते है और वे 'हाउस' के सदन मे प्रश्नो का उत्तर देने के लिए नही जाते। राष्ट्रपति अपने मन्त्रिमण्डल का चुनाव करते हुए कई प्रकार की उलझनो और

आवश्यकताओ पर विचार करता है। कार्यदक्षता तो उनमे से केवल एक होती है। मन्त्रिमण्डल के पद उन राज्यो अयवा प्रदेशो मे देख-भालकर वितरित किये जाते हैं जहा मतदाताओ के मत प्राप्त करना आवश्यक होता है। महत्वपूर्ण धार्मिक और आर्थिक समूहो का भी इस वितरण मे ध्यान रक्खा जाता है। मन्त्रियो को ठोस डिमोक्रेटिक दक्षिणी राज्यो अथवा मैन और वार्मोण्ट जैसे ठोस रिपब्लिकन राज्यो मे शायद ही कभी लिया जाता है, क्योकि जिन राज्यो की जनता सदा एक ही पक्ष मे मत देती है उनकी स्थानीय देशभक्ति का लिहाज करना राजनीतिक भावनो का अपव्यय मात्र सिद्ध होता है।

नियमित विभागो के अध्यक्ष मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते है और वे प्राय पूर्णतया राष्ट्रपति के नियन्त्रण मे काम करते है। राष्ट्रपति मन्त्रिमण्डल के किसी सदस्य को कोई ऐसा कर्तव्य पालन करने से इनकार करने पर पृथक् भी कर सकता है जो संवैधानिक अधिकारो पर आधारित हो। प्रारम्भ मे केवल 'स्टेट' (वैदेशिक) और युद्ध विभाग स्पष्ट रूप से राष्ट्रपति के अधीन रखे गये थे। ये दोनो विभाग राष्ट्रपति के सवैधानिक अधिकारो 'की ही शाखा समझे जाते थे। कोश-विभाग का सचिव अपने कार्यो का विवरण कांग्रेस के सामने प्रस्तुत करता था, क्योकि उसके कर्तव्य कांग्रेस के अधिकारो पर आधारित थे। परन्तु राष्ट्रपति वाशिंगटन ने धीरे-धीरे मन्त्रिमण्डल को राष्ट्रपति के नियन्त्रण में लाना आरम्भ किया, और अब तो साधारणतया सभी विभागो पर राष्ट्रपति के अधिकार का कोई विरोध नही करता। इसके विपरीत, कांग्रेस अपने अधिकारो के आधार पर नये-नये कर्तव्यो की सृष्टि करके उन्हे सीधा ही मन्त्रिमण्डल के किसी सदस्य को या किसी ब्युरो के प्रमुख को सौप सकती है। इस प्रकार के कर्तव्य पालन करने वाले अधिकारी पर राष्ट्रपति का अनुशासन अथवा नियन्त्रण कहां तक चल सकता है यह अभी पूर्णतया निश्चित नही हुआ है।

कांग्रेस ने बहुत-सी आपत्कालिक और स्वतन्त्र एजन्सियो की भी स्थापना की है, जैसे कि उसने सन् १९३५ मे बेरोजगारो को रोजगार दिलाने के लिए 'वर्क्स प्रोग्रेस-ऐडमिनिस्ट्रेशन' (निर्माण-उन्नति-शासन) की और निजी उद्योगो की कुछ प्रथाओ का नियन्त्रण करने के लिए "फेडरल-ट्रेड-कमिशन" (संघीय-व्यवसाय

आयोग) की की थी। राष्ट्रपति के साथ इन एजन्सियो के सम्बन्धो के विषय मे अनेक प्रश्न उठे हैं, परन्तु उनको कोई स्पष्ट रूप न्यायालय भी नहीं दे सके।

"रूरल-इलेक्ट्रिफिकेशन ऐडमिनिस्ट्रेशन" (ग्राम विद्युत विस्तार प्रशासन) सरीखी कुछ एजन्सियां सार्वजनिक सेवक है और उनको किसी साधारण विभाग मे अन्तर्मुक्त करके, राष्ट्रीय शासन के प्रमुख के रूप मे राष्ट्रपति ही उनका नियन्त्रण कर सकता है। अन्य कुछेक इतनी स्पष्टता से राष्ट्रपति के नियन्त्रण मे नही रक्खी जा सकती। "सिविल-ऐविएशन वोर्ड" (नागरिक उड्डयन वोर्ड) और "फेडरल कम्युनिकेशन्स कमीशन" (संघीय-सचार आयोग) को क्रमश वायुयानो और रेडियो-स्टेशनो के संचालन के नियम वनाने का अधिकार दिया गया है और उनकी शक्ति कानून की होती है। इन एजन्सियो का कर्त्तव्य है कि ये लोगो के विचारो का पता लगाकर वस्तुस्थिति को जाने और अपने निर्णय कांग्रेस द्वारा निर्धारित व्यापक सिद्धान्तो के अनुसार करे। साधारणतया इन एजन्सियो को अपने अनुशासन अथवा नियन्त्रण मे रखने का राष्ट्रपति को उतना अधिकार नही है जितना कि संघ के सरकार कर्मचारियो को।

"फेडरल ट्रेड कमीशन" (संघीय व्यवसाय आयोग) सरीखी कुछ एजन्सियां अर्ध न्यायिक होती है। यह कमीशन विविध पक्षो की वात सुनकर यह निर्णय दे सकता है कि फलां व्यावसायिक संगठन कानून विरोधी आचरण कर रहा है और उसे अपना रास्ता वदलना पडेगा। सुप्रीम कोर्ट (सर्वोच्च न्यायालय) ने निर्णय दिया है कि "फेडरल ट्रेड कमीशन" के किसी कमिश्नर को राष्ट्रपति केवल इस कारण पृथक् नही कर सकता कि उसका कोई काम उसे नापसन्द है।

विधि, कार्य-पालन और न्याय से सम्बद्ध विविध संस्थाओ के विशिष्ट मिश्रण का यह सिद्धान्त न्यायालयो की समझ मे भी नही आया परन्तु इसके व्यावहारिक पक्ष को समझना उतना कठिन नही। अधिकारियो का चुनाव राष्ट्रपति ही करता है, वे चाहे उसके नियन्त्रण मे रहे या नही, और उनकी पुष्टि सेनेट करती है। इस व्यवस्था की राजनीतिक वास्तविकता "फेडरल पावर कमीशन" (संघीय-शक्ति-आयोग) के उदाहरण से स्पष्ट हो जायगी। यह कमीशन अन्य वस्तुओ के अतिरिक्त प्राकृतिक

गैस के अन्तर राज्योय वितरण का भी नियन्त्रण करता है। गैस कम्पनियाँ गैस का जो मूल्य वसूल करना चाहती थी उसे इस कमीशन ने स्वीकृत नही किया था। इस पर कम्पनियो ने कांग्रेस से अपील की और वहाँ एक विल पास करवा लिया, जिसके अनुसार इस प्रश्न का निर्णय कमीशन के हाथ मे नही रहा। राष्ट्रपति ने इस विल के विरुद्ध अपने निषेधाधिकार का प्रयोग कर दिया, और कांग्रेस उसके निषेधाधिकार का प्रभाव अपने दो-तिहाई बहुमत से समाप्त करने मे सफल नही हो सकी। इनके पश्चात् एक ऐसे कमिश्नर का कार्य-काल समाप्त हो गया जिसने कम्पनियो से विरुद्ध मत दिया था, परन्तु वह पुन. नियुक्त कर दिया गया। कम्पनियो ने सेनेट को मना लिया कि वह उस कमिश्नर की पुर्ननियुक्ति की पुष्टि नही करेगी। अन्त को कम्पनियो का पक्षपाती एक व्यक्ति कमिश्नर नियुक्त किया गया और उसकी पुष्टि सेनेट ने भी कर दी। इससे कमीशन का बहुमत बदल गया और उसने कम्पनियो की इच्छा को अपना लिया और यह संघर्ष समाप्त हो गया। इस कहानी का निचोड यह है कि कोई भी कमीशन या न्यायालय अतन्तोगत्वा निर्वाचन के परिणाम का ही अनुसरण करता है, यदि तुरन्त नही तो अन्त में अपने सदस्यो मे परिवर्तन के पश्चात्। जिन असैनिक कर्मचारियो को नीति-निर्धारण के अथवा राजनीतिक अधिकारियो के काम नही करने पडते उनकी नियुक्ति राजनीतिक विचार से नही की जाती। इनमे चपरासियो और द्वारपालो से लेकर अनुसन्धान विशेषज्ञो और निरीक्षको तक रोजमर्रा का काम करने वाले कर्मचारी सम्मिलित होते हैं। यदि इनकी कोई राजनीतिक पसन्द-नापसन्द हो तो उसकी पूर्ति के लिए कानून इनको अपने निवास के राज्य मे मतदान की अनुमति प्रदान करता है। परन्तु ये राजनीति मे सक्रिय भाग नही ले सकते।

परन्तु राजनीति कभी-कभी असैनिक कर्मचारियो की कार्यकुशलता मे भी हस्तक्षेप कर देती है।

कांग्रेस ध्यान न भी दे तो भी बड़ी शक्तियाँ ऐसी है जो नागरिक अथवा असैनिक कर्मचारियो की कुशलता पर अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। अनुकूल प्रभाव उन बहुसंख्यक विशेषज्ञ निरीक्षको का और ऊपर के अधिकारियो का पड़ता है जो

जानते है कि सरकारी कर्मचारियो को व्यवस्था मे किस प्रकार रखना चाहिए। ऊंचे अफसर भी यह जानते होते हैं और वे विशेषज्ञ व्यवस्थापको का समर्थन करते रहते हैं। सन् १६४७ मे राष्ट्रपति ने एक शासकीय आज्ञा दी थी कि व्यवस्था मे उत्तमता को बढानेके लिए कुशलता को उन्नत करनेकी टेकनिकल विधियोका आदान-प्रदान किया जाय। पीछे यह पद्धति और भी तीव्रता से अमल मे लाई गयी। इस आज्ञा मे कहा गया था कि शासनाधिकार एजन्सियो को दे दिया जाय, प्रबन्ध का ऐसा दर्जा कायम किया जाय कि कार्य अधिक अच्छा होने लगे, और जिस प्रकार अत्यन्त आधुनिक बीमा कम्पनियो और बैंको मे विशेषज्ञो द्वारा निरीक्षण किया जाता है उसी प्रकार सरकारी विभागो मे भी किया जाय। संघीय शासन मे कई स्तरो पर उच्च कुशलता दृष्टिगोचर होती है, और उसकी विधियो का अनुकरण बहुत से निजी व्यापारिक संगठन भी करते हैं।

शासन की कुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली आन्तरिक शक्ति का काम वे अधिकारी करते है जो कि अपने अधीनस्थ कर्मचारियो के साथ व्यवहार करने की आधुनिक विधियो को नही जानते। निजी व्यापारिक संस्थाओ मे भी यही बात देखी जाती है। कुछ अधिकारी राजनीतिक कारणो से, या सैनिक योजनाएं बनाने या वैदेशिक मामलो मे उच्च योग्यता के कारण नियुक्ति किये जाते हैं। सम्भव है कि उनको प्रबन्ध की कला का ज्ञान तनिक भी न होता हो। राष्ट्रपति अपने मन्त्रियो का चुनाव केवल इस आधार पर नही कर सकता कि उन्हे किसी बडे संगठन को अल्पव्यय मे संचालित करने का ज्ञान है या नही।

शासन-संचालन के व्यय मे कांग्रेस द्वारा रुचि लेने का परिणाम प्राय. नागरिक कर्मचारियो की कुशलता घट जाने के रूप मे प्रकट होता है। प्रबन्ध की आधुनिक विधियो का आधार; जैसा कि अत्यन्त सफल निजी व्यापारी संगठनो से प्रमाणित होता है, कर्मचारियो के साथ शिष्ट व्यवहार करने की नीति है। इस शिष्टता का एक नमूना पूर्वाह्न में जलपान के लिए 'छुट्टी' दे देना है। शिष्टतापूर्ण प्रबन्ध का फल, अल्प व्यय मे अधिक उत्पादन होता है। परन्तु ये विधियां सुगमता से राजनीतिक आक्षेपो का लक्ष्य बन जाती हैं।

कोई भी राजनीतिज्ञ, सरकारी कर्मचारियो पर प्रमाद और बेईमानी के कठोर आक्षेप करके, मत तो प्राप्त कर सकता है परन्तु लेखा ठीक-ठीक रखने पर पता चला है कि कांग्रेस मे किसी एजन्सी के विरुद्ध केवल एक आक्षेप-पूर्ण भाषण के कारण एक लाख डालर तक की हानि हो सकती है।

इसके विपरीत, जिन एजन्सियो का प्रमुख अधिकारी अच्छा व्यवस्थापक नहीं होता उनकी जाच यदि कांग्रेस न्याय और ईमानदारी से करवाये तो अपव्यय के प्रकट हो जाने के कारण धन की बचत हो जाती है।

असैनिक कर्मचारियो सम्बन्धी नीतियो मे सुधार की आशा, ऐसे प्रमुख व्यवसायियो की सहायता लेने से भली प्रकार पूरी हो सकती है जो कुशलता के आधुनिक सिद्धान्तो को समझ चुके हैं। जब इस प्रकार के व्यक्ति पर्याप्त संख्या मे इस समस्या पर इस प्रकार ध्यान देने लगेंगे कि कांग्रेस पर भी उनका प्रबल प्रभाव पडे तब वे राजनीतिक आक्षेपों-प्रत्याक्षेपो को निरुत्साहित कर सकेंगे। उनसे यह आशा भी की जा सकती है कि वे शासन के अच्छे व्यवस्थापको के साथ अपनी टेकनिकल जानकारी का बडे पैमाने पर आदान-प्रदान करें और उनको आवश्यक सहायता दें।

संघीय (केन्द्रीय) शासन की विशालता सदा चिन्ता का विषय बनी रही है; अपने भारी व्यय के कारण ही नही, अपनी "नौकरशाही" के कारण, उससे भी अधिक। नौकरशाही शब्द का प्रयोग अमेरिकी भाषा मे यह प्रकट करने के लिए किया जाता है कि सहस्रो व्यक्तियो को नौकरी पर लगाने वाली शासन की विशाल एजन्सियां गडबड मे कही अदृश्य न हो जायं, और कांग्रेस का अथवा राष्ट्रपति तक का उन पर ध्यान भी न जाय। यह सन्देह भी है, और वह निष्कारण नही है, कि इनमे से कई एजन्सिया बहुत समय पूर्व किसी विशिष्ट संकट का सामना करने के लिए आरम्भ की गयी थी और वे अब तक स्वतन्त्र रूप मे चली आ रही है, क्योकि किसी को उनका पता नही लगा और इसीलिए उन्हे अपना कार-बार समेट लेने के लिए नही कहा गया।

एक और विश्वास यह है, और वह अपेक्षाकृत अधिक साधार है, कि विविध समयो पर स्थापित की हुई विविध एजन्सियो ने अपना काम इतना फैला लिया है

कि एक ही काम को कई-कई एजन्सियाँ करने लगी है। कभी-कभी कोई-कोई एजन्सी अपने वर्तमान रूप मे गलत विभाग का कार्य कर रही प्रतीत होती है, और उस काम का सम्बन्ध उसी प्रकार के अन्य कार्य के साथ ठीक प्रकार नही जोडा जाता।

हाल मे सब राष्ट्रपतियो ने शासन-विभाग को पुनर्गठित करने का प्रयत्न किया है, जिससे वह अधिक कुशल और तर्क-संगत बन जायं। राष्ट्रपति हूवर ने युद्ध-निवृत सैनिको की बिखरी हुई एजन्सियो को एकत्र करके "वेटरेन्स ऐडमिनिस्ट्रेशन" (युद्ध-निवृत्त विभाग) का संगठन कर दिया था। उन्होने सन् १९३२ मे "रिआर्गेनिजेशन ऐक्ट" (पुनर्गठन कानून) बनवाया था, जिससे उनको, कांग्रेस की देख-रेख मे, विविध विभागो को परिवर्तित करने का अधिकार प्राप्त हो गया था। परन्तु इस प्रकार की सब नयी योजनाएं कांग्रेस के सामने उपस्थित की जाती थी और यदि कांग्रेस उन्हे साठ दिन के भीतर अस्वीकृत नही कर देती थी तो उन पर कानूनी छाप लग जाती थी।

सन् १९३२ मे हाउस प्रतिनिधि सभा पर डिमोक्रेट पार्टी का अधिकार हो गया, और उसने श्री हूवर की योजनाओ को स्वीकार न करके, पुनर्गठन का काम डिमोक्रेटिक दल के नये राष्ट्रपति के लिए छोड देना पसन्द किया।

राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने सन् १९३६ मे एक समिति पुनर्गठन का अध्ययन करने के लिए नियुक्त की। उन्होने सन् १९३७ मे अति परिवर्तनकारी सिफारिशें की, और उनका राष्ट्रपति के विरोधियो ने प्रबल विरोधी किया। सन् १९३९ मे एक बहुत नरम बिल पास हुआ, और उसके अनुसार राष्ट्रपति कुछ परिवर्तन कर सके। उदाहरणार्थ, उन्होने बजट को राष्ट्रपति के शासन-कार्यालय के आधीन कर दिया। युद्ध-काल मे उन्होने मकानो और जहाजो की एजन्सियो को "नैशनल-हाउसिग-एजन्सी" (राष्ट्रीय-भवन-एजन्सी) और "वार-शिपिंग-ऐडमिनिस्ट्रेशन" (युद्ध-पोत-शासन) के रूप मे दृढ कर दिया, और युद्ध-काल के विशेषाधिकारो के अनुसार भी अन्य अनेक सुधार किए।

राष्ट्रपति ट्रूमन ने सन् १९४७ मे एक "रिआर्गेनिजेशन ऐक्ट" (पुनर्गठन कानून) बनवाकर, उसके अनुसार भूतपूर्व राष्ट्रपति हूवर की अध्यक्षता मे एक द्विदलीय

कमीशन नियुक्त किया। हूवर-कमीशन ने पूर्ण अध्ययन के पश्चात् कुछ सुझाव दिये, जिनसे, हूवर के अनुमान के अनुसार, सरकार को ३ अरब डालर प्रतिवर्ष की बचत हो सकती थी। 'हूवर' विवरण का जनता ने अच्छा स्वागत किया। राष्ट्रपति ट्रूमन ने कोई बीस योजनाएं कांग्रेस के सामने उपस्थित की, और कांग्रेस ने उनमे से तीन चौथाई को रहने भी दिया। सन् १९५३ मे कांग्रेस ने "रिआर्गेनिजेशन ऐक्ट" अर्थात् पुनर्गठन कानून की अवधि राष्ट्रपति आइजनहॉवर के लिए भी बढा दी।

ब्यूरो और एजन्सियो को पुनर्गठित करने के लाभ इतने प्रभावशाली कभी नही हुए कि जनता उनका उत्साह-पूर्वक समर्थन करती, परन्तु उनसे शासन के अनेक प्रमुख दोष अवश्य दूर हो गए। परन्तु "कोर ऑव इंजिनीयर्स" (इंजिनीयरो की टुकडी) सरीखी कुछ एजन्सियो को कांग्रेस मे इतना प्रबल राजनीतिक समर्थन प्राप्त है कि कोई भी राष्ट्रपति उनके विरोध की परवाह न करके उनमें परिवर्तन करने मे अब तक सफल नही हो सका।

मितव्ययिता, अर्थात् जिस वस्तु की जनता को आवश्यकता नही उसे न खरीदना, कांग्रेस का काम है, परन्तु व्यय घटाने का यश प्राप्त करने की कांग्रेस की इच्छा को कोई भी राष्ट्रपति ऐसा 'चुस्त' बजट तैयार करके विफल कर सकता है जिसमे कि ऐसी कोई बात हो ही नही जिसकी जनता को आवश्यकता नही है। दूसरी ओर कुशलता अर्थात् न्यूनतम व्यय मे अधिकतम सिद्धि कर लेना, राष्ट्रपति का काम है। इसमे कांग्रेस पाई-पाई की कटौती करके और किन्ही विशिष्ट स्वार्थों को प्रसन्न रखने के लिए अपव्यय-पूर्ण व्यवस्थाएं करके, किसी हद तक राष्ट्रपति को असफल कर सकती है। परन्तु राष्ट्रपति हूवर और उनके उत्तराधिकारियो के विषय मे यह कहा जा सकता है कि औसतन उन सब ने अच्छे संगठन और आधुनिक प्रबन्ध की दशा मे कुछ प्रगति की है।

अध्याय ५

काँग्रेस क्या है ?

संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस और पार्लमेण्ट या संसद में बडा अन्तर यह है कि कांग्रेस मे शासन की 'एक्जेक्यूटिव' (कार्यपालिका) शाखा के प्रतिनिधि शामिल नही होते। इंगलैण्ड मे जिस प्रकार प्रधानमन्त्री और उसका मन्त्रिमण्डल सदन के सदस्य होते है उस प्रकार अमेरिका मे राष्ट्रपति और उसका मन्त्रिमण्डल कांग्रेस के नही होते। कांग्रेस राष्ट्रपति को 'इम्पीचमेण्ट' की कारखाई के अतिरिक्त अन्य किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए विवश नही कर सकती, और न यदि वह किसी सरकारी विल को पास करने से इनकार कर दे तो कोई संवैधानिक संकट खडा होता है। उसके कारण राष्ट्रपति न तो त्याग पत्र देता है और न वह कांग्रेस को बरखास्त करके जनता को नये निर्वाचन के लिए विवश कर सकता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के शासन मे जनता का प्रतिनिधित्व एक ओर तो कांग्रेस करती है और दूसरी ओर राष्ट्रपति। प्रत्येक को एक दूसरे के विरुद्ध जनता का समर्थन पाने के लिए उससे अपील करने का अधिकार तो होता ही है, साधन भी होते हैं, और वे उनका उपयोग भी करते हैं। परिणाम यह होता है कि 'एक्जेक्यूटिव' अर्थात् शासन की कार्यपालिका शाखा और कांग्रेस अर्थात् शासन को विधि-निर्मात्री शाखा मे संघर्ष का रूप प्रत्यक्ष युद्ध और विरामसन्धि मे बदलता रहता है। जब कांग्रेस पर राष्ट्रपति के दल का नियन्त्रण होता है तब भी यही क्रम चलता है। एक और परिस्थिति, जो कि संसदीय पद्धति मे उत्पन्न नही हो सकती, तब सामने आती है

जब कि जनता राष्ट्रपति तो एक पार्टी का चुन देती है और कांग्रेस दूसरी को। तब शासन की कार्यपालिका और विधि-निर्मात्री शाखाएं आप से आप एक दूसरे की विरोधी हो जाती है।

इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस, पार्लमेण्ट या संसद की अपेक्षा ज्यादा गैर-जिम्मेवार रहती है, क्योंकि राष्ट्रपति के दल के ही सदस्य, राष्ट्रपति के पदत्याग पत्र देने का समर्थन न करते हुए भी, शासन के किसी प्रस्ताव के विरुद्ध मत दे सकते हैं। उत्तरदायित्व के इस अभाव के कारण कांग्रेस के आन्दोलनकारी नेताओ को सस्ती नामवरी कमाने का प्रोत्साहन होता रहता है, पदारूढ दल यह अनुभव नही करता कि उसका जीवन या मृत्यु कठोर अनुशासन पर निर्भर करता है।

उडरो विलसन जब कालेज मे प्रोफेसर थे तब उन्होने संविधान मे ऐसा परिवर्तन कर देने का विचार प्रस्तुत किया था, जिससे कांग्रेस को भी संसद के अधिकार और उत्तदायित्व प्राप्त हो जाये। उनका तर्क यह था कि यदि कांग्रेस के सामने राष्ट्रपति का बिल स्वीकृत करने अथवा संकट खडा करने का विकल्प रहेगा तो वह अपना काम अधिक गम्भीरता से करेगी और जनता भी उसके काम को अधिक समझने का यत्न करेगी। जब विलसन राष्ट्रपति हो गए तब उन्होने कांग्रेस के द्वारा अडंगा लगाया जाने पर संकट खडा कर देने का विचार किया था। वह उपराष्ट्रपति और अपने मन्त्रियो सहित पद त्याग कर सकते थे, और तब उस समय के कानून के अनुसार राष्ट्रपति का उत्तराधिकारी कोई भी न रहता और कांग्रेस को नयी कार्यपालिका का चुनाव करना पडता। परन्तु उन्हे युद्ध का सामना करना पड गया और वह शासन की निर्धारित प्रणाली के विरुद्ध नहीं जा सके। संयुक्त राज्य अमेरिका मे कांग्रेस को संसद मे परिवर्तित कर देने की कोई प्रत्यक्ष सार्वजनिक माग नही है।

शासन की शाखाओ मे अधिकारो के इस विभाजन का एक परिणाम यह है कि सेनेट भी उतना महत्वपूर्ण संस्था बन गया है जितना कांग्रेस। अन्य देशो में शासन की कार्यपालिका शाखा का नियन्त्रण द्वितीय सदन करता है इसलिए उसकी प्रवृत्ति सब अधिकार अपने हाथ मे लेने की और उच्च सदन को बूढे राजनीतिज्ञो की विवाद-

सभा के रूप मे छोड देने की रहती है। उदाहरणार्थ, इंगलैण्ड मे "हाउस-ऑव-लार्ड्‌स" से 'वीटो' का अर्थात् किसी बिल को निषिद्ध कर देने का अधिकार छीन लिया गया है। वह किसी बिल के विरुद्ध मत प्रकट करके उसे विलम्बित कर सकता है, परन्तु अंतिम निर्णय "हाउस ऑव कामन्स" का ही रहता है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे सेनेट भी उतनी ही शक्तिशाली है जितना कि हाउस, और कुछ मामलो मे तो हाउस से भी अधिक।

अमेरिका के राजनीतिक जीवन मे दो सदनो के विधान मण्डल की परम्परा की जडें बहुत गहरी हैं। औपनिवेशिक शासनो के समय भी दो ही सदन थे और अब भी, नेब्रास्का को छोडकर, सब राज्यो मे दो ही दो सदन हैं। परन्तु अब भी कोई एक सदन की कांग्रेस बनाने के पक्ष मे आन्दोलन करने की कल्पना नही करता। इसका प्रधान कारण यह है कि संयुक्त राज्य अमेरिका आज भी बडे और छोटे राज्यों का एक संघ है। बडे और छोटे राज्यो को इस प्रकार मिलाने की समस्या का अभी तक ऐसा कोई हल नही सुझाया गया जिससे कि अमेरिका के लोग सन्तुष्ट हो जायं।

सब बिलो को दो विभिन्न सदनो मे से गुजरना पडता है। इसके कारण आपत्काल मे विलम्ब नही होता, क्योकि तब सब लोग राष्ट्रपति के नेतृत्व मे चलने के पक्षपाती बन जाते हैं। परन्तु साधारण काल मे साधारण कानून मन्द गति से बनते हैं। एक ही प्रकार के विचारो को बार-बार दुहराया जाता है, इससे विरोधियो को प्रस्तावो की तुलना करने की अनेक सुविधाएँ मिल जाती हैं। अमेरिका की जनता की भावना शासन मात्र के विरुद्ध अविश्वास की है। ऐसा होते हुए भी विवादास्पद कानून सुगमता पास नही होते। इस बात पर कोई आश्चर्य नही किया जाता। कहावत भी है 'एक से दो मूंड भले'।

यद्यपि संविधान मे सुधार करके यह नियम कर दिया गया है कि सेनेटरो का निर्वाचन राज्य-विधान मण्डलो के स्थान पर साधारण मतदाता ही करेंगे, तो भी सेनेट और 'हाउस-ऑव-रिप्रेजेण्टटिव्ज्' के वातावरण मे अन्तर रहता है। सेनेटर औसत कांग्रेस-सदस्यो की अपेक्षा कुछ वर्ष बूढे होते हैं। कांग्रेस सदस्य बहुधा बढकर सेनेट मे पहुच जाते हैं। परन्तु ऐसे व्यक्ति बहुत कम मिलेंगे जिन्होने सेनेट का सदस्य

रह चुकने के पश्चात् कांग्रेस का चुनाव लडा हो। सेनेटरो का पद अधिक प्रतिष्ठित समझा जाता है उनकी संख्या केवल ९६ है। और कांग्रेस-सदस्यो की ४३५। सेनेट के सदस्यो को अपनी बात प्रकाशित करने के अनेक अवसर मिलते हैं और उनका उपयोग भलाई या बुराई के लिए किया जा सकता है।

सेनेट को विदेशो के साथ की हुई सन्धियो और राष्ट्रपति द्वारा की हुई नियुक्तियों को पुष्ट करने का अधिकार है। इस कारण बहुत-से सेनेटर वैदेशिक सम्बन्धो और शासन के संगठन पर विशेष ध्यान देते हैं। उनमे से कई एक विषयो के प्रतिष्ठित और प्रमाणिक ज्ञाता बन गये हैं।

सेनेट और हाउस के आधे से अधिक सदस्य वकील हैं। कोई वकील कांग्रेस के एक कार्य काल तक उसका सदस्य रहने के बाद यदि पुनर्निर्वाचन मे हार जाय तो वह अपना कानूनी पेशा फिर अपना सकता है और साधारणतया उसकी वकालत पहले से अच्छी चलने की सम्भावना रहती है। इसके अतिरिक्त, कांग्रेस के सदस्यो के लिए कानून दफ्तरो मे साझीदार बने रहना खिलाफ-कानून नही है; और जिन लोगो का नए कानूनो मे कुछ स्वार्थ होता है वे ऐसे वकीलो को अपना वकील बनाये रखने के लिए फीस देते रहते हैं। सरकारी कर्मचारी या कार्यपालिका शाखा के अधिकारी यदि इस प्रकार का सम्बन्ध बनाये रखे, तो बुरा माना जाता है।

एक स्कूल के एक विद्यार्थी ने एक बार कहा था कि "हमारा शासन वकीलो का है, मनुष्यो का नही।" यह अत्युक्ति है। परन्तु इसमे सन्देह नही कि अर्थ-नीति और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग जैसे बडे-बडे प्रश्नो मे भी कांग्रेस के मत पर, इंजिनियर, व्यापारी या पत्रकार की विचारशैली की अपेक्षा प्राय. वकील के चिन्तन की छाप अधिक रहती है।

कांग्रेस और राष्ट्रपति दो बड़े साधन हैं जिनके द्वारा राष्ट्र के राजनीतिक दल देश पर शासन करते और सत्ता-प्राप्ति के लिए संघर्ष करते है। राष्ट्रपति एक व्यक्ति होता है, इसलिए दल मे उसकी स्थिति अधिक निश्चित होती है, और वह उसके पुर्नानर्वाचन मे अथवा इतिहास मे जो स्थान प्राप्त करना चाहता हो उसकी

प्राप्ति मे सहायक होती है। दूसरी ओर कांग्रेस मे राष्ट्रपति के ही दल मे सदा कुछ व्यक्ति ऐसे भी रहते है जो किसी न किसी प्रकार राष्ट्रपति की नीतियो का विरोध करते रहते हैं। उसमे कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो यह समझते है कि हमारा पुर्नर्वाचन स्थानीय स्वार्थों पर निर्भर करता है, और वे स्वार्थ दल की साधारण नीति के विरोधी हो सकते हैं। इसलिए पदारुढ दल कांग्रेस के प्रायः सभी मत-विभाजनो मे बंटा रहता है, और यही हाल विरोधी दल का रहता है।

कांग्रेस का उत्तरदायित्व केवल प्रति दो वर्ष पश्चात् परखा जाता है, और तब भी साधारणतया कुछ अनिश्चित रूप मे। बहुत से कांग्रेस सदस्यो के मत का आगामी चुनाव पर प्राय. सामूहिक रूप से कोई स्पष्ट प्रभाव नही पडता, यद्यपि किसी कांग्रेस-सदस्य का अपने जिले में निर्णायक प्रभाव हो सकता है। यही कारण है कि दलो मे अनुशासन का अभाव रहता है। बहुत से कांग्रेस-सदस्य ऐसे 'सुरक्षित' जिलों के होते हैं जो बार-बार उन्ही को चुनकर भेज देते हैं, बशर्ते कि वे अपने जिले के लोगो को नाराज न करें; और उनके ऐसा करने की सम्भावना कठिनाई से ही हो सकती है। वे अपने राष्ट्रीय दल से प्राय. सर्वथा स्वतन्त्र होते हैं; हां, यदि उनका दल चुनाव हार जाय तो कांग्रेस की किसी समिति का अध्यक्ष बनने का अवनर भी उनके हाथ से निकल जाता है। इसलिए जो राज्य और जिले स्थानीय परिस्थितियो मे परिवर्तन न होने के कारण उन्ही प्रतिनिधियो को बार-बार चुनकर भेजते रहते है उनमे स्वयंप्रभु जनता के प्रति कांग्रेस का उत्तरदायित्व केवल छाया के रूप मे रहता है। स्वयंप्रभु जनता कांग्रेस के विषय मे अपना मत प्रकट करने के लिए चेतन तभी दिखाई पडती है जब संघर्ष तीव्र हो, और उसमे जब किसी उम्मीदवार का सम्बन्ध उन प्रश्नो के साथ जुडा हो जिन्हे कि जनता महत्वपूर्ण समझती है।

जो राज्य किसी एक पार्टी का प्रभाव न होने के कारण संदिग्ध माने जाते हैं और जिनके मतदाता मत देते समय अपने आप को किसी पार्टी से बंधा हुआ नही समझते, उनमे साधारणतया चुनाव का निर्णय उन्ही के स्वतन्त्र मतो से होता है।

और यदि राज्य मे किसी एक दल का प्रभाव अधिक हो तो स्वतन्त्र मतदाता उसके साथ मिलकर उसके प्रारम्भिक निर्वाचनो मे अपना प्रभाव वढा सकते है।

परन्तु जैसा कि लावेल मेलेट ने अपनी पुस्तिका "हैण्डबुक आव पालिटिक्स" (राजनीति का गुटका) मे वतलाया है, स्वतन्त्र निर्वाचक वहुधा अपने मतो को वाट कर अपनी शक्ति को व्यर्थ खो देते है। स्वतन्त्र मतदाता प्राय. उदार होते हैं। वे सुगमता से यह विश्वास कर लेते हैं कि उनका कर्त्तव्य प्रारम्भिक निर्वाचनो मे सर्वोत्तम उम्मीदवार को ही मत देने का है। किसी वात पर अपना 'प्रतिवाद' प्रकट करने के लिए वे अपने बहुत से मत किसी छोटे उप-दल को दे वैठते हैं। यदि यही समत वे वड़े दलो मे से किसी के उम्मीदवार को दे तो चुनाव पर उनका निर्णयाक प्रभाव पड़ सकता है।

जो राजनीतिज्ञ नियमित रूप से पार्ट्रियो का काम करते हैं वे स्वतन्त्र मतदाताओं के इस स्वभाव का लाभ कभी-कभी वडी चतुराई से उठा लेते हैं। जब उन्हे स्वतन्त्र मतदाताओ का डर होता है तव वे चुप-चाप किसी ऐसे अतिरिक्त उम्मीदवार का समर्थन करके उनके मतो को व्यर्थ कर देते हैं जो जीत तो नहीं सकता 'परन्तु सर्वोत्तम व्यक्ति' को मत देना चाहने वालो के मत अवश्य खीच लेता है।

यदि शक्ति का पासंग स्वतन्त्र मतदाताओ के हाथ मे हो तो उसका सफलता-पूर्वक उपयोग करने का उपाय यह है, जैसा कि मेलेट ने भी वतलाया है, कि वे परस्पर मिलकर निर्णय कर ले कि जो व्यक्ति इस समय पदारूढ है वह यदि पुनर्निर्वाचन के लिए खडा होगा तो वह उन्हे पसन्द होगा या नही। यदि वे उसे पसन्द करें तो मिलकर उसे सफल बना सकते हैं, और तब इसके पुरानेपन और प्रभाव, दोनो मे वृद्धि हो जायगी। यदि वे उसे पसन्द न करें तो उन्हे मिलकर उसके ऐसे प्रतिस्पर्धी को मत देना चाहिए जिसके 'सर्वोत्तम' उम्मीदवार न होने पर भी जीतने की सम्भावना सब से अधिक हो। कोई उम्मीदवार कितना ही नापसन्द क्यो न हो वह जव पदारूढ व्यक्ति को हराकर काँग्रेस मे जायगा तब उसे 'नया' माना जायगा उसके साथ पुरानेपन का प्रभाव नही होगा।

स्वयंप्रभू जनता के साथ उसके विधि-निर्माता प्रतिनिधियो के ये सम्बन्ध कितने ही भयंकर रूप से शिथिल क्यो न प्रतीत हो, "स्वतन्त्रता की घोषणा" मे जनतन्त्र का जो यह मौलिक सिद्धान्त घोषित किया गया है कि शासको को सब न्यायसंगत अधिकार शासितो से ही प्राप्त होते है, उसके साथ इनकी संगति अवश्य बैठ जाती है। जिन राज्यो और कांग्रेस के जिलो मे सदा एक ही दल की जीत होती है, उनमे शासित जनता की व्यापक सहमति बिना अधिक विवाद के उसी दल के पक्ष मे दी हुई रहती है। वह जब चाहे तब इस कोरे चेक को वापिस भी ले सकती है। इसके अतिरिक्त लोकतन्त्रीय शासन की एक बडी विशेषता यह है कि न केवल उन्हे जो अपना मत नही देते अपितु उन्हे भी जो कि मत देते हैं परन्तु हार जाते हैं, जीतने वालो द्वारा शासित होने के लिए चुपचाप सहमत हो जाना चाहिए। कांग्रेस की निर्वाचन प्रणाली मे अन्य निर्बलताएँ चाहे जो हो, उससे यह परिणाम तो निकल ही आता है।

यदि जनता राष्ट्रपति के काम का लेखा देखकर उसे पसन्द करे और 'ह्वाइट हाउस' पर दोबारा उसके दल का अधिकार हो जाय तो इससे उसके दल के कांग्रेस-सदस्यों को लाभ होता है। कांग्रेस-चुनाव के कडे मुकाबले मे भी उसी पक्ष का पल्ला भारी रहनेकी सम्भावना होती है जो राष्ट्रपति के चुनाव में जीता हो। इसे राष्ट्रपति के "कोट की पूंछ पर सवार होना" कहते हैं। 'कोट की पूंछ' के सिद्धान्त का उपयोग नि सन्देह कांग्रेस-सदस्यो और सेनेटरो की निष्ठा अपने दल के नेता के प्रति दृढ़ करने मे तो होता ही है। यदि वे उसकी अधिक हानि करेगे तो उससे उनको अपनी भी हानि होगी। यह एक स्मरण रखने योग्य तथ्य है कि ह्वाइट हाउस पर जिस पार्टी का अधिकार होता है वह उन मध्य-वर्ती चुनावो मे जिनमे कि राष्ट्रपति नही चुना जाता, सदा कुछ स्थान खो बैठती है।

कांग्रेस मे दल का नेता प्राय उन सदस्यो में से चुना जाता है जो राष्ट्रपति का समर्थन करते है, परन्तु कुछ समितियो के प्रधान ह्वाइट हाउस के पूर्ण विरोधी भी हो सकते हैं। यद्यपि उन्हे अपने क्षेत्र मे बहुत अधिकार होते हैं। उदाहरणार्थ, सन् १९५३ मे राष्ट्रपति आइजनहोवर का शासन आरम्भ होने के समय, हाउस की "वेज

एण्ड-मीन्स-कमिटी (उपाय-तथा-साधन समिति) के चेयरमैन ने टैक्स घटाने से पहले बजट को सन्तुलित करने की राष्ट्रपति की नीति का तीव्र विरोध किया था।

इस प्रकार की अनुशासनहीनताओ के कारण आगामी चुनाव मे दल मे फूट पड जाने का भय रहता है, और इस कारण दल के संगठन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अनेक सुझाव पेश किये गये हैं। कई बार दोनो सदनो के दलीय 'कांकसों' अर्थात् नीति-निर्धारक सम्मेलनो ने यत्न किया है कि उनके सदस्य दल के निर्णय पर ही चलें। परन्तु जो पहले कोई प्रतिज्ञा किये हुए होते हैं अथवा जिन्हे उस निर्णय के अनुसार मत देने मे अन्य कोई आपत्ति होती है, उनके लिए बचाव का कोई मार्ग निकल ही आता है। अनुशासन का पालन कराने के प्रयत्नो की सफलता मे बाधा यह है कि जो उसका भंग करते है उनके लिए दण्ड की व्यवस्था कुछ नही है। सबसे बडी कठिनाई यह है कि राष्ट्रीय दल के नेता किसी भी व्यक्ति को उसके राज्य मे उसके दल से निकाल नही सकते। यदि वह अपने आप को डिमोक्रेट कहता है परन्तु मत रिपब्लिकनो के साथ देता है तो उसे वैसा करने से तबतक कोई नही रोक सकता जबतक कि उसके राज्य की जनता उसे निर्वाचित करती रहे। दल अधिक से अधिक इतना कर सकता है कि उसे समितियो मे से निकाल दे, जैसा कि रिपब्लिकनो ने सन् १९५३ मे सेनेटर मौर्स को किया था।

सब मिलाकर अनुशासन-हीनता उस द्विदलीय पद्धति का तर्कसंगत परिणाम है जो कि अमेरिका की कांग्रेस मे प्रचलित है। उसमे संसदीय अधिकारो और उत्तर-दायित्वो के लिए कोई स्थान नही है।

राष्ट्रपति के विरोधी दल का प्राय. कांग्रेस के दोनो सदनो मे अल्पमत रहना है, परन्तु सदा नही। अल्पमत का कर्तव्य निरा विरोध करना है, यह विचार केवल अंशत. सत्य है। नि सन्देह विरोधी दल का कर्तव्य है कि वह संदिग्ध प्रश्नो पर पूर्ण विवाद करे और शासन के संदिग्ध कार्यों की पूरी-पूरी जाच करवाये। परन्तु अल्पमत दल के आन्तरिक मतभेदो और राष्ट्रपति तथा बहुमत दल के पारस्परिक विरोधो के कारण विरोधी दल उलझन मे फंस जाता है। प्रत्येक दल के कुछ सदस्य

अधिकतर प्रश्नो पर अपने ही दल के विरुद्ध मत देने को तैयार रहते है । अल्पमत दल के अतिनिष्ठावान सदस्य भी वहुधा यह सोचने लगते है कि हमे राष्ट्रपति का या उसके दल का विरोध करना चाहिए या नही ।

सन् १९३३ से सन् १९५२ तक रिपब्लिकनो की नीति साधारणतया राष्ट्रपति का विरोध करने की थी । जव राष्ट्रपति को कांग्रेस मे किसी कठिनाई का सामना करना पडता था तव रिपब्लिकन मत-विभाजन मे दक्षिण के डिमोक्रेटो का साथ दिया करते थे, जो राष्ट्रपति के अपने ही दल मे उसके विरोधी थे । वहुत समय तक इस नीति का चुनावो की हार जीत पर कोई प्रभाव नही पडा, क्योकि जनता कांग्रेस के डिमोक्रेटिक दल की अपेक्षा राष्ट्रपति की पक्षपाती अधिक थी । अन्त मे जाकर यह नीति सफल तभी हुई जव मतदाता शासन की आलोचना से प्रभावित होने लगे ।

जव राष्ट्रपति को ऐसी कांग्रेस का सामना करना पडता है जो कि विरोधी दल के नियन्त्रण मे हो तव कांग्रेस और ह्वाइट हाउस का साधारण विरोध तीव्र रूप धारण कर लेता है । परन्तु इसकी भी सीमा है । कुछेक "पागल" सदस्यो को छोड कर कोई भी राजनीतिज्ञ राष्ट्रपति के विरोध मे युद्ध को इतना लम्बा नही खीचता कि उससे राष्ट्र की सुरक्षा ही जोखिम मे पड जाय । कानूनन राष्ट्रपति का विरोध करनेवाली कांग्रेस को अधिकार होता है कि वह शासन का व्यय अस्वीकृत कर दे, और विरोधी सेनेट चाहे तो राष्ट्रपति के मन्त्रिमण्डल की नियुक्ति अस्वीकृत कर सकती है, परन्तु अन्तिम परिणाम की दृष्टि से कांग्रेस के समझदार सदस्य चरम सीमा तक जाना अच्छी राजनीति नही समझते । फलत युद्ध सर्वग्रासी नही होने पाता ।

उदाहरणार्थ, श्री ट्रूमन को अस्सीवी कांग्रेस से मार्शल योजना स्वीकृत कराने मे सफलता मिल गयी थी, क्योकि रिपब्लिकनो के नेता सेनेटर वैन्डनवर्ग ने अपनी पार्टी का मार्ग-प्रदर्शन बुद्धिमता से किया था । उसने अपने दल को समझाया कि ऐसे मामने पर लडाई ठानना उचित नही जिससे उसे लाभ कम और हानि अधिक हो सकती है । यदि यह योजना अस्वीकृत हो जाती और इटली मे सन् १९४८ के चुनावो मे कम्यूनिस्ट पार्टी जीत जाती तो संयुक्त राज्य अमेरिका मे इटली के संकट के लिए

उत्तरदायी उन लोगो को ठहराया जाता जिन्होने मार्शल योजना को स्वीकृत नही होने दिया था।

परन्तु आन्तरिक मामलो मे अस्सीवी कांग्रेस के नियन्त्रण-कर्त्ता रिपब्लिकनो और डिमोक्रेट राष्ट्रपति मे जो आतंक-युद्ध छिडा रहता था वह कोई छोटा-मोटा नही था। राष्ट्रपति चाहता था कि जो प्रस्ताव कुछ भी लोक-प्रिय हो उन्हे कांग्रेस पास कर दे। इनमे कुछ प्रस्ताव ऐसे भी थे जिन्हे शायद डिमोक्रेटिक कांग्रेस भी पास न करती। तब रिपब्लिकन कांग्रेस बहुत से डिमोक्रेटो की सहायता से श्री ट्रूमन के प्रत्येक प्रस्ताव को अस्वीकृत करने लगी तब उनको आन्दोलन करने के लिए एक नया आधार मिल गया। फल यह हुआ कि यद्यपि रिपब्लिकन श्री ट्रूमन की अधिकतर नीतियो को रोकने मे सफल हो गए परन्तु उनका दोष ट्रूमन पर नही डाल सके, और वह चुनाव जीत गए।

इसके विपरीत, जब सन् १९३२ मे राष्ट्रपति हूवर को विरोधी कांग्रेस का सामना करना पडा तब डिमोक्रेटो ने मन्दी दूर करने के उसके अन्तिम प्रयत्नो को भी सफल नही होने दिया और उस असफलता का दोष भी उसके ही सिर पडा। ऐसी स्थिति इतनी अधिक बार हो चुकी है कि यह साधारण विश्वास सा बन गया है कि जिस राष्ट्रपति का दल मध्यवर्ती निर्वाचन मे कांग्रेस पर से अपना नियन्त्रण खो देगा, वह दो वर्ष पश्चात् के चुनाव मे भी अवश्य हार जायगा।

यह कुछ विचित्र बात लगती है कि कांग्रेस और राष्ट्रपति के संघर्ष की, दोनो पार्टियो के बीच के निरन्तर संघर्ष टक्कर होती रहने पर भी, शासन अपने सभी कार्य करवा लेता है। कारण यह है कि यहाँ संघर्ष के जिन रूपो का वर्णन किया गया है वह राजनीतिक पक्ष का महत्व प्रकट करने के लिए ही किया गया है, परन्तु बहुत से प्रभाव ऐसे होते है जिनका फल अन्त मे परस्पर सम्मति और व्यावहारिक कार्यवाही के रूप मे प्रकट होता है। ऐसा एक प्रभाव यह तथ्य है कि दोनो ही दलो मे उदार और अनुदार विचारो के लोग होते हैं। राष्ट्रपति को सदा विरोधी दल से भी कुछ न कुछ सहायता मिल जाती है। यह चाहे तर्क-विरुद्ध प्रतीत होता हो, परन्तु इसके

कारण विरोधी दलो मे सर्वग्रासी युद्ध नही होने पाता। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जो लोग कांग्रेस मे नेता के पद तक पहुँचते हैं उनमे बहुसंख्या ऐसे व्यवहार-निपुण राजनीतिज्ञो की होती है जो समझौते की कला मे कुशलता के कारण ही शक्ति प्राप्त किये होते है।

अध्याय ६

कॉंग्रेस की कार्य-प्रणाली

प्रति दो वर्ष पश्चात् नयी कांग्रेस चुनी जाती है। उदाहरणार्थ, बयासीवी कांग्रेस सन् १९५० मे और तिरासीवी सन् १९५२ मे चुनी गई थी। प्रत्येक नये निर्वाचन मे 'हाउस' के सब और 'सिनेट' के एक तिहाई सदस्य चुने जाते हैं।

कांग्रेस का अधिवेशन वर्ष मे कम से कम एक बार अवश्य होना चाहिए। इसकी बैठक ३ जनवरी को नियम-पूर्वक होती है। नयी कांग्रेस अपने प्रथम अधिवेशन मे अपना 'संगठन' करती, अर्थात् बहुमत दल मे से अपने पदाधिकारी चुनती और समितियो के अध्यक्ष तथा सदस्य नियुक्त करती है।

सेनेट का अध्यक्ष संयुक्त राज्य अमेरिका का उपराष्ट्रपति होता है और मत-विभाजन के समय पक्ष-विपक्ष मे समान मत आने पर निर्णायक मत देता है। उसके अन्य कर्तव्य अनिश्चित है। 'ह्वाइट-हाउस' चाहे तो उपराष्ट्रपति से सेनेट के साथ सम्पर्क रखने का काम ले सकता है अथवा उसे मन्त्रिमण्डल की बैठक मे सम्मिलित रखकर उसे राष्ट्रपति के कर्तव्यो का निर्वाह करने का अभ्यास भी करवा सकता है। जो उपराष्ट्रपति पहले सेनेटर रह चुका हो वह कभी-कभी अपने भूतपूर्व साथियो को प्रभावित भी अच्छी तरह कर सकता है।

सेनेट एक स्थानापन्न अध्यक्ष भी चुन लेती है, जो उपराष्ट्रपति की अनुपस्थिति मे कार्य करता है। सेनेट के अन्य निर्वाचित पदाधिकारी 'सेक्रेटरी' और 'सारजेण्ट-एट-आर्म्स' होते है, जो उसका रोजाना का काम चलाते हैं। उनके

अतिरिक्त पादरी, और बहुमत तथा अल्पमत दलो के सेक्रेटरी भी होते हैं। यदि निर्वाचन मे राजनीतिक काया पलट ही न हो जाय तो समितियो के प्रधान आदि, सेनेट के अधिकतर पदाधिकारी, पुरानी कांग्रेस के ही चलते रहते है।

पदाधिकारियो, समितियो के अध्यक्षो, और बहुमत-दल की समिति के सदस्यों को बहुमत-दल का 'कॉकस' नामज़द करता है। साधारणतया, उन सबको पूरी सेनेट प्रथम बार के निर्वाचन मे ही चुन लेती है। अल्पमत-दल अपने जिन सदस्यो को समितियो मे रखवाना चाहता है उनका चुनाव वह स्वयं करता है। चुनाव के समय सदस्यो के पुरानेपन का लिहाज बहुत अधिक किया जाता है। किसी समिति का अध्यक्ष प्राय. सदा बहुमत-दल का वही सदस्य होता है। जो उस समिति मे सबसे अधिक समय तक काम कर चुका होता है। पुरानेपन के कारण ही किसी-किसी सेनेटर को अपनी समिति के पदो पर नियुक्तियो का अधिकार भी प्राप्त हो जाता है।

'हाउस' का अध्यक्ष स्पीकर कहलाता है। उनका निर्वाचन सदस्य करते हैं और वह सदा 'हाउस' के बहुमत-दल का कोई व्यक्ति होता है। यदि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का देहान्त हो जाय तो राष्ट्रपति का प्रथम उत्तराधिकारी 'स्पीकर' ही होता है। कांग्रेस मे सबसे अधिक शक्तिशाली पद उसका ही है।

यद्यपि इस पद का नाम इंगलैण्ड की परम्परा से लिया गया है, परन्तु स्पीकर के काम वही नही हैं जो इंगलैंड मे। इंगलैण्ड का 'हाउस ऑव् कामन्स' अपने 'स्पीकर' का चुनाव, अध्यक्षीय कार्य मे उसकी निष्पक्षता और योग्यता के कारण करता है। परन्तु सयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस मे स्पीकर दलीय नियन्त्रण का एक सबसे महत्वपूर्ण साधन होता है। उदाहरणार्थ, कांग्रेस के दोनो सदनो मे विचार विनिमय के लिए हाउस की समितियो के सदस्य वही नियुक्त करता है। इन सदस्यो का काम यह होता है कि सेनेट के अपने समान प्रतिनिधियो के साथ मिल कर हाउस और सेनेट के एक ही विषय के बिलो मे अन्तर को दूर कर दे। इनकी

संयुक्त रचना को साधारणतया दोनो सदन स्वीकार कर लेते हैं, और इस कारण बहुत से अति महत्वपूर्ण प्रश्नो मे से कइयो का निर्णय इस बात पर निर्भर रहता है कि संयुक्त विचार-विनिमय के लिए स्पीकर किसे चुनता है।

स्पीकर अपनी इच्छानुसार निर्णय कर सकता है कि सदन मे किसे भाषण करने दिया जाय और किसे नही। यदि यह सन्देह हो कि किसी बिल पर विचार करने के लिए किन्ही दो समितियो मे से कौन सी उपयुक्त है तो स्पीकर निर्णय दे सकता है कि बिल किसके सपुर्द किया जाय, और इस प्रकार वह बिल उसकी समर्थक या विरोधी समिति के हाथ मे पहुँच सकता है। स्पीकर चाहे तो अपने स्थान पर किसी को नियुक्त करके स्वयं सभा मे सम्मिलित होकर विवाद मे भाग ले सकता है।

सन् १६१० से पूर्व तक, मेन राज्य के टॉमस बी. रीड और इलिनॉय राज्य के 'अंकल जो' कैनन के हाथो मे पडकर स्पीकर का कार्य कठोर लौह शासन मे परिणत हो गया था। स्थायी समितियो के सब सदस्यो की नियुक्ति स्पीकर कैनन स्वयं करता था। नियम-समिति का अध्यक्ष भी वह स्वयं ही रहता था। इस समिति को अधिकार था कि वह चाहती तो किसी बिल पर काररवाई को रोक सकती थी। सन् १६१० मे डिमोक्रेट और पश्चिम के 'विद्रोही' रिपब्लिकन मिलकर, स्पीकर को नियम-समिति से पृथक् रखने मे सफल हो गये, और बाद को उन्होने उससे स्थायी-समितिया नियुक्त करने का अधिकार भी छीन लिया।

सेनेट के समान, हाउस मे भी प्राय. मुख्य पदो पर, विशेषतः समितियो के अध्यक्षो और अधिकारी समितियो के सदस्यो की नियुक्तिया करते हुए पुरानेपन का अत्यधिक विचार किया जाता है। इसका फल यह होता है कि कांग्रेस मे प्राय अति महत्वपूर्ण पदो पर ऐसे बूढे व्यक्ति नियुक्त हो जाते हैं जो अपने 'सुरक्षित' राज्यो से अपने जीवन-भर बार-बार निर्वाचित होकर आते रहते हैं।

पदाधिकारियो और समितियो के अतिरिक्त, सेनेट और हाउस दोनो मे दलो के अपने-अपने संगठन होते हैं, और उनका कानून बनाने पर प्रभावशाली नियन्त्रण रहता है।

प्रत्येक सदन मे प्रत्येक दल का संगठन होता है। डिमोक्रेट उसे 'कॉकस' कहते है और रिपब्लिकन "कॉनफरेन्स"। दल अपने सदस्यो को न केवल अधिकृत पदो के लिए नामजद करते हैं, वे सदन के लिए अपना नेता और सहायक नेता अर्थात् सचेतक भी चुनते है। सदन का नेता सदन मे अपने दल की कार्य-शैली का निर्देशक होता है। वही निश्चय करता है कि कौन सदस्य कब क्या बोलेगा, और काम को शीघ्र निबटाया जाय या लम्बा खीचा जाय। सचेतक सब सदस्यों को अपनी दृष्टि मे रखता है और जब 'वोट' के लिए उनकी आवश्यकता होती है तब उन्हे ले आता है।

बहुमत-दल की 'हाउस' मे एक मार्ग-निर्देशक समिति भी होती है। सदन का नेता ही उसका भी नेता होता है। वह नियम-समिति के निकट सम्पर्क मे रहती है, और दल की 'कांनफरेन्स' का 'क कस' जिस बिल का समर्थन करने का निश्चय करती है उसे आगे बढाने का यत्न करती है। सेनेट मे दोनो दलो की मार्ग-निर्देशक समितियाँ होती हैं, परन्तु उनका बल थोडा होता है, क्योकि सेनेटर सुगमता से वश में नही आते।

दलो के संगठन का विधि-निर्माण पर प्रबल प्रभाव होता है, यद्यपि वे सदा ही उसका नियन्त्रण नही कर पाते। जब कोई बात 'दल' की बात बन जाती है, तब यह प्रभाव विशेष रूप से प्रकट होता है क्योकि प्रत्येक दल दूसरे दल के विरोध मे अपना मार्ग निश्चित कर लेता है। ऐसे मामलो में दल के संगठन विवाद के संचालन तथा सदस्यो को एकत्र करने के द्वारा सहायता करते हैं। परन्तु बहुधा विचाराधीन प्रश्न के कारण दोनो दलो में आन्तरिक मतभेद खडे हो जाते हैं, और तब दलीय सगठन अधिक पुराने और प्रभावशाली सदस्यो की इच्छा पूरी करने का यत्न करते हैं। यह कोई असाधारण बात नही कि दोनो दलो का नियन्त्रण करने वाले, दोनो दलो के युवक सदस्यो के विरुद्ध अनियमित रूप से मिल कर एक हो जायं। उदाहरणार्थ, श्री ट्रुमैन के समय दोनो दलो के पुराने लोगो मे राष्ट्रपति के विरुद्ध परस्पर सहयोग के चिह्न बहुधा दृष्टिगोचर हुआ करते थे।

जो यात्री वाशिंगटन जाते और सेनेट या हाउस की कार्रवाई दर्शकों की गैलरी मे बैठकर देखते हैं वे सदन का दृश्य देख कर बहुधा स्तब्ध रह जाते है। साधारणतया जब किसी सदस्य का भाषण हो रहा होता है तब अधिकतर आसन खाली पडे रहते है। जो सदस्य उपस्थित होते है वे भी कुछ पढते रहते या घूम फिरकर एक दूसरे के साथ बात-चीत करते रहते है। कुछेक का ध्यान स्पीकर पर लगा रहता है और वे बार-बार उसे टोकते रहते है, कभी-कभी उसका पक्ष लेने के लिए, परन्तु अधिकतर उसकी युक्तियो को काटने के लिए। फिर मत विभाजन या 'कोरम' के लिए सब सदस्यो को नाम लेकर पुकारा जाता है। तब सारा भवन और कार्यालयो की इमारते घण्टियो से गूंज जाती हैं और सदस्य अपने नाम की पुकार का उत्तर देने के लिए आकर तुरन्त एकत्र होने लगते है। शीघ्र ही वे पुनः बिखर जाते हैं, और फिर उदासीनता का साधारण वातावरण छा जाता है।

प्राय. सभी सेनेटरो और कांग्रेस-सदस्यो को बहुत समय तक काम करना पडता है। उनके उत्सुक निर्वाचक उन्हे इतना परेशान किये रहते हैं कि किसी शान्त व्यक्ति का तो धीरज ही छूट जाय। सदन के दृश्य से कांग्रेस कार्य-प्रणाली का ठीक-ठीक चित्र प्रकट नही होता। वहा का अधिकतर समय किसी ऐसे बडे विवाद मे व्यतीत नही होता जिसका राष्ट्र के सब लोगो पर अथवा कांग्रेस के कुछ ही सदस्यो पर प्रभाव पडे। अधिकतर समय सदन ऐसा स्थान बना रहता है जहां कि सदस्य अपने नाम की पुकार का जवाब देने, लेखे पर आने के लिए एकाध भाषण कर देने या किसी दूसरे सदस्य के भाषण मे टोका-टाकी करने, या कभी-कभी ऐसे सदस्यो से दो बाते करने के लिए जाता है जिनकी सहायता की उसे किसी आगामी कानून के सम्बन्ध में अपेक्षा हो। सदन एक बाजार है परन्तु जो माल वहां बिकता है वह कही और ही तैयार होता है, मुख्यतया समितियो और गोष्ठी-कक्षो मे।

सेनेट और हाउस, दोनो मे विधि-निर्माण के मुख्य-मुख्य विषयो की स्थायी समितिया होती हैं। सन् १९४६ मे कांग्रेस का पुनर्गठन हुआ था और तब सेनेट की स्थायी समितियाँ घटाकर उससे १५ और हाउस की ४८ से १९ कर दी गई थी।

उद्देश्य यह था कि एक ही काम कई-कई समितियो मे बंटा न रहे और प्रत्येक सदस्य कम समितियो से सम्बद्ध रहकर अपना ध्यान अपने काम पर अधिक केन्द्रित कर सके। यह सुधार उतना परिवर्तनकारी नही निकला जितना कि यह तब लगता था, क्योकि समितियाँ तुरन्त ही नयी-नयी उपसमितियाँ नियुक्त करने लगी।

अनेक संयुक्त-समितियाँ भी होती हैं, जो दोनो सदनो के सदस्यो से मिलकर बनती है। ये छपाई और आर्थिक विवरण आदि अपेक्षाकृत ऐसे शुष्क विषय पर विचार करती है जिनमे कि महत्वाकाक्षी राजनीतिज्ञो को राजनीतिक क्षेत्र में आगे बढने की दृष्टि से उतना आकर्षण नही लगता जितना कि टैक्स लगाने अथवा सशस्त्र सेनाओ आदि के कामो मे। संयुक्त-समितियाँ विचार की पुनरावृत्ति से बचती हैं, परन्तु जो विषय राजनीतिक विवाद मे उलझे हुए होते हैं उन पर उन्ही तर्कों से दो बार पृथक विचार का समर्थन किया जाता है जो कि कांग्रेस मे दो सदन रखने के समर्थन मे प्रस्तुत किये जाते हैं।

सन् १९४६ में पुनर्गठन के समय, कांग्रेस ने यह निश्चय किया था कि वह विशेष समितियो की नियुक्तियो मे अपव्यय नही करेगी। पिछले वर्षो में उनकी नियुक्तियाँ बहुत हुई थी, विशेष जाच के लिए। उनका एक लाभ यह था कि जो सदस्य कांग्रेस को किसी प्रश्न की जाँच के लिए सहमत कर लेता था, साधारणतः वही समिति का अध्यक्ष बना दिया जाता था और उन पर काम करने का भरोसा किया जा सकता था।

उदाहरणार्थ, सेनेटर ट्रूमन द्वितीय विश्व-युद्ध के संचालन की जाच करने के लिए नियुक्त एक समिति के अध्यक्ष थे और उन्होने अयोग्यता अथवा पक्ष पात के अनेक मामलो को सफलता पूर्वक रोक दिया अथवा नही होने दिया था। इसी काम के कारण उन्होंने उपराष्ट्रपति का पद अर्जित किया और 'ह्वाइट हाउस' मे पहुँच गए।

यद्यपि सन् १९४६ के पश्चात् विशेष समितिया कम नियुक्त की गई हैं, तथापि विशेष अथवा स्थायी उपसमितियाँ इसी प्रकार के कामो के लिए कभी-कभी नियुक्त होती रही हैं।

कानून बनाने की साधारण विधि मे समितियो को बहुत समय तक भारी अध्ययन करना पडता है। बहुत से महत्वपूर्ण बिल राष्ट्रपति द्वारा सुझाये जाते हैं, और जिस विभाग का उनसे सर्वाधिक सम्बन्ध होता है वह प्राय. प्रस्तावित विधेयक का मसविदा भेज देता है। परन्तु यह मसविदा प्रारम्भिक मात्र होता है। जिस समिति के सुपुर्द कोई विधेयक किया जाता है वह उसे कांग्रेस के सामने भेजने से पहले अपना सन्तोष भली प्रकार कर लेती है कि वह अपने अन्तिम मसविदे के एक-एक शब्द की जिम्मेवारी ले सकती है या नही।

समितियाँ बहुधा अन्य लोगो के भी विचार सुनती हैं। यह सुनवाई विषय के अनुसार कभी गुप्त होती है, कभी खुली। इन सुनवाइयो मे शासन-विभागो के अध्यक्षो और उनके विशेषज्ञो से भी पूछताछ की जाती है, परन्तु इनसे सदा सब बातें जानने मे सफलता प्राप्त नही होती, क्योंकि साधारणतया कांग्रेस के सदस्य विशेषज्ञो की अपेक्षा उस विषय से कम परिचित होते हैं। यही बात 'लाबिइस्टो' अर्थात् किसी बिल मे रुचि रखनेवाले व्यक्तियो द्वारा किए हुए वकीलो से पूछताछ के विषय मे कही जा सकती है। 'लाबिइस्टो' का मुख्य काम समितियो के सामने विवाद करने का होता है, परन्तु 'लाबिइस्ट' मेलजोल बढ़ाने मे भी निपुण होते हैं और वे बहुधा कांग्रेस के सदस्यों के साथ बातचीत करने के अवसर निकाल लेते है। सरकारी कर्मचारियो और 'लाबिइस्टो', दोनो को, कुछ सन्देह की दृष्टि से देखा जाता है। परन्तु उनकी गवाहियो मे बहुत-सी उपयोगी और सच्ची सूचनाएं भी रहती हैं, नि.सन्देह उनका लक्ष्य उस पक्ष को लाभ पहुंचाना ही रहता है जिसका वे समर्थन कर रहे होते हैं। समितिया जो सामग्री संग्रह करती है उसमे से बहुत-सी का महत्व राजनीतिक होता है कि कौन बिल को पास कराना और कौन रोकना चाहता है, और किस पक्ष का राजनीतिक प्रभाव सबसे अधिक है।

कांग्रेस के बहुत कम सदस्यो को राजनीतिक विषयो के अतिरिक्त अन्य किसी का विशेषज्ञ बनने का समय मिलता है, और चूंकि अब शासन के काम अधिकाधिक पेचीदा होते जाते हैं, इसलिए कांग्रेस भी यह अनुभव करने लगी है कि अपने मार्ग प्रदर्शन के लिए उसे भी विशेषज्ञो की अपेक्षा है। अधिकतर समितियो के पास अपने ही कर्मचारी होते हैं जिनमे एक या अनेक विशेषज्ञ भी सम्मिलित रहते हैं।

प्रत्येक सदन का एक विधि-विशेषज्ञ कार्यालय होता है। वह समितियो और सदस्यो के लिए विधेयको के मसविदे बना देता है और यह ध्यान रखता है कि नये कानून की प्रत्येक बात पहले से विद्यमान कानूनो के साथ संगत हो।

हाल के वर्षो मे कांग्रेस ने अपने पुस्तकालय में कानूनों का हवाला अथवा प्रतीक बतलानेवाले विशेषज्ञो की सेवाएं बहुत बढ़ा ली है। इनमे अनेक विषयो के विशेषज्ञ भी सम्मिलित हैं। उनसे आशा की जाती है कि वे सब सम्बद्ध तथ्यो की सूचना बिना किसी राजनीतिक पक्षपात के देते रहेगे। कांग्रेस के कुछ सदस्य इस सुविधा का उपयोग अपने भाषणो अथवा समिति के काम के लिए तथ्यो की खोज करते रहने मे करते हैं।

कांग्रेस अपना काम किस प्रकार करती है, इस विषय के किसी भी विवरण को पढ या सुनकर यही प्रतीत होगा कि वह किसी भी मामले में ठीक परिणाम पर नही पहुँच सकती, परन्तु वह बहुधा वही काम करती है जिसकी उस समय आवश्यकता होती है और जिसे लोग चाहते हैं। सन् १९३३ के पश्चात् कांग्रेस को संसार मे हलचल मचा देने वाले जो निर्णय करने पड़े उनकी संख्या उसके प्रत्येक अधिवेशन मे निरन्तर बढती चली गई। परन्तु यह असम्भव ही लगता है कि कांग्रेस के बुद्धिमान् और देश भक्त सदस्य इन सब महत्वपूर्ण समस्याओ के पूर्ण ज्ञाता बन गये होगे, क्योकि उनपर कार्य का अत्याधिक भार रहता है। फिर भी 'न्यू डील' (राष्ट्रपति रूजवेल्ट की आर्थिक नीति का नाम) के प्रारम्भिक वर्षो से लेकर 'मार्शल योजना' और रक्षा के नवीन कार्यक्रम तक जितने भी नये कानून बने उनका बहुत बडा अनुपात सफल रहा और उसे दोनो दलो ने स्वीकार कर लिया। कही न कही से कांग्रेस का मार्ग-प्रदर्शन होता ही रहता है। ऐसा कहे तो शायद ठीक ही होगा कि मुख्य मार्ग-प्रदर्शक शक्ति राजनीति की वह पद्धति है जिसके द्वारा अमेरिकी जनता अपनी आवश्यकताओ, इच्छाओ और निर्णयो को प्रकट करती है। कांग्रेस की कार्य-प्रणाली मे ऊपर-ऊपर से जो अनवस्था दिखलाई पडती है उस के बावजूद वह जनता की इच्छा को शासन के कार्यो का रूप देने का एक नाजुक यन्त्र है।

परन्तु कांग्रेस की आयोग्यता की आलोचना निरन्तर होती रहती है और कुछ अधिक समय बीत जाने पर कांग्रेस को भी अपना सुधार आप करने की धुन सवार होती रहती है। इस प्रकार की सबसे अन्तिम धुन उसे सन् १९४६ मे सवार हुई थी। यह सेनेटर लाफोलेट और कांग्रेस-सदस्य मोनरोनी की अध्यक्षता मे नियुक्त एक विशेष संयुक्त समिति द्वारा अमेरिकी-राजनीति विज्ञान-संघ की एक रिपोर्ट के अध्ययन के पश्चात् हुई थी। सन् १९४६ मे पुनर्गठन मे समितियों की संख्या तो कम कर दी गई थी, परन्तु 'टेकनिकल' कर्मचारियो की संख्या बढा दी गई, सदस्यो के वेतन ऊँचे कर दिये गए, और सरकार के विरुद्ध छोटे-छोटे दावो तक का भुगतान करने के लिए प्रत्येक के सम्बन्ध मे एक पृथक् बिल (विधेयक) पास करने के क्षोभ-जनक काम से कांग्रेस को मुक्त कर दिया गया था। परन्तु इस पुनर्गठन की भी यह कहकर आलोचना की गई थी कि इससे सब आवश्यक सुधार तो हुए नही, और एक ऐसे अवसर को हाथ से निकल जाने दिया गया जो शायद पुन शीघ्र नही आयेगा।

पुराने सदस्यो का लिहाज करने की प्रथा हृदय से नापसन्द की जाती है, विशेषत. उदार विचार के लोगो द्वारा, क्योंकि दोनो ही दलो मे वृद्धतम व्यक्तियों को प्रवृत्ति अपरिवर्तन वादी होती है। ये बूढे व्यक्ति अधिकार के पदो पर बैठ तो जाते है, परन्तु कभी-कभी किसी महत्वपूर्ण समिति के अध्यक्ष के निर्बल और असमर्थ होने का भयंकर उदाहरण भी सामने आ जाता है।

पुराने सदस्यो का लिहाज करने की प्रथा के पक्ष मे प्रधान तर्क यह दिया जाता है कि कांग्रेस का संगठन करते समय चुनाव की अधिकतर समस्याएं इससे स्वयमेव सुलझ जाती है। संगठन के समय बहुमत दल मे मतैक्य रहना आवश्यक है, क्योंकि सम्भव है कि उसका बहुमत अत्यल्प हो। यदि दल मे, साधन-तथा-कोश-समिति सरीखी किसी महत्वपूर्ण समिति का अध्यक्ष चुनने के समय मत भेद हो जाय तो व्यवहारत अल्पमत दल को ही उम्मीदवारो मे से किसी एक को चुन लेने का अवसर मिल जायगा। इस बात की सम्भावना बहुत कम प्रतीत होती है कि सेनेट और हाउस के नियमो का नियन्त्रण जिन व्यवहार-कुशल राजनीतिज्ञो के हाथ मे

है वे पुराने सदस्यो का लिहाज करने की प्रथा मे सुधार करना कभी पसन्द करेंगे।

एक और प्रथा जो कि बहुत समय से आलोचना का विषय बनी हुई है वह 'सेनेट' मे 'फिलिबस्टर' की अर्थात् अनन्त काल तक बे-लगाम बोलते चले जाने की है, जब कुछेक दृढ़-निश्चयी सेनेटर मिलकर किसी बिल को पास न होने देने की ठान लेते हैं। तब वे बारी-बारी अनिश्चित काल तक भाषण कर-करके उस बिल की हत्या कर देते है। उन्हे बिल पर विवाद तक नही करना पडता, क्योकि शेक्सपीयर की अथवा पाक-शास्त्र की किसी सर्वथा अप्रासंगिक पुस्तक को उच्च स्वर से बाचते चले जाना भी सेनेट के नियमो से संगत है।

सेनेट में 'क्लोचर' का भी एक नियम है, जिसके अनुसार दो-तिहाई के बहुमत से विवाद को बन्द करने का निर्णय किया जा सकता है, परन्तु इस नियम को दोनो दलो ने चतुरतापूर्वक अव्यवहार्य बना दिया है ; क्योकि वस्तुत. कोई भी दल 'फिलिबस्टर' का अधिकार छोडना नही चाहता।

'फिलिबस्टर' की आलोचना मे कहा जाता है कि उससे बहुमत के शासन के सिद्धान्त का घात होता है। नि सन्देह कोई भी व्यक्ति उस बिल के विरुद्ध 'फिलिबस्टर' का प्रयोग नही करेगा जिसके पक्ष मे बहुमत स्वयं ही मत देने के लिए तैयार न हो। इसके विपरीत, सेनेट का विश्वास है कि संघीय सिद्धान्त के अनुसार उन मामलो मे निरे बहुमत द्वारा शासन का होना उचित नही है जो कि अल्पसंख्यक राज्यो को सह्य न हो। अमेरिकी जनता का सदा से यह विश्वास रहा है कि बहुमत के शासन की सीमाएं होती हैं, बहुमत को शासन करने का अधिकार विशेषतया उसी स्थान पर होना चाहिए जहाँ उसका बहुमत हो। दक्षिणी कैरोलीना वाले न्यूयार्क वालो के बहुमत से शासित होना स्वभावतः पसन्द नही कर सकते। यह भी स्मरणीय है कि सेनेट का संगठन ही इसलिए किया गया था कि जनसंख्या के आधार पर निर्वाचित 'हाउस' के बहुमत का कांग्रेस मे सन्तुलन हो जाय। किसी राज्य मे मतदाता कितने हैं, इस बात का विचार किए बिना सेनेट मे प्रत्येक राज्य के दो मत होते हैं। यह व्यवस्था एकमात्र इस प्रयोजन से की गई थी कि छोटे राज्यो की बडे राज्यो के बहुमत से रक्षा हो सके। इसलिए यह आश्चर्य की बात

नही कि सेनेट की परम्परा मे ऐसे अल्पमत का उसके निरे संख्या-बल की अपेक्षा अधिक आदर किया जाय जो जिस प्रस्तावित नियन्त्रण को अत्याचारपूर्ण समझता हो उसका विरोध करने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार हो। इसलिए विवाद को सीमित करने का कोई सीधा और सरल नियम 'हाउस' के समान सेनेट द्वारा भी अपना लिए जाने की सम्भावना बहुत कम है।

प्रवन्ध के किसी साधारण मान से देखने पर भी सेनेट और हाउस की कार्य-कुशलता का स्तर निम्न है। उसे ऊँचा उठाने के लिए अनेक सुझाव दिये जा चुके हैं। एक सुझाव यह है कि दोनो सदनो मे विजली के मत-विभाजन पट्ट लगा दिए जायं, जैसे कई राज्यो के विधानमण्डलो मे लगे भी हुए हैं। प्रत्येक सदस्य का नाम पुकार कर लाने में समय का भारी नाश होता है, विशेषत. 'हाउस' मे। इस पद्धति के पक्ष मे कभी-कभी यह कहा जाता है कि उस समय का उपयोग सदस्य परस्पर विचार-विनिमय के लिए कर लेते हैं परन्तु इस उपयोग का मूल्य प्राय. कुछ नही है। विजली का मत-विभाजन-पट्ट लग जाने पर सदस्य एक साथ मत दे सकेंगे, और पट्ट से न केवल उसका परिणाम तुरन्त प्रकट हो जायगा, उसका लेखा भी आप से आप सुरक्षित रहेगा।

एक और सुझाव यह है कि कोलम्बिया जिले को स्वशासन का अधिकार दे दिया जाय। इस समय इस जिले के प्रतिनिधियो का वोर्ड, जिले की सरकार, राज्य-विधान सभा, और संघीय विधान-मण्डल, सव कुछ कांग्रेस ही वनी हुई है। वाशिंगटन के निवासियो का नाम यदि जिले से वाहर कही लेखवद्ध न हो और वे वहा मत न देते हो तो वे मत दे ही नही सकते।

वाशिंगटन के लिए सेनेट और हाउस दोनो की, जिला समितियां होती हैं। स्थानीय करो के नियम भी कांग्रेस वनाती और यह निर्णय भी वही करती है कि वीसवी सडक चौडी की जाय या नही और नाइयो की दुकानो का निरीक्षण किया जाय तो किस प्रकार। ये छोटे-छोटे काम उस विधान मण्डल के योग्य नही जान पडते जिसे संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ अमेरिका के सहयोग अथवा उत्तरी-अतलान्तिक-संधि-संगठन के गम्भीर प्रश्नो का निर्णय करना हो।

सन् १८८७ में जब इस जिले मे किसी स्थानीय स्वशासन की समाप्ति की गई थी तब उसका उद्देश्य सुधार करना था। उन दिनो संयुक्त राज्य अमेरिका में नगरो के शासन मे भ्रष्टाचार इतना अधिक फैल चुका था कि आज उसका उदाहरण किसी भी नगर मे नही मिल सकता। जो लोग कांग्रेस को जिले के छोटे-मोटे कामों के बोझ से मुक्त करने का सुझाव देते हैं वे कहते हैं कि आधुनिक उपायो द्वारा किसी भी नगर का काममकाज उसका अपना ही शासन-संगठन ईमानदारी और कुशलता से चला सकता है।

कांग्रेस का कार्य निरन्तर न चल सकने और ध्यान बढते रहने का सब से बडा कारण यात्रियो का लम्बा तांता है जो कि राज्यो से वाशिंगटन जाते रहते हैं। अमेरिकनो को अपने राष्ट्र की राजधानी देखने का शौक है। वे चाहते हैं कि उनके राज्य के कांग्रेस-सदस्य उनको 'हाउस' के भोजनालय मे भोजन करावे, उनको नाटक का टिकट खरीद दें, और उनके लिए होटल मे निवास का स्थान खोज दे। हाई स्कूल की बास्केट-बॉल-टीम चाहती है कि हमारे राज्य का सेनेटर ऐसी व्यवस्था कर दे कि राष्ट्रपति 'ह्वाइट हाऊस' की सीढियो पर टीम के साथ खडा होकर फोटो खिचवा लें। एक बार एक सेनेटर ने कुछ दृढ होकर विद्यार्थियो को समझाया कि राष्ट्रपति आजकल युद्ध संचालन के कार्य मे अत्यन्त व्यस्त हैं, और तुम्हारे साथ फोटो खिचवाने की फुरसत नही है। तुरन्त ही एक अन्य सेनेटर अपने साथी से बाजी मार ले जाने के लिए तैयार हो गया। उसने कहा कि 'ह्वाइट-हाउस' में इस बात की व्यवस्था मैं करूंगा।

कोई भी मतदाताओ को किसी प्रकार यह समझाने का साहस नही करता कि अपने प्रतिनिधियो को परेशान मत करो। सब डरते हैं कि आगामी चुनाव में कही मतदाता उनकी उपेक्षा न कर दें। वस्तुत. कांग्रेस के सदस्य अपने राज्य के लोगों के साथ सम्पर्क को इतना मूल्यवान मानते हैं कि जब कांग्रेस का अधिवेशन नहीं हो रहा होता तब वे स्वयं अपने राज्य मे जाकर अधिक लोगो से मिलना पसन्द करते हैं। मिलने वालो के बढते हुए प्रवाह को सम्भालने का उत्तम उपाय यह प्रतीत होता है कि नियमित काम की देखभाल करने के लिए अधिक कर्मचारी रख लिये जायं, जिससे कांग्रेस सदस्यों को मिलने-जुलने का समय मिल सके। जो सदस्य

अपने दफ्तर से हाउस को जाते हुए गली में अपने दोनों कानों में दो [illegible] के तकाजों के गूंजता रहने पर भी 'मैं अपना मत स्थिर दूंगा' यह निर्णय करने का आनन्द नहीं ले सकता। वह शायद या तो मर जायगा और या अपने पद का [illegible] कर अपना स्थान किसी अधिक सहिष्णु तथा धैर्यशाली व्यक्ति के [illegible] कर देगा।

कांग्रेस मे भारी हल्ला-गुल्ला मचा रहता है, और फिर भी वह उतना काम भुगता लेती है जितना कि जनता उससे कराना चाहती है, [illegible] है कि सहज राजनीतिज्ञों का काम करने का ढंग ही यह है। [illegible] जनता का प्रतिनिधित्व करता है जैसी उसके निर्वाचन क्षेत्र में बसती है। [illegible] उसके कारण उसकी शक्ति बढ़ जाती है। वह जो हल्ला-गुल्ला करता है [illegible] अमेरिकी हल्ला-गुल्ला होता है। विदेशी लोग उसे देख कर आश्चर्य करते हैं, [illegible] उनके देशो मे भी अन्य प्रकार का हल्ला-गुल्ला होता ही होगा। परन्तु [illegible] कुछ हैं, अमेरिकी लोग उन आपत्तियों और समस्याओं का सामना [illegible] बिना किसी दुष्परिणाम के कर रहे हैं जिनकी उनके विधान-निर्माताओं ने [illegible] भी नही की होगी। आशा है कि संयुक्त राज्य अमेरिका जो सफलता प्राप्त करेगा उससे न केवल अमेरिकियों को संतोष होगा, वह अन्य स्वतन्त्र लोगों के लिए [illegible] होगी। अमेरिकी कांग्रेस जिस जनता की प्रतिनिधि है, उसके गुण और दोष भी उसमे पूर्ण मात्रा मे विद्यमान हैं, और अन्ततोगत्वा वह सफलता भी उतनी ही मात्रा मे प्राप्त कर लेती है।

अध्याय ७

संघीय न्यायालय

संघोय न्यायालयो और कुछ न्यायालयो के समान काम करने वाली "रेग्यूलेटिंग एजन्सियो" का काम कानून के अनुसार केवल मुकदमो का निर्णय कर देना नही, उससे भी कुछ अधिक है। लिखित कानून के शब्द ही कानून का सर्वस्व नही हो सकते। नये-नये प्रश्न खडे होते रहते हैं और कानून को उनसे भी सुलझना पडता है। कभी-कभी कांग्रेस नये प्रश्नो का हल करने के लिए नये कानून बना देती है। परन्तु कभी-कभी न्यायालयो को पुराने कानूनो मे नया अर्थ दिखाई पड जाता है और न्यायालय उसे पुराने कानून की वास्तविक भावना से संगत घोषित कर देते है।

किस व्यवस्था को माना जाय और किसको नही, यह निर्णय होता तो है राजनीतिक, परन्तु यह निर्भर करता है मुख्यतया न्यायाधीशो की वैयक्तिक मनोवृत्ति पर, विशेषत. 'सुप्रीम कोर्ट' अर्थात् सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की मनोवृत्ति पर। ये सज्जन राजनीति से सर्वथा सम्पर्क रहित होते हैं, क्योकि इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, जो अपने पद तक चुनाव जीत कर पहुंचा होता है; और सर्वोच्च न्यायालय के एकात में बैठने पर भी इन पर अपने देशवासियो के नैतिक आदर्शों और राजनीतिक निर्णयो का प्रभाव पडता ही रहता है।

गणतन्त्र के आरम्भिक दिनो मे इस समस्या का सीधा सामना नही करना पड़ता था कि यदि शासन संविधान का उल्लंघन करे तो क्या करना चाहिए।

संविधान को "देश के उच्चतम कानून" के रूप मे अपनाया गया था और कांग्रेस का या राष्ट्रपति का कोई भी काम जो उसके विरुद्ध हो, सिद्धान्तत कानून नही हो सकता था। सन् १८९६ मे जेम्स ब्राइस ने कहा था—"जो काम वे अपने अधिकार से बाहर करते है वे अवैध हैं और उन्हे निम्नतम नागरिक भी अवैध मान सकता है, नही, उसे वैसा मानना चाहिए।" ब्राइस का विचार था कि किसी कानून को संविधान विरुद्ध ठहरा देने का सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार तर्क संगत और अनाक्रमणीय है। परन्तु इतिहास मे उस अधिकार पर विशेषज्ञो ने, एण्ड्र्यू जैक्सन और अब्राहम लिंकन ने भी, आक्रमण किया है। सन् १९३७ मे "न्यायालयो को भर डालने के विवाद" के समय इस अधिकार पर सन्देह प्रकट करने वालो ने बहुत ही गरमी दिखलायी थी।

औपनिवेशिक शासन मे ब्रिटश राजा के आज्ञा पत्र को आधार भूत कानून माना जाता था। उस समय भी न्यायालय कभी-कभी किसी कानून को आज्ञापत्र का उल्लंघनकारी होने के कारण अवैध ठहरा देते थे। राज्यो मे वही परम्परा चलती रही। सन् १७८६ मे रोड आइलैण्ड के उच्चतम न्यायालय ने राज्य के विधान मण्डल द्वारा स्वीकृत एक कानून को इस आधार पर अवैध ठहरा दिया था कि वह राज्य के संविधान का उल्लंघन करता था।

सन् १८०३ मे जब मुख्य न्यायाधीश जान मार्शल ने सुप्रीम कोर्ट अर्थात् सर्वोच्च न्यायालय का प्रथम निर्णय लिखकर कांग्रेस के एक काम को अवैध ठहराया तब वह परम्परागत तर्क के अनुसार एक अधिकार का प्रयोग कर रहे थे और वह उसे अपने कार्य का दृढ़ आधार मानते थे। उन्होने कहा था कि "यह सिद्धान्त कि संविधान का विरोधी कोई भी कार्य अवैध है, सब लिखित संविधानो के साथ तात्विक रूप से संलग्न होता है और इसलिए यह न्यायालय इसे अपने समाज का अन्यतम आधार भूत सिद्धान्त मानता है।"

अगले पचास वर्षो मे संविधान के उल्लंघनो का सामना करने के लिए एक और सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया। वह सिद्धान्त यह था कि किसी भी राज्य को अधिकार है कि वह जिस संघीय कानून को असंवैधानिक अथवा अस्वीकरणीय समझे उसे निषिद्ध घोषित कर दे। सन् १८२८ मे जान सी० कौल्हन ने साउथ

करोलीना राज्य के विधान मण्डल के लिए एक निबन्ध तैयार किया जो पीछे "साउथ करोलीना एक्सपोजिशन" अर्थात् 'साउथ करोलीना का विचार' कहलाया। उसमे उन्होने प्रतिपादित किया था कि संवैधानिक दृष्टि से संघीय शासन राज्यो का एजण्ट या कारिन्दा मात्र है। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कि जो भी कोई राज्य कांग्रेस के कार्यों से अप्रसन्न हो वह किसी संघीय कानून को निषिद्ध ठहराकर उसका अमल अपने यहां रोक सकता है। तब वह कानून 'असंवैधानिक' हो जाता है, और उस राज्य को उसे मानने के लिए बाधित तभी किया जा सकता है जब राज्यों के तीन चौथाई बहुमत से संविधान मे संशोधन कर दिया जाय।

कल्हौन के तर्क से उत्साहित होकर साउथ करोलीना राज्य के सिरफिरे लोगो ने एक संघीय तटकर कानून को निषिद्ध ठहराने का इरादा किया। राष्ट्रपति जैक्सन ने जवाब दिया कि संघ की रक्षा की ही जायगी, और यदि आवश्यकता हुई तो मैं कानून को सेना की सहायता से लागू करूंगा। उस प्रश्न पर समझौता हो गया और कांग्रेस ने कानून को नरम कर दिया।

बीस वर्ष पश्चात् विस्कोन्सिन के विधानमण्डल ने उस संघीय कानून को मानने से इनकार कर दिया जिसके अनुसार किसी भी उत्तरी राज्य को उसकी सीमा मे कोई भगा हुआ दास पाया जाने पर उसे वापस भेजने के लिए बाधित किया जा सकता था। जो संघीय कानून किसी राज्य को अत्याचारपूर्ण प्रतीत हो उसे अवैध ठहराने की यह अपील ही गृह-युद्ध का कारण बन गई और सन् १८६१-६५ के गृह-युद्ध से यह निषेधाधिकार सदा के लिए समाप्त हो गया। परन्तु सुप्रीम-कोर्ट उसके पश्चात् भी कानूनो पर विचार चुपचाप इसी आधार पर करता रहा कि वे संविधान से संगत है या नही, यद्यपि उसने सन् १८०३ से १८५७ तक किसी संघीय कानून को असंवैधानिक घोषित नही किया। किसी गृह-युद्ध के पश्चात् आज्ञा-परक कानूनो की मात्रा बढ गयी और न्यायालय अपने अधिकार का प्रयोग बार-बार करने लगे।

जनता ने क्रमश. इस तथ्य को मान लिया और इसके सामने सिर झुका दिया है कि जब न्यायालय किसी लोक प्रिय कानून पर प्रहार करता है तब

उसका अर्थ इतना ही बतलाना होता है कि जनता ने भ्रान्त मार्ग का अवलम्बन किया है। व्यवहार मे न्यायालय के कथन का अभिप्राय यह होता है—"तुमने सन् १७८७ मे कांग्रेस को आय-कर लगाने का अधिकार नही दिया था। यदि तुम अब (सन् १८९५ मे) आय-कर लगाना चाहते हो तो तुम वेसा कांग्रेस से कहकर नही कर सकते। उसके स्थान पर, संविधान मे संशोधन के द्वारा, अपने आपसे कहो।" इस प्रकार लोग फिर पीछे लौटे और उन्होने आरम्भ से चलना शुरू किया। उन्होने आत्म चिन्तन किया कि क्या आय-करों की इतनी आवश्यकता है कि यदि संविधान को संशोधित करना पडे तो वह भी कर लिया जाय। सन् १९१३ मे जाकर उन्होने निर्णय किया और संविधान मे सोलहवे संशोधन द्वारा प्रत्यक्ष आय-कर लगाने की अनुमति दे दी गई। यह सत्य सुविदित है कि सुप्रीम कोर्ट के निर्णय को संविधान मे संशोधन करने की लम्बी और धैर्य पूर्ण विधि से ही बदला जा सकता है परन्तु जब लोग अधीर होते हैं तब वे इस सत्य के ज्ञान-मात्र से सन्तुष्ट नही हो जाते।

सुप्रीम कोर्ट का संगठन ऐसे विधि-विशेषज्ञो से मिलकर होता है जो न्यायाधीश बनने से पहले दीर्घ-काल तक जीवन मे सफल रह कर अनुभवी बन चुके होते हैं। उनमे सभी निजी जीवन मे न्यायाधीश या वकील नही होते। सुप्रीम कोर्ट का कोई न्यायाधीश अपने पूर्व जीवन मे सेनेटर, अटर्नी-जनरल, कानून के स्कूल का अध्यापक अथवा न्यायालय के समान काम करने वाली किसी एजन्सी का प्रशासक आदि कुछ भी रह चुका होता है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि कोई न्यायाधीश पचास वर्ष की आयु मे नियुक्त किया गया। उसके बीस से चालीस वर्ष तक जीवित रहकर न्यायाधीश बने रहने की सम्भावना रहती है। उसके कुछ वृद्ध होने की सम्भावना तो है ही। इसलिए वह अब से पहली पीढी के राजनीतिक संसार के साथ निकट सम्पर्क मे भी अवश्य रहा होगा। न्यायालय अपने मतो मे प्राय. परिवर्तन-विरोधी होते हैं और इसी कारण उन उदार विचार के लोगो को क्षुब्ध कर देन वाले होते हैं जो कि द्रुत गति से प्रगति करना चाहते है। सन् १९३७ मे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश असाधारण वृद्ध थे और पदारूढ पार्टी अति तीव्र

गति से आगे बढ़ रही थी। परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रपति ने "न्यायालय को भर डालने की एक योजना" बनायी।

सन् १९३५ से सन् १९३७ तक "न्यू डील" (स्वर्गीय रूजवेल्ट की नयी आर्थिक नीति) को कार्यान्वित करने के लिए बनाये गये कई कानून सर्वोच्च न्यायालय के सामने गये और असंवैधानिक घोषित कर दिये गये। राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने कहा कि न्यायाधीश अत्यन्त वृद्ध हो गये हैं और कांग्रेस से प्रस्ताव किया कि कुछ नये न्यायाधीश नियुक्त करके न्यायाधीशो की संख्या नौ से बढाकर पन्द्रह कर दी जाय। "न्यायालय को भर डालने" की यह योजना इतने अधिक लोगो को बुरी लगी कि कांग्रेस ने इसे अस्वीकृत कर दिया। परन्तु न्यायालय ने अपना मार्ग बदल लिया और राष्ट्रपति द्वारा आक्रमण का कोई अन्य उपाय किये जाने से पहले ही वह उसके मार्ग मे से हट गया। सन् १९३७ के पश्चात् पुराने न्यायाधीशो के पद-त्याग और मृत्यु के कारण श्री रूजवेल्ट को आठ नये न्यायाधीश नियुक्त करने का अवसर मिल गया। न्यायालय ने भी डिमोक्रेटिक पार्टी के बीस-वर्षीय शासन के शेष भाग मे शासन के कार्यक्रम के विरुद्ध प्रायः कोई आपत्ति नही उठायी।

संघीय पद्धति मे नीचे के न्यायालयो का राजनीतिक महत्व कुछ कम है। उनका प्रधान काम ऐसे नित्य-प्रति के झगडो को सुलझाना है जिनमे कोई संवैधानिक प्रश्न नही उलझा रहता। सबसे नीचे जिला अदालते होती हैं। लगभग दो सौ जिला जज संयुक्त राज्य अमेरिका भर मे फैले हुए हैं। इन अदालतो मे वे सभी दीवानी और फौजदारी मुकदमे जाते हैं जो संघीय कानूनो के अधिकार-क्षेत्र मे आते हैं। संविधान के नियमानुसार २० डालर से कम मूल्य के दीवानी मामलो को छोडकर शेष सब मुकदमो की सुनवाई उन्हे जूरी की सहायता से करनी पडती है।

जिन दीवानी मुकदमो की सुनवाई जिला-अदालतो मे होती है उनमे वे मुकदमे भी शामिल है जिनमे कोई नागरिक "एम्प्लायर्स लाएबिलिटी ऐक्ट" अर्थात् मालिको की देनदारी के कानून सरीखे संघीय कानूनो के अनुसार अपने अधिकारो का दावा करता है। "एम्प्लायर्स लाएबिलिटी ऐक्ट" के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार करने वाले किसी मालिक का कोई कर्मचारी यदि अपने काम के समय आहत हो जाय तो

वह मालिक से क्षति-पूर्ति की माग कर सकता है। जिला अदालते समुद्र मे घटित हुए मामलो के मुकदमे भी सुनती है, क्योकि संविधान ने जल सेना के कानूनो को भी संघीय शासन के नियन्त्रण मे रक्खा है। एक तीसरे प्रकार के मुकदमे वे है जो विभिन्न राज्यो के नागरिको मे चलते हैं। इनमे कोई भी व्यापारिक मुकदमा शामिल हो सकता है क्योकि कार्पोरेशनो (व्यापारी संघटनों) को भी उन राज्यो का नागरिक समझा जाता है जिनसे उन्हे, 'चार्टर' अर्थात् अनुमति पत्र मिला हो, वे व्यापार भले ही अन्य राज्यो मे भी क्यो न करते हो, उन अन्य राज्यो मे उन्हे वाहर का समझा जायगा।

जिला अदालतो के फौजदारी मुकदमो मे अधिकतर अभियोग संघीय कानूनों का उल्लंघन करने के होते हैं। इन कानूनो के उदाहरण हैं, ट्रस्ट (न्यास) विरोधी कानून, या युद्ध-काल मे मूल्यो के नियन्त्रण का कानून, या चोरी से माल देश मे लाने या अपहरण-विरोधी कानून इत्यादि। करो के मुकदमो मे सरकार किसी नागरिक पर टैक्स की अदायगी मे धोखेवाजी करने का दावा कर सकती है या इसके विपरीत कोई नागरिक सरकार पर अपने अधिकार से वाहर जाकर टैक्स मागने का दावा कर सकता है।

जिला अदालतो को प्राय. सभी मामलो मे मुकदमा आरम्भ से सुनने का अधिकार होता है। अर्थात् ये अदालतें जूरी की सहायता से मुकदमे के तथ्यो का संग्रह भी करती हैं। मुकदमे के दोनो पक्ष उसके निर्णय के विरुद्ध अपील कर सकते हैं,—इस आधार पर भी कि अदालत ने मुकदमे की सुनवाई मे भूल की और इस आधार पर भी कि जो कानून लागू किया गया वह असंवैधानिक था। ये अपीलें संघीय न्यायालयो के माध्यमिक स्तर के अर्थात् 'सर्किट कोर्टों' (दौरा अदालतो) मे सुनी जाती हैं।

अपीलो का न्यायालय मातहत अदालत द्वारा संग्रहीत तथ्यो को ठीक मानकर चलता है, और इसलिए वहा जूरी की आवश्यकता नही पडती। उसका काम केवल विवादास्पद कानूनी प्रश्नो पर निर्णय देने का है। साधारणतया अपील का अदालत

में एक बेंच पर तीन जज एक साथ बैठकर सुनवाई करते हैं। इस अदालत का एक प्रधान काम सर्वोच्च न्यायालय को नित्य-प्रति के राजनीतिक-महत्व-हीन मुकदमे सुनने की परेशानी से बचाना भी है। जब अपील मे किसी कानून के असंवैधानिक होने का दावा किया जाता है तब भी अपील का न्यायालय दोनो पक्षो की युक्तियां सुनकर विवादास्पद प्रश्नो को स्पष्ट कर सकता और प्रबल युक्तियो पर आधारित हो कि सर्वोच्च न्यायालय उस सम्बन्ध मे अधिक सुनवाई करने से इनकार कर दे। उस अवस्था मे समझा जाता है कि अपील के न्यायालय ने ही देश के सर्वोच्च कानून का स्पष्टीकरण कर दिया है,—कम से कम उस मुकदमे की परिस्थितियो के लिए।

परन्तु यदि लगभग एक से दीखने वाले दो मुकदमो का फैसला अपीलो की अदालतें एक दूसरी से उलटा कर दे, या सर्वोच्च न्यायालय अपील की अदालत के फैसले को उलटना चाहे या उसकी व्याख्या अधिक विस्तार से करना चाहे, तो सर्वोच्च न्यायालय अपील सुनना स्वीकार कर लेता है। इसके अतिरिक्त, कुछ व्यापारिक कानूनो का—विशेषतः ट्रस्ट-विरोधी मामलो और व्यापार-नियन्त्रण-सम्बन्धी कानूनो का—राजनीतिक महत्व इतना अधिक और विस्तार इतना उलझन भरा है कि कांग्रेस ने संघीय न्यायालयो मे उनकी विलम्बित प्रगति को तीव्र कर देने का निर्णय कर दिया है। इस प्रकार के मुकदमे तीन जिला जजो की मातहत अदालत मे आरम्भ होते हैं और तीनो जज तथ्यो को एकत्र करके अपना निर्णय सुना देते हैं। उनके निर्णय के विरुद्ध अपील, मध्यवर्ती अपील अदालतो मे गये बिना, सीधे सर्वोच्च न्यायालय मे की जा सकती है।

इस त्रि-स्तरीय संघीय न्यायालय पद्धति के अतिरिक्त भी कुछ विशेष न्यायालय हैं। जैसे कि क्लेमो या दावो का न्यायालय, टैक्सो अर्थात् करो का न्यायालय, और कस्टमो या तट-करो और पेटण्टो की अपीलो का न्यायालय। ये विशेष न्यायालय ऐसे विषयो पर विचार करने के लिए बनाये गये हैं जिन्हे किसी साधारण जज के लिए तबतक समझना कठिन है जबतक कि वह एक ही समस्या का अध्ययन करने के लिए अपना सारा समय न लगा दे। इन विशेष अदालतो की स्थिति

विशुद्ध 'न्यायिक' न्यायालयो और प्रशासनिक एजन्सियो की सीमा-रेखा पर होती है। इन्हे न्याय के अधिकार भी होते है और इनके द्वारा सरकार कुछ विशिष्ट व्यापार व्यवसायो का नियन्त्रण भी करती है।

यद्यपि संविधान के व्यापार-सम्बन्धी अनुच्छेद ने कांग्रेस को "विदेशो के साथ, राज्यो के मध्य मे और इण्डियन कबीलो के साथ व्यापार का नियन्त्रण करने" का अधिकार दिया है, परन्तु आज व्यापार को जो स्वरूप प्राप्त हो चुका है उसे सरकार के नियन्त्रण मे देना मूल संविधान के उद्देश्यो मे सम्मिलित नही था। पहले नियन्त्रण का मुख्य रूप तट-कर और प्रतिबन्ध का, विशेषत. राज्यो के मध्य मे तट-करो और प्रतिबन्धो के निषेध का था। परन्तु ज्यो-ज्यो व्यापार अधिकाधिक उलझता गया त्यो-त्यो कांग्रेस को रेलो के भाडे, यात्रा की सुरक्षा, खाद्यो और औषधियो मे मिलावट, और रेडियो के मीटर सरीखी वस्तुओ का नियन्त्रण भी करना पड गया। इन पिछले नियन्त्रणो की एक विशेषता यह है कि कांग्रेस न तो प्रत्येक मामले के तथ्य ही जान सकती और न उनके लिए अलग-अलग कानून ही बना सकती है। फ्लोरिडा राज्य के सिल्वर-स्प्रिंग्स से न्यूयार्क के राज्य के सायराक्यूज तक टोकरो मे भरे हुए संतरो का रेल-भाडा कांग्रेस के एक पृथक् कानून का विषय नही बन सकता। फिर भी कांग्रेस चाहती है कि औचित्य के कुछ निश्चित सिद्धान्तो और विविध भाडा-दरो मे उचित सम्बन्धो का ध्यान रक्खा जाय। कांग्रेस एक कानून बना कर उसमे मोटे रूप से इन सिद्धान्तो का उल्लेख कर सकती है। उससे आगे तथ्यो का अध्ययन करके कानून मे उल्लिखित सिद्धान्तो के अनुसार निर्णय करने के लिए किसी की नियुक्ति करनी पड़ेगी। यही 'रेग्युलेटिंग' अर्थात् नियन्त्रण कर्ता एजन्सियां हैं।

मुख्य नियन्त्रण-कर्ता एजन्सियो मे उल्लेख योग्य ये है—'इण्टर-स्टेट-कामर्स-कमीशन' राज्यो के मध्य मे यातायात के दरो का निरीक्षण करता है, 'फेडरल-ट्रेड-कमीशन' या संघीय व्यापार आयोग ट्रस्ट-विरोधी कानूनो के उल्लंघनो और झूठे विज्ञापनो जैसी कुछ छलपूर्ण कारंवाइयो पर दृष्टि रखता है; 'फेडरल कम्युनिकेशन्स कमीशन' अर्थात् संघीय संचार आयोग, और 'फेडरल पावर कमीशन' अर्थात संघीय

शक्ति आयोग; और 'सिक्यूरिटीज एण्ड एक्सचेन्ज कमीशन' अर्थात् सरकारी कागजो तथा अन्य दरो का नियन्त्रण करनेवाला आयोग ।

साधारणतया ये कमीशन तथ्यो की जाँच के पश्चात् सम्बद्ध व्यापारिक संस्थाओ को बतलाते हैं कि उसे अपने काम का मूल्य वसूल करना चाहिए अथवा उसे कानून का पालन करने के लिए अपनी अब तक की प्रणाली मे क्या परिवर्तन कर लेना चाहिए । इन नियन्त्रण-कर्ता एजन्सियो को किसी से जुर्माना वसूल करने या किसी को जेल मे रखने का अधिकार नही है । परन्तु अपनी आज्ञा का पालन करवाने के लिए उन्हे किसी भी व्यापारी को अदालत मे ले जाकर उस पर कानून भंग करने का अभियोग लगाने का अधिकार है । सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त, अन्य किसी भी संघीय न्यायालय की अपेक्षा ये एजन्सियाँ कानून का निर्माण अधिक करती हैं ।

न्यायालय यह मानना नही चाहते कि कानून का निर्माण किसी ऐसी प्रशासनिक एजन्सी द्वारा किया जा सकता है जो कि शासन के त्रि-शाख ढाचे मे ठीक-ठीक नही बैठती । प्रशासनिक एजन्सियाँ शासनपालिका और न्यायपालिका दोनो के बीच की वस्तु हैं और उनका अधिक झुकाव विधि-निर्माण की ओर को है । यह राजनीति से भी प्रभावित होती हैं, क्योकि कमीशनो की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है और उनकी पूर्ण परीक्षा सेनेट करती है । जिन व्यापारिक संस्थाओ पर नियन्त्रण होने की सम्भावना होती है उनके द्वारा पार्टी के कोश मे हाथ खोलकर चंदा दिया जाना कोई असाधारण बात नही है और सेनेट भी एकाधिक कमिश्नरो की नियुक्ति केवल इस कारण अस्वीकृत कर चुकी है कि उन्होने जनहित का पक्ष लेकर किसी प्रभावशाली उद्योग का विरोध करने का साहस किया था । "पहरेदार पर पहरा कौन देगा" इस पुरानी प्रश्नात्मक कहावत का उत्तर न्यायालय की दृष्टि मे उचित से अधिक राजनीतिक है ।

परन्तु नियन्त्रण कर्ता एजन्सियो पर पहरा देने के सम्बन्ध मे न्यायालय सर्वथा अधिकार शून्य भी नही हैं । वे एजन्सियो द्वारा एकत्र किये हुए तथ्यो पर उतना सन्देह नही करते जितना कि उनकी तथ्य एकत्र करने की और परिणाम निकालने की प्रणाली को सूक्ष्मता से जांचते हैं । किसी हद तक वे इन एजन्सियो को पुलीस

की अपेक्षा अधिक अप्रिय उपायो का अवलम्बन करने देते है। सन् १६५० मे सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया था कि 'फेडरल-ट्रेड-कमीशन' ने अर्थात् ट्रस्ट विरोधी कानूनो के उल्लंघन पर दृष्टि रखने वाले आयोग ने, यह देखने के लिए कि कानून का ठीक पालन हो रहा है या नही, मार्टन साल्ट कम्पनी के स्थान पर जाकर और उसकी वहियाँ आदि देखकर अनुचित कार्य कुछ नही किया। उस प्रकार तलाशी लेने की काररवाई यदि पुलिस या कोई अदालत करती तो उसे उचित न माना जाता। "उचित कानूनी काररवाई" शब्दो की परिभाषा, शासन के नियन्त्रण की विशेष आवश्यकताओ के अनुसार, धीरे-धीरे परिवर्तित होती जा रही है।

संघीय न्यायालयो के मुकदमो मे प्रायः एक पक्ष सरकार का होता है। प्रथम एटर्नी-जनरल की नियुक्ति सन् १७८६ मे सर्वोच्च न्यायालय मे सरकारी मुकदमो की पैरवी करने के लिए की गयी थी। आज के 'डिपार्टमेण्ट ऑव् जस्टिस' अर्थात् न्याय विभाग मे यह काम सालिसिटर-जनरल के सपुर्द है। यह डिपार्टमेण्ट या विभाग सरकार के वकील का काम करता है। यदि 'इण्टर्नल-रेवेन्यु-ब्यूरो' अर्थात्' आन्तरिक आय विभाग को निश्चय हो जाय कि अमुक व्यक्ति आय कर देने से बचता है तो वह उसका मामला मुकदमा दायर करने के लिए 'डिपार्टमेण्ट ऑव जस्टिस' को सौंप देता है। यदि सेनेट की किसी कमिटी के बुलाने पर कोई गवाह प्रश्नो का उत्तर देने के लिए नहीं आता, या कमिटी को विश्वास हो जाय कि वह झूठ बोल रहा है, तो इस 'डिपार्टमेण्ट' से कहा जाता है कि वह उसका मामला "ग्रैण्ड जूरी" (जो व्यक्ति यह जाच करते हैं कि किसी व्यक्ति पर मुकदमा चलाया जा सकता है या नही) के सपुर्द कर दे और देखे कि उसे अदालत की मानहानि करने या झूठी गवाही देने के अपराध मे दण्डित करवाया जा सकता है या नही।

"डिपार्टमेण्ट ऑव् जस्टिस" अर्थात् न्याय-विभाग मे "फेडरल ब्यूरो-ऑव्-इन्वेस्टिगेशन" या संघ का तफतीश करनेवाला भाग भी सम्मिलित है। यह संघीय गुप्तचर सेवा का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। 'एफ० बी० आई०' अर्थात् संघ का तफतीश करनेवाला विभाग अपहरणकर्ताओ, बैंको के लुटेरे, और संघीय कानून के अन्य उल्लंघनकर्ताओ से निपटता है। यह अन्य गुप्तचरो के विरुद्ध

गुप्तचरी का काम भी चुस्ती से करता है। यह सरकारी कर्मचारियो की निष्ठा की भी जांच करता है। शासन विभाग की अन्य गुप्त सेवाएं जाली सिक्के चलानेवालो, चोरी से माल लानेवालो, मादक द्रव्यो का व्यापार करनेवालो, आय कर देने से बचनेवालो, और राष्ट्रपति के प्राणो की घात मे रहनेवालो की घात मे रहती हैं। इन सब लोगो पर, पकडे जाने पर, 'डिपार्टमेण्ट आॅव् जस्टिस' द्वारा या उसके निरीक्षण मे संयुक्त राज्य अमेरिका के स्थानीय अर्टनियो द्वारा संघीय न्यायालयो मे मुकदमे चलाये जाते है।

'डिपार्टमेण्ट आॅव् जस्टिस' के ध्यान मे कानून के उल्लंघन के जितने मामले आते है उन सब को दण्डित करवाने की आशा वह नही कर सकता, विशेषत. उन सन्दिग्ध मामलो मे जिनमे कि देर तक मुकदमा चलने के पश्चात् ही मालूम होता है कि कानून का उल्लंघन हुआ था या नही। उदाहरणार्थ, न्यास (ट्रस्ट) विरोधी नीति का पालन करते हुए अटर्नी-जरनल को यह भी देखना पडता है कि वह कानून का विकास जिस दिशा मे करना चाहता है उसमे सहायता देनेवाले प्रश्न निर्णय के लिए उठने की सम्भावना किन मुकदमो मे अधिक है। कानून का असन्दिग्ध उल्लंघन होने के मामले तो अपेक्षाकृत कम ही होते हैं। उनके सम्बन्ध मे साधारणतया कानून-विशेषज्ञो मे भी मतभेद रहता है।

इन कारणो से अटर्नी-जनरल को यह निश्चय करने की काफी स्वतन्त्रता रहती है कि वह किन कानूनो को लागू करे और किन कामो को कानून का उल्लंघन माने और किनको नही। वह अपने निश्चय राष्ट्रपति की नीति को दृष्टि में रक्खे विना भी नही करता; और स्वभावत. उन पर राजनीति का भी प्रबल प्रभाव पड़ता है।

उदाहरणार्थ, जब ट्रूमन-शासन के पश्चात् 'डिपार्टमेण्ट आॅव् जस्टिस' राष्ट्रपति आइजनहोवर के हाथ मे आया तब कई बडे-बडे ट्रस्ट-विरोधी मुकदमे न्यायालयो मे जानेवाले थे। एक मुकदमा "यूनाइटेड स्टेट्स स्टील" नामक फर्म के विरुद्ध भी था। उसमे यह महत्वपूर्ण प्रश्न खड़ा होता था कि कच्चा माल उत्पन्न करने वाली कोई बड़ी कम्पनी अपनी किसी प्रकार की सहायक कम्पनियो का नियन्त्रण

कानून का उल्लंघन किये विना कर सकती है। राष्ट्रपति आइजनहोवर इस निर्णय से वच नही सकते थे कि उनका अटर्नी-जनरल इस प्रश्न को न्यायालयो के सामने उपस्थित करे या नही।

संविधान की ओर कानूनो की व्याख्या अनेक राजनीतिक शक्तियो से भी प्रभावित होती रहती है। अटर्नी-जनरल से लेकर सर्वोच्च न्यायालय के न्यायधीशों की नियुक्ति तक उनमे सम्मिलित हैं। इस कारण अव कानून का प्रत्यक्ष रूप पत्थर के ऐसे मजवूत चवूतरे का सा नही रहा है कि कोई भी सरल या अनजान मनुष्य उस पर खडा होकर निश्चिन्त हो जाय। प्रत्युत सत्य यह है कि सन् १७८७ मे संविधान की रचना करते हुए कानून को जितना निश्चित समझा गया था आज वह उससे कही कम निश्चित रह गया है। उन दिनो प्रचलित विश्वास यह था कि मनुष्य कृत कानूनो के मूल मे एक "प्राकृतिक कानून" विद्यमान रहता है जो ईश्वर द्वारा आज्ञप्त है और जिसका आविष्कार करके विद्वान् न्यायाधीश उसकी घोषणा कर सकते हैं। ब्लैकस्टोन की प्रसिद्ध पुस्तक "कमेण्टरीज" अर्थात् 'कानून की व्याख्या' इसी सिद्धान्त पर आधारित थी, और गणतन्त्र के प्रारम्भिक दिनो मे अमेरिकी वकीलो और न्यायाधीशो पर उसका वहुत प्रभाव पडा था।

परन्तु इस सिद्धान्त के विरुद्ध विद्रोह जेरेमी वेन्थम ने सन् १७७६ मे ही आरम्भ कर दिया था, और वह आक्सफोर्ड मे ब्लैकस्टोन का विद्यार्थी रह चुका था। लन्दन की गन्दी वस्तियो की ओर संकेत करके वेन्थम ने कहा था कि मुझे ईश्वर का कानून इंगलैण्ड के कानून को चलाता दिखाई नही देता। उनका कथन था को गन्दी वस्तियो की सफाई जैसा उपयोगी काम करने के लिए, चाहे तो मनुष्य भी कानून वना सकते हैं। इसका नाम "युटिलिटेरिअनिज्म" अथवा 'उपयोगितावाद, का सिद्धान्त रक्खा गया था। वाद को अमेरिकी विचार धारा मे "प्रैगमैटिज्म" का सिद्धान्त इसी से निकला। "प्रैगमैटिज्म" का अभिप्राय यह है कि यदि किसी वस्तु से कोई काम निकल रहा है तो वह अवश्य ठीक होगी। इस परिवर्तन के कारण कानून के प्रति अमेरिकी जनता की राजनीतिक दृष्टि मे क्रान्ति-सी हो

गयो, और समय बीतने के साथ-साथ कानूनी विशेषज्ञो और न्यायाधीशो का रुख भी बदल गया।

जबतक कल्पना यह थी कि कानून पहले से ईश्वर के मन मे प्रतिष्ठित है और वह बाइबिल के तथा विद्वान कानून-विशेषज्ञो के चिन्तन के अतिरिक्त अन्यत्र कही नही मिल सकता, तबतक लोगो का विश्वास था कि वह ऐसा दृढ पर्वत है कि उसी पर घने कुहासे मे जाकर भी हजरत मूसा कठोर शिला-खण्डो को पा सके। परन्तु अब, जब कानून को मनुष्य के हाथो मे व्यवस्था, न्याय और समृद्धि लाने का एक साधन समझा जाने लगा है, तब परिस्थिति सर्वथा भिन्न हो गयी है। अब हमारी दृष्टि एक सरल मेघाच्छादित पर्वत के स्थान पर ऐसे विस्तृत भू-खण्ड पर फिरती रहती है जहाँ कि वाष्प-चालित शक्तिशाली कुदाल निरन्तर काम कर रहे हैं और यदि सबको नही तो कुछ पर्वतो को उलट-पलट रहे हैं। हमे समझना है कि कौन से पर्वत उलटे जाते हैं और कौन से नही। आज डेढ़-सौ वर्ष पूर्व के कानूनी पण्डितो की सरल, किन्तु बहुधा क्रूर, निश्चित धारणाओ का स्थान कही अधिक व्यावहारिक, परन्तु उलझन भरे, वे प्रयत्न लेते जा रहे है जो कि संसार को हम जैसा चाहेगे वैसा बना देगे। और स्वयंप्रभु जनता की आवश्यकता के अनुसार संसार का निर्माण करना अधिकतर राजनीति का विषय है।

सन् १९३७ मे डिमोक्रेटों ने जो नया सर्वोच्च न्यायालय संगठित किया था वह आधुनिक "मानव-निर्मित" राज्य की समस्याओ मे अपना पाव अभी तक उतनी दृढता से नही जमा सका है जितनी दृढता से पहले के न्यायालयो का विश्वास था कि उन्होने कानून के पुराने सिद्धान्तो मे जमा लिया था। क्योकि यदि कानून का ही रूप निश्चित नही तो निर्णयो का कैसे रहेगा ?

परन्तु यद्यपि अब हमारा विश्वास यह नही रहा कि सत्य और औचित्य, और न्याय और सद्भावना के सिद्धान्तो का ज्ञान, विद्वान् न्यायाधीश किसी विशिष्ट प्रेरणा से प्राप्त कर सकते हैं, तथापि इन सिद्धान्तो ने अपना कार्य करना बन्द

नहीं किया है। लोगो ने अब भी निर्णय करने के लिए कुछ सिद्धान्त निर्धारित किये हुए हैं और न्यायाधीशों से भी, मनुष्य होने के कारण, उन्हीं सिद्धान्तों की व्याख्या करने के लिए कहा जाता है। इसी कारण सर्वोच्च न्यायालय के प्रत्येक निर्णय के साथ कई पृथक् सम्मतियाँ प्रकट की हुई रहती हैं कि किन कारणों से कोई न्यायाधीश अपने किसी साथी न्यायाधीश से सहमत या असहमत रहा। परन्तु उस सत्य को खोजते रहने के प्रयत्नों का अन्त अब भी नहीं हुआ है जिसे हम अपनी स्थिति का दृढ आधार बना सकें।

अध्याय ८

राज्य

राज्यो को स्वतन्त्र राष्ट्रो के सभी अधिकार और शक्तिया प्राप्त हैं। अपवाद ये हैं—

(१) वे अधिकार जो संघीय संविधान ने राज्यो के लिए निषिद्ध कर दिये हैं;

(२) वे अधिकार जो प्राप्त तो राज्यीय और संघीय दोनो शासनो को हैं, परन्तु जब राज्यो द्वारा उनका प्रयोग उनके संघीय प्रयोग के साथ टकराता हो; और

(३) संघ से पृथक हो जाने अथवा त्याग-पत्र दे देने का अधिकार।

उदाहरणार्थ, संविधान ने राज्यो का किसी विदेशी शासन के साथ सन्धि की वार्ता करना निषिद्ध कर दिया है। कोई राज्य किसी दूसरे राज्य से सन्धि-वार्ता कर सकता है, परन्तु राज्यो के मध्य की सन्धि जो कि "अन्तर्राज्यीय कम्पैक्ट" कहलाती है—कानून-सम्मत तभी होती है जब उस पर कांग्रेस की स्वीकृति की छाप लग जाय।

राज्यीय और संघीय, दोनो शासन अन्तर्राज्यीय व्यापार से सम्बद्ध व्यापारिक और श्रमिक प्रथाओ को नियन्त्रित कर सकते हैं। परन्तु इन दोनो के अधिकार-क्षेत्रो की सीमा-रेखा का निर्णय करने के लिए निरन्तर मुकदमेबाजी चलती रहती है।

अपने आन्तरिक मामलो मे राज्य स्वतन्त्र है; यहां तक कि राज्य के आय-कर और तलाक कानून सरीखे ऐसे मामलो मे भी जिनका प्रभाव प्रतिस्पर्धा के कारण अन्य राज्यो पर पड़ सकता है। कोई राज्य अपनी काररवाइयो से अन्य राज्यो के

लिए परेशानी का कारण भी वन सकता है, और उसे संघीय संविधान मे संशोधन करके या उसकी नयी व्याख्या करके ही रोका जा सकता है।

कोई नया राज्य संघ मे सम्मिलित तभी हो सकता है जब कांग्रेस उसके प्रस्तावित संविधान को देखकर यह मान ले कि उससे "उसे गणतन्त्री पद्धति का शासन प्राप्त हो जायगा।" परन्तु एक वार संघ मे सम्मिलित हो जाने पर उसे भी स्वयंप्रभुता के वही सव अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो प्रारम्भिक तेरह राज्यो को प्राप्त थे। इसके पश्चात् कांग्रेस उस राज्य के संविधान को केवल संघीय संविधान मे संशोधन की परोक्ष विधि द्वारा परिवर्तित कर सकती है।

उदाहरणार्थ, मताधिकार किसको दिया जाय और किसको नही; यह निर्णय करने का अधिकार मूल संविधान मे राज्यो को सौंप दिया गया था। संविधान ने स्वीकार किया था कि प्रत्येक राज्य अपने निम्न सदन के सदस्यो का निर्वाचन करने के लिए जिनको मताधिकार दे देगा, उस राज्य मे कांग्रेस सदस्यो के निर्वाचन मे भी मत वही दे सकेंगे। संघीय कांग्रेस को, राज्यो के संविधानो या कानूनो के अनुसार वनाये गये नियमो मे परिवर्तन करने का कोई अधिकार नही था। परन्तु वह संघीय संविधान मे ऐसा संशोधन प्रस्तुत कर सकती थी जिसके अनुसार तीन-चौथाई राज्य मिलकर अन्य राज्यो को विवश कर सकें।

स्त्रियो को मताधिकार देने और संयुक्त राज्य अमेरिका के सेनेटरो का निर्वाचन साधारण जनता के मतो द्वारा करने के लिए राज्यो को विवश इसी प्रकार के संशोधनो द्वारा किया गया था।

सन् १८६८ मे उत्तरी राज्यो ने चौदहवें संशोधन द्वारा दक्षिणी राज्यो को नीग्रो लोगो को मताधिकार देने के लिए विवश करने का प्रयत्न किया था। परन्तु इस संशोधन को कठोरता से लागू अब तक नही किया जा सका, क्योकि कांग्रेस राजनीतिक दवाव के कारण इन राज्यो के प्रतिनिधियो की संख्या संशोधन के अनुसार घटा नही सकी। परन्तु सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति के तथा सुप्रीम कोर्ट (सर्वोच्च न्यायालय) के ऐसे निर्णयो के कारण जिनका विरोध नही हुआ अथवा जिनका पालन टाला नही गया, धीरे-धीरे अधिकतर दक्षिणी राज्यो मे भी

नीग्रो लोग 'डिमोक्रेटिक प्राइमरियो' के निर्वाचन मे मत देने लगे हैं। वास्तव मे प्रश्न का कठिन अंश यही है। कोई कह सकता है कि संविधान मे डिमोक्रेटिक पार्टी का जिक्र नही है और इसलिए वह प्राइवेट संस्था मात्र है, जिसे अपने सदस्य स्वयं बनाने का अधिकार है। फिर भी जिन्हे कानून द्वारा नियमित निर्वाचन मे चुना जाना होता है, उनका वास्तविक चुनाव इन्ही 'डिमोक्रेटिक प्राइमरियो' मे किया जाता है। इस समस्या का क्रमिक हल कानूनी शक्तियो के व्यावहारिक क्षेत्र से बाहर की बात थी। इसलिए इसे लोकमत के इतने विकास की प्रतीक्षा करनी पड़ी कि दक्षिणवालो को भी यह हल राजनीतिक दृष्टि से स्वीकरणीय हो जाय।

स्थानीय शासनो को अनुमति-पत्र देने का एक मात्र अधिकार राज्यो को है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार ब्रिटिश पार्लमेण्ट को अधिकार है कि वह चाहे तो लन्दन के स्थानीय शासनो को अनुमति दे दे, मिलाकर एक कर दे या समाप्त कर दे। राज्यो और न्यूयार्क या शिकागो सरीखे उन बडे नगरो मे प्राय. संघर्ष चलता रहता है जिनका बजट राज्य के बजट से भी बडा होता है। नगर अपनी शासन प्रणाली मे परिवर्तन का या भूमि के नीचे स्थानीय यातायात की अपनी व्यवस्था करने का निर्णय अकेला स्वयं नही कर सकता। इस प्रकार के निर्णय वह विधान मण्डल की अनुमति से ही कर सकता है।

राज्यो के विधान मण्डलो की प्रवृत्ति निर्वाचन-क्षेत्रो का विभाजन इस प्रकार कर देने की रहती है कि विधान मण्डल मे ग्राम-निवासियो के प्रतिनिधि नगर-निवासियो की अपेक्षा अधिक पहुंच जायं। इसके अतिरिक्त यह सम्भावना भी रहती है कि जो राज्य राजनीतिक दृष्टि से 'सन्दिग्ध' माने जाते हैं उनके नगर-शासन डिमोक्रेटिक और राज्य-विधान मण्डल रिपब्लिकन हो जायं।

राज्य की पुलिस और 'मिलिशिया' (अनियमित सेना) राज्य के गवर्नर के नियन्त्रण मे रहती है। इन्हे किसी अन्य राज्य के विरुद्ध प्रयुक्त नही किया जा सकता परन्तु आन्तरिक व्यवस्था की रक्षा के काम मे लाया जा सकता है। 'मिलिशिया' का संघ की सेवा के लिए भी बुलाया जा सकता है, और इसके विपरीत यदि गवर्नर अपने बल से आन्तरिक उपद्रव का दमन न कर सके तो वह उसके लिए संघ

की सेना को भी बुला सकता है। गवर्नर का काम कुछ कानूनों का पालन करवाने का भी है, परन्तु सब को नहीं। संघीय शासन के साथ व्यवहार वही करता है। गवर्नरो के सम्मेलनो मे भी वही सम्मिलित होता है और वहा अपनी समान स्थिति के अन्य लोगो के साथ समस्याओ पर और राजनीति पर विचार करता है। अपराधियो को क्षमा करने का अधिकार भी गवर्नर का ही है। परन्तु कभी-कभी यह अधिकार "पेरोल या पार्डन बोर्ड" (कैदियो को शर्त पर छोडने या क्षमा करने वाले बोर्ड) द्वारा नियन्त्रित हो जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति से राज्यो के गवर्नरो की एक भिन्नता यह है कि वे बहुधा ऐसे निम्न शासनाधिकारियो से घिरे रहते हैं जो कि जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं और पदारूढ रहने के लिए गवर्नर पर निर्भर नही करते परन्तु हो सकता है कि गवर्नर का लेफ्टनेण्ट गवर्नर (उपराज्यपाल) के साथ जो उसका (गवर्नर का) उत्तराधिकारी होता है, झगडा रहता हो। इस प्रकार के कारणो से राज्यो के शासन मे गतिरोध का हो जाना अनहोनी बात नहीं है।

कुछ राज्यो मे शासन-प्रणाली की एक विशेषता "रि-कॉल" अर्थात् निर्वाचित पदाधिकारी को वापिस बुला लेने की है। जनता प्रार्थनापत्र देकर, गवर्नर या अन्य पदाधिकारियो को हटाने का मत प्रकट करने के लिए, विशेष निर्वाचन की माग कर सकती है। इस उपाय के द्वारा, कम से कम कहने को, मतदाताओ को ऐसा अवसर मिल सकता है कि वे अपने निर्वाचित पदाधिकारियो के गतिरोधकारी झगडे का फैसला कर दे, परन्तु व्यवहार मे शायद इसका उपयोग राज्य-भवन मे लडाई हो जाने पर उसे शान्त करने के लिए चेतावनी देने से अधिक नही हो सका।

राष्ट्रपति और राज्यपाल मे एक और अन्तर यह है कि राज्यपाल चाहे तो अधिक ऊँचे पद पर जाने की इच्छा कर सकते हैं, और वे बहुधा वैसा करते भी हैं। यदि संयुक्त राज्य अमेरिका के किसी सेनेटर का देहान्त हो जाय तो उसके राज्य का गवर्नर (राज्यपाल) त्यागपत्र देकर लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर (उपराज्यपाल) द्वारा अपने आपको सेनेट मे नियुक्त करवा सकता है। परन्तु साधारणतया गवर्नर लोग उस स्थान पर अपने किसी मित्र या शत्रु को नियुक्त कर देते हैं, और ये नियुक्तियां

सदा ही छल-रहित नही होती । बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि अगले चुनाव मे सेनेट के लिए कौन खडा होगा, अर्थात् उस समय गवर्नर सेनेट मे जाना चाहेगा या पुनः गवर्नर निर्वाचित होना चाहेगा । न्यू यार्क और ओहीयो सरीखे अति महत्वपूर्ण परन्तु 'सन्दिग्ध' राज्यो के गवर्नरो की प्रवृत्ति व्हाइट हाउस पर दृष्टि गडाये रखने की रहती है । वे राज्य-भवन और संयुक्त राज्य की सेनेट के बीच में ऐसे जोड-तोड करते रहते हैं कि वे समय पर अपनी पार्टी के भावी "कन्वेन्शन" मे स्वयं उम्मीदवार चुन लिये जायं।

राज्यो के विधान मण्डल अमेरिकी राजनीति के अनाथ हैं । न तो उनमे इतनी चमक-दमक है कि संयुक्त-राज्य काग्रेस की भांति वे जनता का ध्यान आकृष्ट कर ले और न वे जनता के इतने निकट हैं कि स्थानीय सुधारो के आन्दोलनो को जन्म दे सकें, जैसा कि नगरो के शासन प्राय. करते हैं ।

राज्यो के लोग अपने राज्यो के विधान मण्डलो को परम्परा से आधे समय की सभा समझते आये है । उनके सदस्य प्रायः प्रभावशाली नागरिक होते हैं, जो प्रति वर्ष या प्रति दूसरे वर्ष राज्य की समस्याएं हल करने के निमित्त कुछ सप्ताह के लिए एकत्र हो जाते हैं, इस कारण उनका पारिश्रमिक भी पूरे समय के वेतन के स्थान पर नष्ट हुए समय की क्षति-पूर्ति मात्र समझा जाता है । इसलिए इसमे आश्चर्य की बात कुछ नही कि बहुत से विधान मण्डल-सदस्य अपने नगर मे निजी रोजगार या वकालत भी साथ-साथ करते रहते हैं । कभी-कभी वे जिन सार्वजनिक प्रश्नो पर विचार करते है उनके निर्णय पर उनके निजी काम का भी प्रभाव पड़ जाता है ।

उदाहरणार्थ, द्वितीय विश्व-युद्ध से पहले एक राज्य मे उसकी सेनेट के सदस्यो का वेतन ७०० डालर वार्षिक से भी कम था । उस राज्य मे उससे बाहर के एक कार्पोरेशन की बहुत सी खानें थी । बतलाते हैं कि उसका प्रतिनिधि अभिमान पूर्वक कहा करता था कि मेरी कम्पनी पर कोई भारी कर नही लग सकता, क्योकि राज्य की सेनेट के अधिकतर सदस्य अपने-अपने शहर मे मेरी कम्पनी के वकील हैं और हम उन्हे प्रतिवर्ष ५००० डालर फीस का देते हैं ।

कई राज्यो मे राज्य के एक या अधिक "वास" अर्थात् जनता और अधिकारियो के वीच दलाल होते है, जो अति प्रभावशाली व्यापारी लोगो के प्रतिनिधि होते हैं। कई रोजगारो के लिए राज्यो के कानूनो का वडा मूल्य होता है। उदाहरणार्थ, जो ठेकेदार जो सार्वजनिक निर्माण का कार्य करते हैं उनके लिए और जो जुआरी अपने अड्डो पर कानून का नियन्त्रण नही होने देना या उन्हे वन्द नही होने देना चाहते उनके लिए "वास" ऐसे मामलो को, विधान मण्डलो को कावू मे रखने के अपने ही ढंग से, अपने ग्राहको के लिए सन्तोषजनक रूप मे सुलझा देता है। उसकी शक्ति का आधार यह विश्वास होता है कि विधान मण्डल का जो सदस्य मेरी वात सुनने से इनकार करेगा उसे मैं चुनाव मे हरवा दूंगा। और यह दम्भ निराधार नही है।

इसके अतिरिक्त, कुछ विधि-निर्माता अपना खर्च "शेक-डाउन" अर्थात् हलचल मचा देने वाले विल पेश करके चलाते हैं। उदाहरणार्थ, कोई सदस्य नाटक घरो के लिए आग से वचने की वहुत ही खर्चीली व्यवस्था रखने के कानून का प्रस्ताव या क्रूर सूदखोरो पर नियन्त्रण रखने का विल प्रस्तुत कर सकता है। शायद यह विल सचमुच लाभदायक भी हो यदि उस सदस्य का इरादा वस्तुत. इसे पास करवाने का हो। परन्तु घवराये हुए नाटक-मालिको या सूदखोरो को सलाह पहुँचा दी जाती है कि तुम अमुक वकील को कर लो जिससे वह जाकर विधि निर्माता से वहस करके उसे समझा दे , और विधि-निर्माता को फीस के रूप मे 'घूस' मिल जाने पर विल को 'मर' जाने दिया जाता है अर्थात् उसे आगे वढा कर स्वीकृत कराने की सव कारवाई की उपेक्षा कर दी जाती है।

राज्यो के शासन का नैतिक स्तर अपेक्षाकृत निम्न होने का कारण राजनीति मे मतदाताओ की रुचि का अभाव प्रतीत होता है। लोगो को प्राय. पता नही होता, और वे जानने की परवाह भी नही करते कि राज्य के कानून की पेचीदगिया क्या हैं और उनका व्यापार-व्यवसाय से क्या सम्वन्ध है। वे ईमानदार व्यक्तियो को इतना पर्याप्त पारिश्रमिक देना नही चाहते कि वे कोई निजी रोजगार किये विना राज्य की सेवा करते रह सके। वे राज्य की राजनीति पर इतना ध्यान नही देते कि ईमानदार व्यक्तियो को उनके मत "तेल से खूव चिकनी की हुई पार्टी-मशीन"

के मुकाबले भी एकत्र करने का अवसर मिल जाय। परन्तु बीच-बीच मे कोई प्रवाद खडा होकर लोगो को सुधार की माग करने की लिए जाग्रत कर देता है।

राज्यो के विधान मण्डलो मे जनता के अविश्वास के कारण सन् १६०० के आसपास, कोई बीस राज्यो ने अपने संविधान के अंग के रूप मे एक सुधार को अपना लिया था। वह था "इनिशिएटिव" अर्थात् जनता द्वारा किसी कानून का प्रस्ताव किया जाना और "रेफरेण्डम" अर्थात् जनता द्वारा कानून का निषेध। लगभग दस प्रतिशत मतदाताओ के हस्ताक्षरो से युक्त प्रार्थनापत्र देकर जनता "इनिशिएटिव" की अर्थात् किसी कानून का प्रस्ताव करने की, अथवा "रेफरेण्डम" की अर्थात् विधान मण्डल के सामने उपस्थित किसी बिल पर विचार रोक देने की, काररवाई कर सकती है। ऐसा प्रार्थनापत्र आने पर विशेष निर्वाचन कराना पडता है और उसमे मतदाता विधान मण्डल की इच्छा के विरुद्ध भी किसी बिल को स्वीकृत या अस्वीकृत कर सकते है। परन्तु जनतन्त्र का यह प्रत्यक्ष रूप इतना झंझट-भरा है कि इसका उतना उपयोग नही हो सका जितना कि सन् १६०० मे इसके आविष्कर्ताओ ने समझा था कि होगा। तथापि यदि विधान मण्डल कोई प्रवाद खड़ा कर दे और जनता जाग्रत हो जाय तो यह किवाड के पीछे रक्खी हुई लाठी का काम अवश्य दे देता है।

विधान मण्डलो पर अविश्वास का एक और परिणाम राज्यो की यह प्रवृत्ति है कि वे कानून को अपने संविधान का अंग बना देने का प्रयत्न करते हैं। इसका फल यह हुआ है कि कई राज्यो के संविधान इतने भारी-भरकम हो गये हैं कि उनकी शोभा राज्य के सर्वोच्च कानून सरीखी नही रही।

जनरुचि और प्रतिष्ठा के अभाव की बाधाओ के बावजूद, अमेरिकी जनता ने राज्यो के अधिकारो के प्रयोग के द्वारा जो सक्रिय राजनीतिक प्रगति कर ली है वह ध्यान देने योग्य है। जब जनता किसी विषय की ओर विशेषरूप से ध्यान देती है तब वह अपनी बात मनवा लेती है या जब कभी कोई योग्य गवर्नर जनता की मांगो की ओर ध्यान आकृष्ट करता है, तब भी काम बन जाता है।

राज्यो ने प्रगति की नई दिशाओ मे मार्ग-दर्शक का काम किया है, जैसे कि

रेलवे-लाइनो, सार्वजनिक उपयोग के कार्यों और शराब के व्यवसाय को नियन्त्रित करने मे। स्त्रियो और बालको की रक्षा के लिए अमेरिका मे श्रम-कानून पहले-पहल उन्होने ही बनाये थे। उन्होने बडे नगरो को नगर-शासन की नई प्रणालियो का परीक्षण कर देखने का अधिकार दिया है। हाल के वर्षो मे राज्य विधान मण्डलो का ध्यान आत्म-सुधार की ओर गया है। उन्होने विधि-निर्माण अनुसन्धान कार्यो, बिल-लेखक कार्यालयो और विधि-सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संघो का संगठन किया है।

वास्तव मे संघीय शासन के भी साधारण जनहित के बहुत से कानून राज्यो के कानूनों के आधार पर ही बनाये गये है, ठीक वैसे ही जैसे संविधान के व्यापार-सम्बन्धी अनुच्छेद का जन्म राज्यो के व्यापार को नियन्त्रित करने के नियमो की गडबड मे से हुआ था। उदाहरणार्थ, संघीय सामाजिक सुरक्षा कानून राज्यो के कानूनो का ही फल है। संघीय कानूनों का एक बडा प्रयोजन अमेरिकी व्यक्ति को कुछ ऐसे अधिकार देना था जो एक राज्य से दूसरे राज्य मे जाने पर भी सुरक्षित रहे, क्योकि लाखो अमेरिकी लोग ऐसा करते ही रहते हैं। राज्य अब भी नये-नये कानूनो के परीक्षा-गृह बने हुए हैं। यदि ये परीक्षण सफल हो जाते है तो इनसे प्राप्त अनुभव के आधार पर लोग निश्चय करते हैं कि किसी कानून को जारी रखा जाय या नही और किसी कानून का सम्बन्ध किसी राज्य से है या संघ से।

राज्यो के न्यायालय भी ऐसी पद्धति पर स्थापित किये गये हैं जो संघीय न्यायालयो की पद्धति जैसी प्रतीत होती है। सबसे ऊपर सुप्रीम कोर्ट या सर्वोच्च न्यायालय होता है, जिसे राज्य के किसी कानून को संविधान विरोधी ठहरा देने का भी अधिकार होता है। परन्तु राज्यो के न्यायालय जनता के अधिक समीप रहते है और उनका वास्ता एक भिन्न प्रकार के कानून से पडता है। संघीय न्यायालयो का सम्बन्ध मुख्यतया संघीय संविधान से पडता है, और राज्यों के न्यायालय, संघीय शासन के सपुर्द किये गये कानूनो को छोडकर शेष जितने भी कानून हैं उन सब पर आधारित होते हैं। राज्यो के कुछ कानून तो राज्यो के संविधानो मे और विधान मण्डलो द्वारा स्वीकृत कानूनो मे लिखे रहते है। परन्तु

उनका बहुत बडा भाग इंगलैण्ड का "कॉमन लॉ" अर्थात् वहाँ की परम्पराओ पर आधारित अलिखित कानून है; उसे ही अपना लिया गया और न्यायालयो के निर्णयो द्वारा अमेरिकी लोगो की अवस्थाओ तथा नैतिक विचारो के अनुकूल बना लिया गया है। ल्यूइज़ियाना राज्य मे प्रचलित अधिकतर कानून फ्रेंच है; वह फ्रान्स से आया हुआ और "कोड नेपोलियन" से लिया हुआ है।

"कॉमन लॉ" पहले के निर्णयो से मिलकर बना है; उनमे ब्रिटिश न्यायालयो के निर्णय भी सम्मिलित हैं। वह सभी साधारण अपराधो और नागरिको के आपसी झगडो पर लागू होता है। अपवाद वहाँ होता है जहाँ विधान मण्डल ने उसके स्थान पर अन्य कोई कानून बना दिया है। जिस "ड्यू प्रॉसेस" अर्थात् "उचित कानूनी काररवाई" की संविधान मे सब अमेरिकी नागरिको को गारण्टी दी गयी है, वह प्राय. वही है जिसे इंगलैण्ड मे "कॉमन लॉ का उचित रीति से पालन" कहते हैं।

उदाहरणार्थ, सन् १८७६ मे इलिनॉय राज्य के न्यायालयो ने गोदामो पर लागू होने वाले इलिनॉय के एक कानून को उचित बतलाया था। उसके विरुद्ध संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय मे इस आधार पर अपील की गयी कि उसके अनुसार किसी भी सम्पत्ति पर "ड्यू प्रॉसेस" या 'कानून की उचित काररवाई' के बिना ही अधिकार किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि गोदामो का नियन्त्रण किया जा सकता है क्योकि उनका सम्बन्ध सार्वजनिक लाभ-हानि से है। न्यायालय ने 'कानूनी काररवाई' की परिभाषा इंगलिश "कॉमन लॉ" के आधार पर ही की थी, क्योकि 'वहीं से वे अधिकार आये जिनकी संविधान रक्षा करता है'। यद्यपि संघीय शासन का आधार उसका अपना संविधान है, परन्तु वह भी उन सब मामलो मे "कॉमन लॉ" अर्थात् परम्परागत अलिखित कानून से ही नियन्त्रित होता है जिनमे उसे विधान मण्डल के कानून द्वारा या संविधान मे संशोधन द्वारा परिवर्तित नही कर दिया गया।

राज्यो के न्यायालय संघीय न्यायालयो की अपेक्षा "इक्विटी" या 'उचित व्यवहार' के मुकदमो की सुनवाई अधिक करते हैं। "इक्विटी" या 'उचित व्यवहार'

उन कुछेक सिद्धान्तो का एक पृथक समुदाय है, जो केवल ऐसे दीवानी झगडो पर लागू होते हैं जैसे किसी जायदाद का उत्तराधिकारियो मे बंटवारा किस प्रकार किया जाय। "इक्विटी" या 'उचित व्यवहार' के आधार पर ही, जज किसी व्यक्ति को कोई काम करने से रोकने के लिए 'इंजंकशन' या हुक्म इमतनाई जारी करने या न करने का निर्णय करता है। वह काम कानून-सम्मत होना भी सम्भव है, परन्तु यदि उससे किसी अन्य व्यक्ति को बिना उचित कारण के हानि पहुचती हो तो 'इंजंकशन' जारी किया जा सकता है।

"इक्विटी" या 'उचित व्यवहार' का विकास इंगलैण्ड मे हुआ था, क्योकि लोग "कॉमन लॉ" से सन्तुष्ट नही थे। वह इतना अधिक कठोर था कि उससे असाधारण परिस्थितियो मे न्याय नही हो सकता था। "इक्विटी" या 'उचित व्यवहार' को 'राजा के विवेक' का प्रतिनिधि समझा जाता था, क्योकि राजा अपने विशेषाधिकार से गहराई तक पहुचकर कानून के संगठन मे प्रत्यक्ष अन्याय का निवारण कर सकता था। राजा के विवेक का रक्षक 'चान्सलर' या मुख्य न्यायाधीश था, और 'चान्सरी कोर्ट' ने कुछ सिद्धान्तो के पृथक समुदाय का विकास किया था जिनमे कुछ नियम चर्च के कानून और रोमन कानून भी लिये गये थे।

चार्लस डिकन्स के पाठको को स्मरण होगा कि इंगलैण्ड मे 'कोर्ट ऑव चान्सरी' अपनी ही विधियो मे इतना उलझ गया था कि बडी-बडी जायदादो के उत्तराधिकारियो के झगडो का फैसला शीघ्र नही हो पाता था। संयुक्त राज्य अमेरिका मे "इक्विटी" या 'उचित व्यवहार' के परम्परागत कानूनो को विधान द्वारा सीमित और नियमित कर दिया गया है। कुछ राज्यो मे 'उचित व्यवहार' के मुकदमो की सुनवाई करने के लिए 'चान्सरी कोर्ट' पृथक् हैं परन्तु अधिकतर राज्यो के न्यायालय और संघ के सभी न्यायालय कानून और उचित। व्यवहार, दोनो के मुकदमो की सुनवाई करते हैं।

अधिकतर राज्यो मे निम्नतम न्यायालय मैजिस्ट्रेट की अदालत या पुलिस अदालत है। उसका जज या मैजिस्ट्रेट, जूरी की सहायता के बिना ही शराब पी कर पागल हो जाने के अपराधी को तीस दिन की जेल का या अत्यधिक तीव्र गति

से मोटर चलाने के अपराधी को जुरमाने का दण्ड दे सकता है। उसको यह अधिकार भी है कि खून करने के अभियुक्त का मुकदमा सुनकर निर्णय करे कि उसे ऊँची अदालत द्वारा सुनवाई के लिए रोका जाय या नही।

मैजिस्ट्रेट से ऊपर नियमित सुनवाई की अदालतें होती हैं जो ऐसे अधिक महत्वपूर्ण मुकदमो की सुनवाई करती हैं जिनमे जूरी की सहायता की आवश्यकता होती है।

अदालतो की गन्दी राजनीति प्राय. मैजिस्ट्रेट या पुलीस कोर्टो मे ही दिखलाई पडती है, क्योकि इन अदालतो के अधिकारियो को प्राय. कानून का प्रशिक्षण नहीं मिला होता है और उनकी नियुक्ति सन्दिग्ध राजनीतिक प्रभावो से हुई होती है। ऊपर की अदालतो मे भ्रष्टाचार कम होता है।

अधिकतर राज्यो मे ऊपर की अदालतो के जजो का चुनाव एक नियत समय के लिए जनता करती है। वकील लोग जजो का निर्वाचित किया जाना पसन्द नही करते, क्योकि निर्वाचित जज बहुधा राजनीतिक हवा के रुख को देखकर चलते हैं। 'बार ऐसोसिएशन' (वकीलो के संघ) चुनाव से पूर्व उम्मीदवारो के नामाकन को प्रभावित करने का यत्न करते हैं, जिससे जज वही व्यक्ति चुने जायं जो उनकी दृष्टि मे अच्छे हो। मजदूरो और किसानो के संगठन निर्वाचन द्वारा जजो की नियुक्ति समर्थन करते है, क्योकि उनका ख्याल है कि यदि जजो की नियुक्ति गवर्नर या विधान मण्डल पर छोड दी जायगी तो वे बडे-बडे व्यापारियो के पक्षपातियो को जज बना देगे। इस प्रकार राज्यो की ऊपरी अदालतें राज्य मे काम करती हुई राजनीतिक शक्तियो का लिहाज करने के लिए विवश रहती हैं, और अमेरिकी जनता के अधिकतर मुकदमे इन्ही अदालतो मे होते हैं। और इसीलिए वे न्याय और ईमानदारी के उस दर्जे की प्रतिनिधि होती है जिसे मतदाता लोग चाहते हो या सम थत करने के लिए तैयार हो।

राज्यो के शासन मे कर्मचारियो की नियुक्तिया साधारणतया राजनीतिक पक्षपात से अधिक और योग्यता के आधार पर कम होती हैं। संघ के शासन मे

राजनीतिक पक्षपात इतना अधिक नही होता। राज्यो के विधान मण्डलो के समान, यहा सिविल सर्विसे भी जनता की उपेक्षा का शिकार बनी रहती है। परन्तु अब अनेक शक्तिया सुधार की दिशा मे बढ रही है।

ऐसी एक शक्ति 'टेकनीकल' सेवाओ का बढ जाना है। उदाहरणार्थ, स्वास्थ्य-रक्षा और इंजिनीयरिंग की सेवाओ मे साधारण राजनीतिक दावपेंच लगाने वाला व्यक्ति यदि घुस भी जायगा तो शीघ्र ही वह पदारूढ पार्टी की सार्वजनिक आलोचना का शिकार बन जायगा। इन सेवाओ मे नियुक्तिया योग्यता के आधार पर करनी पडती हैं और यह प्रथा अब फैलती जा रही है।

एक अन्य शक्ति संघीय सहायता की है। इस धन का स्थानीय उपयोग करने का भार राज्य के अधिकारियो पर रहता है और इसलिए इनके कारण पहले-पहल तो रिश्वतखोरी और अव्यवस्था खूब होती है, परन्तु कुछ समय पश्चात इस व्यवहार के कारण जनता जाग्रत हो जाती है। वाशिंगटन मे भी पदारूढ पार्टी अनुभव करने लगती है कि उसे राज्य की सहायता करने का यश नही मिल रहा है। फल यह होता है कि अगली बार सहायता देते समय यह शर्त साथ लग जाती है कि संघीय कोष से मिली हुई धन-राशि का व्यय करते समय राज्य नियुक्तिया योग्यता के आधार पर करें।

इन शक्तियो के द्वारा राज्यो के शासन मे योग्य और ईमानदार व्यक्तियो की नियुक्ति मे सहायता मिलने के कारण, राज्यो की राजधानियो मे नागरिको के उन संगठनो का भी बल बढ जाता है जो शासन सुधार का आन्दोलन करते है।

अधिकतर राज्यो के शासनो को अपना व्यय अपनी आय के भीतर रखने मे कठिनाई होती है। इसका कारण यह नही कि उनके बजट अन्य अमेरिकी संगठनो से बडे होते हैं, अपितु यह है कि करो की वसूली मे उनकी स्थिति निर्बल है। किसी कृषि प्रधान राज्य का बजट दस से बीस करोड डालर तक का और न्यू यार्क सरीखे किसी राज्य का सौ करोड डालर तक का हो सकता है। ये बजट अमेरिका के मध्यम और बडे व्यापारिक कार्पोरेशनो से मिलते-जुलते हैं। न्यू यार्क राज्य का बजट न्यू यार्क नगर के बजट से छोटा होता है।

राज्य-सरकारो के कर लगाने की मद जमीन जायदाद, चल सम्पत्तिया, रोजगार चलाने के लाइसेन्स, क्रय-विक्रय, व्यापारिक या निजी आय, और पेट्रोल तथा सिगरेट पर उत्पादन-कर इत्यादि है। सम्पत्तियो पर कर सीमित ही रखना पडता है, क्योकि वह स्थानीय स्वशासन-संस्थाओ की आय का एक बडा साधन है। इसके अतिरिक्त सम्पत्ति पर समस्त कर इतना ऊंचा नही होना चाहिए कि उसका स्वामी उसे छोडने के लिए तैयार हो जाय। आय-कर इस कारण सीमित हो जाता है कि संघीय शासन उसे भारी मात्रा मे वसूल कर लेता है, विशेषतः ऊंची आय वालो से। जो सम्पन्न व्यक्ति अपनी आय का ६० या ७५ प्रतिशत संघीय शासन को दे देता है, वह अपनी शेष का उतना ही प्रतिशत राज्य-सरकार को नही दे सकता।

इसलिए राज्य-सरकारें आय-कर लगाते हुए ऊंची और नीची आयो मे उतना अधिक अन्तर नही कर सकती जितना संघीय शासन कर देता है। सम्पत्ति-कर, बिक्री-कर और पेट्रोल तथा तम्बाकू पर उत्पादन-कर का प्रभाव चूंकि ऊंची आय वालो की अपेक्षा नीची आय वालो पर अधिक पडता है इसलिए राज्यो के करो की साधारण प्रतिक्रिया व्यापार मे सुस्ती छा जाने की होती है। यदि कोई राज्य करो की दर ऊंचे उठाने का अधिक यत्न करे तो उसका फल यह होता है कि व्यापार का प्रवाह तुरन्त ही पडोस के उस राज्य की ओर को मुड जाता है जिसमे वस्तुएं सस्ती मिल सकती हैं।

आय की न्यूनता के कारण राज्य-सरकारें जिम्मेवारिया भी न्यून उठाती है और उनकी प्रवृत्ति अपना कुछ बोझ संघीय शासन पर डाल देने की हो जाती है। राज्य संघीय कोष से कई प्रकार की महत्वपूर्ण सहायता पाने की आशा करते हैं। सडको और स्कूलो की सहायता तो अमेरिकी परम्परा मे पुरानी चली आती है। सन् १९३३ से, बेरोजगारी तथा अन्य अनेक प्रकार की कठनाइयो मे राज्यो को सहायता देने का उत्तरदायित्व संघ के सामाजिक-सुरक्षा विभाग पर जा पडा। कठिन समयो पर सार्वजनिक निर्माण कार्यो के लिए संघ की ओर से अधिकाधिक सहायता देने का सिद्धान्त अब प्रायः सर्वत्र मान लिया गया है।

राज्यो को संघीय सहायता देने का सिद्धान्त दो आर्थिक सत्यो पर आधारित है। प्रथम यह कि संघ की कर वसूल कर सकने की शक्ति राज्यो से अधिक है, क्योकि उसके कर से कोई व्यक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका से बाहर जाकर ही बच सकता है और द्वितीय यह कि आर्थिक समानता समस्त देश के लिए ही लाभदायक है। कुछ राज्य अन्यो की अपेक्षा अधिक सम्पन्न हैं। साधारणतया, सम्पन्न राज्यो के लिए समर्थ लोग पूंजी लगाकर निर्धन राज्यो मे व्यापार करके वहा कि आय अपनी ओर खीच सकते हैं। यदि संघीय शासन सम्पन्न राज्यो के लोगो पर कर लगाकर उसकी वसूली से प्राप्त हुए धन का कुछ भाग निर्धन राज्यो को दे दें तो धन के आदान-प्रदान का प्रवाह रुकने नही पाता और समृद्धि का चक्र चलता रहता है। इस प्रकार समानता का तर्क राज्यो की स्वावलम्बिता के सरल तर्क पर विजयी हो जाता है।

इसी प्रकार राज्य-सरकारो का एक बडा उत्तरदायित्व यह है कि वे राज्य के धनी और निर्धन भागो मे असमानता के कुछ अंश को समान कर दे। साधारणतया, ग्राम भागो के साथ व्यापार करते हुए लाभ का बडा भाग नगरो में पहुंच जाता है। यदि उसमे हस्तक्षेप न किया जाय तो देहातो की जायदादें धीरे-धीरे नगरो के बैंको, बीमा कम्पनियो, और अन्य पूंजी लगाने वालो के स्वामित्व मे आती जाती हैं, जैसा सन् १६३३ से पहले हुआ था। इसका परिणाम साधारण समृद्धि की दृष्टि से नही होता। निजी व्यापार के असन्तुलित परिणामो को ठीक करने के लिए आवश्यक होता है कि राज्य निर्धन प्रदेशो की सहायता करें। उस सहायता का रूप साधारणतया राज्य के व्यय पर सडको और सार्वजनिक भवनो का निर्माण, और स्कूलो, पुस्तकालयो तथा अन्य स्थानीय कल्याण-कोषो को प्रत्यक्ष धन का दान होता है।

असमानता को मिटाने की आवश्यकता और कर लगाने मे संघ की ऊंची शक्ति के कारण राज्यो की आखे वाशिंगटन की ओर अधिकाधिक उठने लगी हैं। उनकी सहायता वही से प्राप्त होती है। परन्तु इस प्रवृत्ति से अमेरिकी जनता चिन्तित होती जा रही है। इस चित्र का दूसरा पहलू यह है कि संघीय शासन की केन्द्रीय नौकरशाही और उसके प्रदेशिक तथा स्थानीय दफ्तर तो बढते चले जा रहे हैं और

राज्यो का प्रभाव तथा उत्तरदायित्व घटते जा रहे हैं। दोनो राजनीतिक पार्टियो के नेता चाहते हैं कि संघीय सहायता मे वृद्धि को सीमित करने का कोई उपाय निकाला जाय। गवर्नर स्टीवन्सन ने जो सन् १९५२ मे राष्ट्रपति पद के चुनाव मे खडे हुए थे, इस बात पर विशेष बल दिया था कि उत्तरदायित्व वाशिंगटन (अर्थात् केन्द्रीय या संघीय सरकार की ओर) से राज्यो की ओर को और राज्यो की ओर से स्थानीय शासनो की ओर को यथाशक्ति अधिकाधिक विकेन्द्रित कर दिया जाय। सन् १९५३ के आरम्भ मे राष्ट्रपति आइजनहावर ने आज्ञा दी थी संघीय और राज्यीय आमदनियो और जिम्मेवारियो के पारस्परिक सम्बन्धो का व्यापक अध्ययन किया जाय, जिससे राज्यो से राजनीतिक जीवन को अधिक स्वस्थ बनाया जा सके।

राज्यो के सम्मान और उत्तरदायित्व को ऊँचा उठाने के लिए अनेक बार अनेक उपाय सुझाये गये हैं। एक उपाय यह है कि संघीय शासन कुछ करो को न लगावे, जैसे पेट्रोल का टैक्स, क्योकि राज्य अपनी सडको का व्यय चलाने के लिए इसी पर निर्भर करते हैं। एक सुझाव यह है कि जो राज्य कुछ विशिष्ट करो को लगाने मे उपेक्षा करे उसके नागरिको से उन करो को संघीय शासन वसूल कर ले; जो नागरिक अपने राज्य को वह कर दे रहे हो उनमे वह वसूल न किये जायँ। उदाहरणार्थ, इस प्रकार का दबाव राज्यो को संघ भी सामाजिक-सुरक्षा व्यवस्था के साथ सहयोग करने के लिए विवश करने को डाला गया था। आय-कर के सम्बन्ध मे भी इस उपाय के अवलम्बन का सुझाव दिया गया है। यदि कोई भी राज्य प्रतिस्पर्धा के लिए व्यापारियो या अपने यहा आने वाले सम्पन्न लोगो के सामने आसान शर्तें पेश न करे तो राज्यो की आय बहुतेरी बढ सकती है।

केन्द्रीकरण की स्वाभाविक और प्रबल प्रवृत्ति को रोकने का प्रयत्न राजनीति-उपायो से यथाशक्ति किया जायगा और शायद इसके लिए कृत्रिम साधन भी काम मे लाये जायंगे, क्योकि अपने राज्यो के शासन की बहुधा उपेक्षा करते रहने पर भी अमेरिकी जनता का स्वभाव यही है कि जब उसके राज्य पर संकट आता दिखाई देता है तब वह उसकी सहायता करने मे पीछे नही रहती।

अध्याय ९

स्थानीय शासन

संयुक्त राज्य अमेरिका मे आधे से अधिक लोग नगरो मे रहते है, और इनमे से लगभग एक सौ नगरो की आबादी एक लाख से अधिक है। शेष अमेरिकी लोगो के लिए स्थानीय शासन का काम मुख्यतया काउण्टिया (जिले) करती है। इनके अतिरिक्त स्कूलो, स्वास्थ्य की सेवाओ, और अन्य अनेक प्रयोजनो के लिए हजारो विशेष जिले भी है। इन जिलो की सीमाएं और काउण्टियो, नगरो तथा अन्य जिलो की सीमाएं एक दूसरे के ऊपर भी छा जाती है। इस कारण हो सकता है कि किसी नागरिक को शासन की संघ, राज्य, नगर, काउण्टी और जिला आदि आधा दर्जन इकाइयो के टैक्स देने पडते हो।

टॉमस जेफरसन नगरो से घृणा करते थे और उन्हे भ्रष्टाचार का नाबदान कहा करते थे। वस्तुत उन्नीसवी शताब्दी मे संयुक्त राज्य अमेरिका के नगरो का राजनीतिक जीवन भ्रष्टाचार के लिए बदनाम था। इसका एक बडा कारण यह था कि युरोप मे और अमेरिकी देहातो से नये लोगो के जो झुड के झुंड नगरो मे आते थे वे सुगमता से वहाँ की राजनीतिक 'मशीनो' का शिकार बन जाते थे। सन् १९०० के पश्चात् नगरो के शासन की कुशलता और ईमानदारी मे कुछ सुधार हुआ है। इस सुधार का एक कारण यह है कि हाल के वर्षो मे रहन-सहन का दर्जा ऊंचा होता गया और नगरो के श्रमिको की सामाजिक सुरक्षा उन्नत हो गयी है। इसलिए उस सहायता और सहानुभूति की आवश्यकता कुछ कम हो गयी है जिसे

राजनीतिक "बास" अर्थात् 'मालिक' आप से आप बाटते फिरा करते थे। सुधार का एक अन्य कारण यह भी है कि नगरो मे शासन की अधिक कुशलतापूर्ण पद्धति अपना ली गयी है।

नगरो को स्वयं तो स्वयंप्रभुता के कोई अधिकार प्राप्त नही हैं, परन्तु नागरिक जैसा 'चार्टर' या अधिकार-पत्र चाहते हैं वैसा राज्य से प्राप्त करने के लिए वे कुछ प्रभाव अवश्य डाल सकते हैं। नगरो मे तीन प्रकार की शासन-प्रणालियां प्रचलित है। "मेयर और कौन्सिल" की मूल प्रणाली अब भी सर्वाधिक प्रचलित है। "कमीशन" की प्रणाली को पहले-पहल टेक्सास राज्य के गैल्वेस्टन नगर मे प्रसिद्धि प्राप्त हुई, जहा इसे सन् १६०१ मे पानी की विनाशक बाढ के पश्चात् आयी आपत्ति का सामना करने के लिए अपनाया गया था। उसके पीछे लगभग पन्द्रह वर्ष तक यह मध्यम आबादी के अन्य नगरो मे भी फैलती चली गयी, परन्तु उसके पश्चात् इसके अनुयायी बनने बन्द हो गये। उसके पश्चात् लोकप्रियता तीसरी "कौन्सिल-मैनेजर" अथवा 'सिटी-मैनेजर' प्रणाली की बढ़ने लगी; और इस समय मध्यम श्रेणी के नौ सौ से अधिक नगरो मे इसी के अनुसार काम हो रहा है।

पुराने ढंग के "मेयर और कौन्सिल" शासन में कौन्सिल-मैन (सभासद) अथवा 'ऐल्डरमैन' (विशिष्ट सभासद) स्थानीय राजनीतिज्ञ हुआ करते थे, और नगर के कर्मचारी राजनीतिक सेवा का इनाम देने के लिए नियुक्त किये जाते थे। नगरो की भ्रष्टाचारी 'मशीनो' को शासन की यह प्रणाली निम्न कोटि की राजनीतिक कारस्वाइया करने के लिए खूब उपयुक्त लगती थी, और इस कारण वे शासन को कोई नयी प्रणाली अपनाने का प्रायः विरोध करती थी। परन्तु "मेयर और कौन्सिल" पद्धति मे भी अब अनेक सुधार हो चुके हैं।

अधिकतर 'कौन्सिलें' अब दो के स्थान पर एक ही सदन वाली रह गयी हैं। इन अकेले सदनो की भी सदस्य-संख्या अब घट गयी है और वे सदस्य आम चुनाव द्वारा निर्वाचित होते हैं। ज्यो-ज्यो ऐसी सार्वजनिक सेवाओ का अधिकाधिक उत्तरदायित्व नगरो पर पडता जाता है जिनके लिए उच्च-प्रशिक्षित सेवको की आवश्यकता होती है त्यो-त्यो नगरो के शासनो का भी पुनर्गठन होता जाता है।

बहुत से नगरो ने मेयर के अधिकार बढा कर उसे शासन की व्यवस्था करने के लिए अधिक उत्तरदायित्व सौंप दिया है। इस प्रकार वे "सिटी-मैनेजर" पद्धति को न अपनाते हुए भी आचरण उसके समान ही करने लगे हैं।

नगर-शासन की "कमीशन" प्रणाली इसलिए चली थी कि उत्तरदायित्व ऐसे कुछेक लोगो के हाथ मे रहे जो प्रभावशाली होने के कारण जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किये रह सकें। कमीशन के सदस्य प्राय. पाच होते हैं। उनमे से एक चेयरमैन होता है। वह मेयर कहलाता है। नीतियो का निर्धारण तो सारा कमीशन करता है, परन्तु प्रत्येक सदस्य किसी विशेष विभाग का उत्तरदायित्व उठा लेता है। इस पद्धति की सबसे बडी त्रुटि यह है कि कमीशन यदि किसी उलझन मे फंस जाय तो उसे सुलझाने का अधिकार किसी को नहीं रहता।

"कौन्सिल-मैनेजर" प्रणाली का परीक्षण पहले-पहल सन् १९०८ मे वर्जीनिया राज्य के स्टौण्टन नगर मे किया गया था। इस प्रणाली मे नगर के लिए नीतियो का निर्धारण और नियमो की रचना तो कौन्सिल करती है, परन्तु शासन एक मैनेजर के हाथ मे रहता है। उसकी नियुक्ति कौन्सिल करती है। वह अन्य किसी नगर का निवासी भी हो सकता है। सफल मैनेजर ज्यो-ज्यो अपने कार्य मे अधिक कुशलता प्राप्त करते जाते हैं, त्यो-त्यो वे अधिक अच्छी नौकरी पाने की आशा करने लगते हैं। नगर के अन्य कर्मचारियो की नियुक्ति उनकी योग्यता के आधार पर मैनेजर करता है और इस प्रकार उसे अपना काम भली प्रकार कर सकने के लिए पर्याप्त स्वतन्त्रता रहती है।

"मैनेजर प्रणाली" का आधार, निजी व्यापार के मूल सिद्धान्त के समान, यह है कि नगर की जनता जो कुछ चाहे वह उसे न्यूनतम मूल्य मे उत्कृष्टतम मिलना चाहिए। लोगो को नगर के कार्पोरेशन का संचालन, किसी साधारण निजी कार्पोरेशन के समान, एक मैनेजर और एक बोर्ड ऑव् डाइरेक्टर्स की नियुक्ति के द्वारा करना उपयुक्त जंचता है। उसमे उनकी अपनी स्थिति शेयर होल्डरो सरीखी रहती है।

स्पष्ट है कि यदि लोग चाहे तो नगर का शासन, देश की अपेक्षा, बहुत कम राजनीति से चल सकता है। नगर मे ऐसी समस्याएं कम होती हैं जो केवल

राजनीति के द्वारा सुलझ सकती हैं। उदाहरणार्थ, उन्हें वैदेशिक सम्बन्धो या कागजी मुद्रा के संकोच या विस्तार जैसी उन समस्याओ से कोई वास्ता नही होता जिनका निर्णय वाशिंगटन मे करना पडता है। इसके विपरीत वे अल्पसंख्यक लोग "मैनेजर प्रणाली" की निन्दा करते है जो बहुमत द्वारा निर्वाचित और बहुसंख्यको का प्रतिनिधित्व करने वाली कौन्सिल की अधीनता मे अपने आपको अरक्षित समझते हैं। कुछ नगरो ने लोगो के राजनीतिक मतभेदो को स्वीकार करने की आवश्यकता का अनुभव करके उन्हे कौन्सिल मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रदान कर दिया है। इस व्यवस्था के अनुसार यदि किसी अल्पसंख्यक वर्ग को चुनाव मे दो तिहाई मत मिल जायं तो उसे कौन्सिल मे भी दो तिहाई स्थान मिल जाते हैं। निर्वाचन की साधारण पद्धति मे शायद उसे एक भी स्थान न मिल सकता। यदि आनुपातिक प्रतिनिधित्व को राष्ट्रीय निर्वाचनो मे भी अपनाया जायगा तो उससे छोटी-छोटी ऐसी पार्टियों को बढावा मिलेगा जो एक पार्टी मे से फूटकर निकलती है। इस कारण इसे द्विदलीय पद्धति के लिए भय का कारण समझा जाता और इसका विरोध भी किया जाता है। इस आपत्ति के कारण आनुपातिक प्रतिनिधित्व का प्रयोग नगरो मे भी कम ही हुआ है।

नगरो के शासन का काम स्वयं नगरो के विस्तार की अपेक्षा भी अधिक तीव्र गति से बढा है। इसका कारण उन नयी-नयी सेवाओ का आविष्कार है जिनके बिना काम चलाने के लिए अब नागरिक तैयार नही होते। इसके अतिरिक्त अब नगरो का काम द्रुत परन्तु महंगी यातायात और स्वास्थ्य व्यवस्थाओ के बिना भी नही चल सकता। जॉर्ज वाशिंगटन के समय इनकी आवश्यकता नही थी। भवनो तथा सडको के निर्माण, आग बुझाने की व्यवस्था, स्कूलो और पुस्तकालयो और पुलीस के प्रबन्ध आदि व्यय नगर की आय बढाने की सामर्थ्य की अपेक्षा कही अधिक होता जा रहा है।

आय के मुख्य स्रोत जमीन-जायदाद, बिक्री-कर और व्यापार पर सीधे कर हैं। परन्तु जमीन-जायदाद और बिक्री के कर भी व्यापार पर निर्भर करते हैं। यदि

नगर अपने करो की नींव पर भारी बोझ डाल देगा तो व्यापार उन उपनगरो मे चला जायगा जो नगर के कर लगाने के अधिकार से परे होंगे।

नगर जो आमदनी कर सकता है और जीवित रहने के लिए उसे जो कुछ करना पडता है, उन दोनो मे अन्तर रहने के कारण अधिकतर नगर सरकारे सहायता के भरोसे रहने लगे है। उनके राज्यो पर देहाती मतदाताओ का प्रभाव होता है और वे समान बंटवारे मे अर्थात् नगरो से कर वसूल करके उसे देहातो मे फैलाने मे लगे रहते हैं, इस कारण नगर संघ की सहायता पर अधिक भरोसा करते है।

सन् १९५३ मे न्यू यार्क मे, न्यू यार्क नगर के मेयर और राज्य के गवर्नर मे यह विवाद उठ खडा हुआ था कि नगर को राज्य से कितनी सहायता मिलनी चाहिए।। राज्य अपनी आय का ५५ प्रतिशत स्थानीय शासनो को सहायता देने पर व्यय कर रहा था। न्यू यार्क नगर का राज्य से जो सहायता मिल रही थी। वह उसके (नगर के) सारे वजट का १५ प्रतिशत वतलायी जाती थी। मेयर की शिकायत का आशय यह था कि राज्य के कानूनो मे बंटवारे के नियम ऐसे होते है कि उनके कारण छोटी इकाइयो को सहायता का भाग अनुचित रूप से अधिक मिल जाता है।

संघीय सरकार से नगरो की अपील का आधार समानता का सिद्धात नही है, क्योकि अधिक धन तो वडे नगरो मे ही केन्द्रित रहता है। उसका आधार कर लगाने की सामर्थ्य का अन्तर है। नगर सम्पन्न पुरुषो या कार्पोरेशनो पर भारी कर नही लगा सकते, क्योकि वैसा करने से उनके दफ्तर नगर छोड कर चले जायँगे। परन्तु संघीय सरकार उन पर भारी कर लगा सकती है और उससे मिले हुए धन का कुछ भाग नगरो को दे सकती है। वह करती भी यही है।

इस सवका परिणाम यह हुआ है कि "ग्रेट डिप्रेशन" अर्थात् सन् १९३० के वाद की भारी मन्दी मे जनता को सहायता देने के भारी वोझ के कारण जवसे नगरो की कमर टूटी है तवसे नगर-शासनो मे यह प्रवृत्ति आ गयी है कि राज्यो को तो वे क्रूर सौतेली माता और संघीय शासन को उदार चाचा के समान मानने लगे हैं।

नगरो की वहुत-सी सेवाओ के, विशेषत नयी और 'टेक्नीकल' सेवाओ के तो ईमानदारी और कुशलता के दर्जे मे तो प्रशसनीय उन्नति हुई है, परन्तु अधिकतर

नगरो की पुलीस ने वैसी उन्नति नही की उसमे, योग्यता के आधार पर नियुक्तियो का आविष्कार होने से पहले की, राजनीतिक नियुक्तियो और राजनीति से प्रभावित होने की पुरानी ही परम्परा 'चली आ रही है। उसका संगठित अपराधियो के साथ सीधा सम्पर्क रहता है और वे अपने बचाव का उसे अच्छा मूल्य दे देते हैं। पुलीस कर्मचारियो को वेतन प्रायः थोडा मिलता है और 'भले' लोग उन्हे सन्देह तथा घृणा की दृष्टि से देखते हैं। सन् १९५० और सन् १९५१ मे सेनेटर एस्टेस केफौवर की अध्यक्षता मे एक समिति ने अन्तर्राष्ट्रीय अपराधो की जांच की थी और उसे इस बात के प्रमाण मिले थे कि नगरो की पुलिस को संगठित अपराधियो से नियमित रकमे मिलती हैं। आशा है कि ज्यो-ज्यो अपराधो की जाच की विधियो मे उन्नति के कारण अधिकाधिक उच्च प्रशिक्षित मनुष्यो को आवश्यकता पडती जायगी और ज्यो-ज्यो जनता पुलीस पर अधिक ध्यान देगी और उसकी कठिनाइयो को समझती जायगी त्यो-त्यो अन्य सार्वजनिक सेवाओं के समान पुलीस भी सुधर जायगी।

जो छ: करोड अमेरिकी नगरो मे नही रहते उनके लिए स्थानीय शासन का मुख्य रूप 'काउण्टियो' अर्थात् छोटे जिलो का शासन है। काउण्टी औपनिवेशिक काल से अभी तक प्रायः अपरिवर्तित ही चली आ रही है। उसका शासन एक बोर्ड करता है। उसके सदस्य प्राय. दस से भी कम होते हैं। बोर्ड का चेयरमैन ही बहुधा काउण्टी की अदालत का जज भी होता है। काउण्टी के दफ्तर मे जमीन-जायदादो के कागजात, वसीयतनामो, विवाहो और अन्य ऐसे निजी दस्तावेजो को सुरक्षित रखा जाता है जिनकी कभी सार्वजनिक प्रयोग के लिए आवश्यकता पड सकती है। काउण्टी स्थानीय सडकें बनाती, राज्य और देश के निर्वाचनो का स्थानीय प्रबन्ध करती और जनगणना तथा सेना में भरती आदि के कामो मे स्थानीय इकाई का काम देती है। शेरिफ (कानून का पालन कराने वाला अधिकारी,) कोरोनर (मृत्यु के कारणो की जाच करने वाले), अदालत, और जेल का प्रबन्ध भी काउण्टी ही करती है।

विभिन्न राज्यो मे काउण्टियो को विभिन्न प्रकार का कार्य करना पडता है।

उनके अधिकारियो के नाम विभिन्न हैं और उनकी ईमानदारी या भ्रष्टाचार का दर्जा भी विभिन्न है। उनके शासन का जनता से निकटतम सम्पर्क और जड पुरानी परम्पराओ मे बहुत गहरी गयी हुई है। काउण्टियो के बहुत से काम लोग शौकिया करते है, और वह भी प्राय. बिना कुछ लिए अपना कुछ समय लगाकर। देहातो के लोग प्राय परिवर्तन-विरोधी स्वभाव के होते हैं और अपने बाप-दादो से चले आये रीति-रिवाजो मे परिवर्तन शीघ्र नही करते। अकुशलता और भ्रष्टाचार भी लोगो की पुरानी आदतो का अंग है।

सडको और स्कूलो का भार अब धीरे-धीरे काउण्टियो पर से उठकर राज्यो और संघ के कोशो पर पडता जा रहा है। गाँव-दिहात मे हुए कत्लो की जाच के लिए भी अब राज्य के गुप्तचरो का उपयोग होने लगने की सम्भावना है। इस प्रकार केन्द्रीकरण की वृद्धि के साथ-साथ काउण्टियो के परम्परागत काम कम होते जा रहे हैं। साथ ही केन्द्रीकरण के कारण, काउण्टी के शासनो मे अनेक नये पदो की सृष्टि हो गई है। पहले इन पदो का काम शासन की निम्नतम इकाई स्थानीय डिस्ट्रिक्ट या जिले से चल जाया करता था।

अधिकतर स्थानीय डिस्ट्रिक्ट या जिले स्कूल चलाने के लिए बनाये जाते है। अन्य जिले कर-जिले या सडक जिले अथवा निर्वाचन-जिले आदि होते है। निर्वाचन-जिला निर्वाचन के दिन मतदान के केन्द्र की व्यवस्था करता है। अथवा जिला केवल उतना क्षेत्र हो सकता है जितना किसी 'जस्टिस ऑव दी पीस' या छोटे मजिस्ट्रेट के आधीन हो। जिलो का कोई संगठन यदि हो भी तो उसका रूप सरलतम रहने की सम्भावना होती है। पक्की सडके बनाने पर ज्यो-ज्यो मोटरो का प्रयोग बढता जाने के कारण एक कमरे वाले ग्रामीण स्कूल केन्द्रीय स्कूलो मे मिलते जाते हैं और अन्य स्थानीय कामो का केन्द्र बनाता जाता है त्यो-त्यो स्थानीय डिस्ट्रिक्ट या जिले मिटकर 'प्रेत' या 'भूत' मात्र रहते जा रहे है।

न्यू इंगलैण्ड मे मूल स्थानीय इकाइयां 'टाउन' थे। न्यू इंगलैण्ड के टाउनो का क्षेत्र प्राय. तीस से साठ वर्गमील तक होता है। यह क्षेत्र लगभग इतना बडा होता है कि उसमे रहने वाला किसान अच्छे मौसम मे घोडा बग्घी गाडी द्वारा

कचहरी तक जाकर वापस लौट सके। शासन का प्राथमिक आधार 'टाउन' की सभा है। उसमे एकत्र होकर नागरिक 'टाउन' के मामलो का प्रबन्ध करने के लिए 'सिलेक्टमैनो' (निर्वाचित जनो) का चुनाव करते, कर लगाते, और यह निर्णय करते हैं कि क्विन्सी स्ट्रीट को पक्का बनाया जाय या नही और पार्क के लिए बेञ्चें खरीदी जायं या नही। यह विशुद्ध जनतन्त्र तभी तक ठीक चलता है जब तक कि आबादी बढकर विकट रूप धारण नही कर लेती, और तब 'टाउन' राज्य से कह देता है कि उस पर 'सिटी' अर्थात् बडे नगर की व्यवस्था लागू कर दी जाय।

टाउन और काउण्टी के बीच की एक वस्तु 'टाउनशिप' थे। वे प्राय. छः मील वर्ग होते थे और कुछ राज्यो मे स्थापित किये गये थे परन्तु पक्की सडके बनने के पश्चात् यात्रा सुगम होती जाने के कारण ये काउण्टियो मे मिलते जा रहे हैं।

जिन पुरानी बस्तियो, जिलो ग्रामो, और पडोसो मे लोग पहले परस्पर मिलते-जुलते, क्रय-विक्रय करते, या गिरजाघर जाने के लिए पैदल या घोड़े पर आया-जाया करते थे उन सब पर मोटर के चलने का प्रभाव उन्हे बखेर देने के रूप मे बडा है। बडे शहरो मे यातायात की आधुनिक सुविधाओ के कारण एक ही 'ब्लॉक' मे रहने वालो मे भी अपने काम-काज, मित्र, स्कूल, और चर्च एक दूसरे से बिल्कुल अलग रखने की प्रवृत्ति बढती जा रही है। इस परिवर्तन के कारण वह समाजिक और राजनीतिक जीवन खोखला हो गया है जिसे "ग्रास-रूट्स" का नाम दिया जाता था। लोग अब भी राजनीति सीख सकते हैं और पार्टियो के संगठन मे भाग ले सकते है, परन्तु पहले की अपेक्षा कुछ क्षेत्रो से आरम्भ करके और बहुसंख्यक अपरिचितो के मध्य मे बैठकर।

पडोसियो के साथ परिचय और निकटता के सम्बन्ध टूट जाने के कारण अपने पन की भावना नष्ट हो गयी है उसे पुनर्जीवित करने के लिए अमेरिकी लोग अपने रीति-रिवाजो और संगठनो को पुर्नव्यवस्थित करने का प्रयत्न अनेक प्रकार से कर रहे है। संयुक्त राज्य से अमेरिका की सरकार तक अपने कार्यों को यथाशक्ति विकेन्द्रित करने का प्रयत्न कर रही है। कृषि विभाग ने कृत्रिम रूप के पडोसी समुदाय तक संगठित करने का प्रयत्न किया है। वह कृषि प्रशिक्षण के किसी क्रम

का अध्ययन करने के लिए कुछ समूहों को एकत्र करता और उनमे खाने-पीने की वस्तुएं बाट कर उनके परिवारो को एक दूसरे से पड़ोसियो की भाति मिलने का अवसर देता है। एकीभूत संगठित ग्रामीण स्कूल, ग्रामो के बिजली सहकारी सगठन, और राज्य विश्वविद्यालय, ये सब नवीन परन्तु ऐसे विस्मृत पड़ोसों को पुनर्जीवित करने का यत्न कर रहे हैं जिनकी सीमा मोटर गाडी की पहुच के भीतर हो।

नयी संस्थाओं का संगठन कृत्रिम तो अवश्य है, परन्तु इतने मात्र से वे कुछ कम अमेरिकी नही हो जाती। अमेरिकियो को जब आवश्यकता हो तब नयी सस्थाए खडी करके प्रसन्नता होती है। यान्त्रिक प्रगति के कारण जीवन का जो केन्द्रीकरण होता जा रहा है, उसके प्रति अमेरिकियो का भाव भारी अविश्वास का है। वे विकेन्द्रीकरण के और "ग्राम स्टूप" को फिर से पुनर्जीवित या पुन. संघटित करने के उपायो की खोज मे रहते हैं, क्योकि उनकी सहज बुद्धि उन्हे बतलाती है कि राजनीतिक जीवन को प्राण "ग्राम स्टो" से ही मिलते हैं। अमेरिकी जीवन के बडे छोटे सभी शासनो की क्रमिक प्रगति, केन्द्रीकरण और विकेन्द्रीकरण की शक्तियो के दबाव से प्रभावित हो रही है।

अध्याय १०

शासन और व्यापार

संयुक्त राज्य अमेरिका की अर्थ व्यवस्था भी, अन्य लोकतन्त्री देशों के समान, मिली-जुली है। स्कूलो की पुस्तको मे जिस अर्थ-व्यवस्था का वर्णन "केपिटलिस्ट" या पूंजीपतियो की अर्थ व्यवस्था के नाम से किया गया है, यहाँ उसके उदाहरण के रूप मे परस्पर प्रतिस्पर्धा पर आधारित स्वतन्त्र उद्योग भी हैं, जिनमें अधिकतर छोटे-छोटे व्यापारियो, कारखानो, किसानो, और स्वाधीन पेशा-वर लोगो की गणना होती है, और ऐसे बडे-बडे उद्योग भी है जो बाजार की कीमतो को अपने हाथ मे रख कर या अन्य प्रकार व्यापार का नियन्त्रण करते रहते हैं। इन्हे कभी-कभी "मोनोपोलिस्टिक कम्पिटीशन" अर्थात् एकाधिकारियो की प्रतियोगिता के नाम से भी पुकारा जाता है। यहाँ टेलीफोन और घरेलू बिजली की सर्विस, सरीखे प्राकृतिक "मोनोपली" (एकाधिकार) भी है। यहाँ ऐसे सहकारी उद्योग भी हैं, जिनका लाभ हिस्सेदारो के स्थान पर उनके ग्राहको मे ही बंटता है। यहाँ ऐसी लाभ न कमाने वाली संस्थाएँ भी हैं, जो नाना प्रकार की सेवाएं करती हैं और अंशत. या पूर्णत. चंदो पर चलती है। इनका उदाहरण, चर्च, प्राइवेट विश्वविद्यालय, सभा-समाज, क्लवे, परोपकारी संस्थाएँ और मजदूर यूनियने है। इनके अतिरिक्त यहाँ सरकारी स्कूलो और डाक-घरो जैसे सरकारी स्वामित्व मे चलने वाले उद्योग भी हैं।

व्यापार के साथ शासन का सम्बध दुर्बोध है, सरल नही। इसका कारण विभिन्न प्रकार की अर्थ-व्यवस्थाएँ हैं। उनमे से प्रत्येक की आवश्यकताएँ और रूप पृथक्-पृथक्

हैं। संघीय, राज्यीय और स्थानीय शासनो की व्यवस्थाएं भी उनमे सम्मिलित हैं। सरकारी सहायता की अधिकतर मागे छोटे वडे व्यापारियों, वैकरो और किसानों आदि जनता के 'पूंजीपति' भागो की ओर से की जाया करती हैं और उनमे वहुधा परस्पर तीव्र विरोध होता है। परन्तु सरकारी सहायता चर्चों, कालिजों और सहकारी संस्थाओ को भी दी जाती है। उसका रूप प्राय. करो से मुक्ति का होता है। सरकारी नियन्त्रणो का प्रभाव अन्य प्रकार के रोजगारो की अपेक्षा प्राकृतिक एकाधिकारो पर अधिक पडता है।

संविधान के अनुसार संघीय शासन संगठित करने का प्रथम उद्देश्य वही था जो कि युरोप मे शुभ-योजना चालू करने का था—अर्थात् तट-करो की दीवारो द्वारा विभाजित अनेक छोटे वाजारो के स्थान पर एक वडा वाजार वनाकर व्यापार और व्यवसाय की सहायता करना। संघीय शासन ने इस उद्देश्य को राज्यो के मध्यवर्ती व्यापारिक प्रतिवन्धो को समाप्त करके सिद्ध किया था।

इसके पश्चात्, शासन ने, एलेक्जण्डर हेमिल्टन के निरीक्षण मे, दृढ अर्थ-व्यवस्था स्थापित करने का प्रयत्न प्रारम्भ किया। उद्देश्य भी व्यापार की सहायता करना था। संघीय शासन ने प्राय. निकम्मे 'वार-व्राण्डो' (युद्ध के ऋण-पत्रो)—राज्यो के वाण्डो—की भी जिम्मेदारी अपने सिर ले ली। इनमे से अधिकतर को सट्टेवाजो ने प्रति डालर पीछे कुछेक सेण्टो मे ही खरीद रक्खा था। शासन ने जनता पर कर लगाये, अधिकतर आयात वस्तुओं पर तट-कर के रूप मे—और वाण्डो का कर्ज चुकता कर दिया। इन अदायगियों के द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रारम्भिक जीवन मे नये उद्योग खोलने के लिए पूंजी एकत्र होने मे सहायता मिली।

तट-करो से न केवल शासन की आय वढ गयी, उनका यह लाभ भी स्पष्ट शब्दो मे वतलाया जाने लगा कि इनके कारण विदेशी वस्तुएं महंगी हो जाती हैं और इस प्रकार अमेरिकी उद्योगो को विदेशी प्रतिस्पर्धा से संरक्षण मिल जाता है।

संघीय शासन शीघ्र ही निजी व्यवसायो को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप मे सहायता भी देने लगा। शासन ने नहरें और सड़कें वनाकर, और पीछे रेल वनाकर, भी

सहायता दी। शासन ने देश के पश्चिम भाग मे जो भूमि खरीदी या जीती थी उनको उसने लोगो मे बाट दिया या नाममात्र मूल्य पर बेच दिया। "प्रेयरीज़" अर्थात् घास के मैदानो को नयी भूमि का और विस्कौन्सिन तथा मिन्नसोटा के नये जंगलो की लकडी का, उनकी रक्षा या पुनरुत्पादन का कुछ भी विचार किये बिना, कई शताब्दियो तक दोहन किया जाता रहा। यहा तक कि बीसवी शताब्दी में आकर यह दशा हो गयी कि गेहूँ और शहतीर को बेचते हुए उनकी लागत का कोई विचार नही किया जाता था, खेतों और जंगलो मे लगी हुई पूंजी को उत्पादक खा जाते थे और पैदावार को सरकारी सहायता मिल जाती थी। संघीय शासन आरम्भ के सौ या कुछ अधिक वर्षो तक पश्चिम मे धन के नये स्रोत खोल-खोल कर निजी व्यापारियो को देता गया था कि वे उनसे मनमानी नकदी कमा लें।

पुलिस द्वारा व्यापार की रक्षा का विकास बहुत धीरे-धीरे हुआ। शुरू-शुरु मे व्यापार की चोरो से माल लाने, जाली सिक्के चालू करने और समुद्री डकैतियो आदि पुराने और सुपरिचित अपराधो से बचाव के अतिरिक्त, अन्य प्रकार की संघीय संरक्षा की आवश्यकता प्राय. नही पडी। आगे चल कर नये-नये व्यवसायो का जन्म होने के कारण और व्यापार के दूर-दूर तक फैल जाने तथा उलझ जाने के कारण, बुराइया भी नयी-नयी होने लगी और उन्हे रोकने के लिए पुलिस की आवश्यकता पडने लगी।

सबसे बडी और महत्वपूर्ण बुराई, जिसके कारण उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे लोगो की चिन्ता बढने लगी थी, एकाधिकार थी। सन् १८६१-१८६ के गृहयुद्ध के पश्चात् व्यापार इतना बढ गया कि जनता का ध्यान उसकी एकाधिकारी प्रवृत्तियो की ओर जाने लगा। अमेरिकी जनता अभी तक पश्चिम की ओर को अग्रसर होने की दशा मे ही थी और पश्चिमी राज्यो मे प्रत्येक परिवार अपने दैनिक जीवन मे बहुत कुछ स्वाधीन था। परन्तु जब गेहूँ बेचकर आवश्यकता की अन्य वस्तुएँ खरीदने का समय आया तब अग्रणी किसानो ने अपने आपको एकाधिकारी खरीदारो, एकाधिकारी रेलवे कम्पनियो और एकाधिकारी विक्रेताओ के चंगुल मे फंसा पाया। वे विक्षुब्ध हो गये, और तभी से एकाधिकार के विरोध की विशिष्ट अमेरिकी भावना का सूत्रपात हुआ।

सन् १८९० के आरम्भ-काल में दक्षिण और पश्चिम के किसानो मे बडे व्यापारियो के अनधिकृत अधिकार का विरोध करने के लिए "पापुलिस्ट" पार्टी का सगठन हुआ। इस पार्टी ने रेलो और टेलीग्राफ तथा टेलीफोन लाइनो के राष्ट्रीयकरण की माग की। "पापुलिस्टो" ने डाकघरो मे सेविंग्स बैंक खोले जाने और क्रमिक दर पर अर्थात् ज्यादा आमदनी पर ज्यादा और थोडी आय पर थोडी आय-कर लगाने की भी आवाज उठायी। उन्होंने सुझाव दिया कि "ग्रीन बैंक" अर्थात् कागजी मुद्रा चलाकर और लोगो की निजी चांदी के सिक्के ढालकर मुद्रा-बाजार मे बैंको का एकाधिकार समाप्त कर दिया जाय। इनमे पिछला सुझाव कागजी मुद्रा के समान ही मुद्रा स्फीति करने वाला था, क्योकि इनसे एक डालर से कम मूल्य की चांदी का मूल्य उन पर सिक्को की छाप लगने के पश्चात् एक डालर के समान हो जाता था। राष्ट्रपति के सन् १८९६ के चुनाव मे विलियम जे० ब्रायन के नेतृत्व मे डिमोक्रेटिक पार्टी ने चांदी के सिक्के बनाने का आन्दोलन अपना लिया, और "पापुलिस्टो" ने भी उसका साथ दिया परन्तु ब्रायन चुनाव हार गये।

जनता मे विक्षोभ "पापुलिस्ट" आन्दोलन के रूप मे भडक चुका था। उसके कारण सन् १८९० तक दोनो प्रमुख पार्टियो का ध्यान भी एकाधिकार के विरुद्ध राष्ट्रीय स्तर पर कुछ न कुछ कारंवाई करने की ओर जा चुका था। इस कारण शॅरमन ऐण्टी-ट्रस्ट (ट्रस्ट-विरोधी) ऐक्ट बनाया गया। शॅरमन ऐक्ट के अनुसार अन्तर्राज्यीय अथवा वैदेशिक व्यापार की अवरोधक सब गुट-बन्दियो और षड्यन्त्रो को कानून-विरुद्ध घोषित कर दिया गया।

शॅरमन ऐक्ट से पूर्व भी राज्यो ने परम्परागत कानून के जोर पर एकाधिकारो को रोकने के कुछ प्रयत्न किये थे। परन्तु ज्यो-ज्यो कार्पोरेशन बडे होते गये और देश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैलते गए त्यो-त्यो राज्यो के प्रयत्न प्रभावहीन होते गये। शॅरमन ऐक्ट की रचना बहुत कुछ परम्परागत कानून के सामान्य शब्दो मे या संवैधानिक संशोधन के समान की गयी थी। इसका विशिष्ट प्रयोग पीछे न्यायालयो के निर्णयो और बीच-बीच मे नये कानूनो द्वारा निर्धारित हुआ।

इसलिए धीरे-धीरे संयुक्त राज्य अमेरिका के ट्रस्ट-विरोधी कानून को परम्परागत कानून का लचकीला रूप प्राप्त हो गया, और यह आवश्यक भी था, क्योंकि एकाधिकार की बुराई अनगिनत रूपो मे फैलती जा रही थी।

ट्रस्ट-विरोधी कानून को लागू करने के तमाम उतार-चढावो और व्यापार के अवरोधक बड़े-बडे प्रयत्नो का मिलकर यह परिणाम हुआ है कि संयुक्त राज्य अमेरिका स्थिरता पूर्वक युरोप की साधारण प्रथाओ से भिन्न मार्ग पर चलता रहा है। सभी अमेरिकी लोग, चाहे डिमोक्रेट हो, चाहे रिपब्लिकन, शॅरमन ऐक्ट का सम्मान करते और उसे अमेरिकी स्वतन्त्रता की एक आधार-शिला मानते हैं। जिन्होने इस कानून का उल्लघंन भी किया है उन्होने वैसा इसके पवित्र सिद्धान्त के विरोध मे नही, इसकी व्याख्या के रूप मे किया है। जो कुछ धूर्तता हुई भी है, वह सब स्वतन्त्रता प्रतिस्पर्धा के सिद्धान्त का आदर करते हुए ही हुई है। यह सिद्धान्त अमेरिकी विचार-शैली का अविभाज्य अंग बन चुका है।

अमेरिका के व्यापारी-व्यवसायी लोगो के आचरण मे कभी-कभी इस सिद्धान्त का उल्लंघन भले ही दिखाई दे जाय, परन्तु अमेरिकी विचार-शैली में निश्चित-रूप से एक सिद्धान्त विद्यमान है, जो अधिकतर अन्य सब स्वतन्त्र देशो से उसकी भिन्नता को प्रकट कर देता है। अमेरिकी लोग बडी-बडी कम्पनियो की गुटबन्दी और एकाधिकार के नैतिक आदर्शो के विरुद्ध और आर्थिक उन्नति के लिए घातक मानते हैं। उनका विश्वास है कि ट्रस्ट-विरोधी कानून कभी-कभी फटे चिथडे और भद्दे रूप मे भले ही दिखाई पडा हो, परन्तु यह स्वतन्त्र लोगो के लिए स्वतन्त्रता के झण्डे का काम देता रहा है और इस कारण अमेरिकी प्रगति का एक बडा कारण रहा है।

अमेरिकी लोग समझते हैं कि चूंकि युरोप की कोयला और इस्पात कम्पनियो के नये संगठन के अनुमति पत्र मे एक प्रबल ट्रस्ट-विरोधी कानून भी सम्मलित है जो उद्योगो मे टेकनीकल कुशलता बढाने के लिए प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करता रहेगा, इसलिए वह उचित दिशा मे प्रगति का एक सन्तोषजनक उदाहरण है। अमेरिकी लोगो की परीक्षणो और भूलो के पश्चात् अनुभव हो चुका है कि "पूंजीपति"

प्रणाली ज्यो-ज्यो अधिकाधिक सम्पन्न और उत्पादक होती जाती है त्यो-त्यो उसे उन घातक रोगो से मुक्त रक्खा जा सकता है जिनकी कार्ल मार्क्स और उनके अनुयायियो ने कल्पना की थी; परन्तु ऐसा तभी हो सकता है जब शासन एकाधिकार के घास-पात की निराई निरन्तर करता रहे।

अन्य कुछ कम महत्व की पुलिस कार्रवाइया संघ और राज्यो के शासनो ने उपभोक्ताओ को ठगी से बचाने के प्रयोजन से की है। सादगी के दिनो मे जब किसान अपनी सब खरीद-फरोख्त चौराहो की दुकानो पर किया करते थे तब ईमानदारी के व्यवहार को ही सर्वोत्तम मार्ग माने जाने की सम्भावना रहती थी, क्योकि दुकानदारी नामवरी के जोर पर ही चलती थी। परन्तु ज्यो-ज्यो व्यापार का देश-भर मे विस्तार होता गया और नये-नये अपरिचित सामान बिक्री के लिए बाजार मे आने लगे त्यो-त्यो ग्राहको को अधिकाधिक वस्तुएं अनपहचानी गहराई मे से मिलने लगी और सब प्रकार की ठगी मे अधिकाधिक लाभ होने लगा। इन अवस्थाओ के कारण ऐसे कानून बनाये गये जो शृंगार की और भोजन की वस्तुओ मे भयानक विषो के प्रयोग का और विज्ञापनो मे छल-पूर्ण दावे करने का निषेध करते थे। कानून द्वारा यह आवश्यक कर दिया गया कि खाद्यो और औषधियो के डब्बे पर उनके भीतर की वस्तु का असली तोल और उनके बनाने मे प्रयुक्त पदार्थो का नाम लिखा जाय।

राजनीतिक दृष्टि से ठगी-विरोधी कानून एक उल्लेखनीय सफलता का सूचक है, क्योकि ग्राहक कोई भी व्यक्ति हो सकता है, और उनका ऐसा कोई संगठन नही है जिसके द्वारा इस प्रकार के कानून बनवाने के लिए वे राजनीतिक दबाव डाल सकें। उत्पादको या निर्माताओ के सुसंगठित होकर वाशिंगटन मे और राज्यो की राजधानियो मे सौदाबाजी करने के लिए एजन्सियाँ खोल लेने की सम्भावना अधिक है। यह भी सम्भव है कि किसी व्यवसाय के नेता मिल कर निश्चय करे कि ईमानदारी से बनाये हुए माल के संरक्षण के लिए बाजार को अनियन्त्रित रखने की अपेक्षा, मिलावटी माल को रोक देना अधिक अच्छा होगा, इस कारण वे इधर ध्यान दे और संरक्षक कानून बनवाने मे सहायता करें। परन्तु इस प्रकार के अधिकतर

कानून पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित लेखो के कारण जाग्रत जनता द्वारा दवाव डालने पर ही वने हैं, व्यवसायियो की ओर से तो उसका प्रवल विरोध ही हुआ है ।

राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रूजवेल्ट को अपने शासन के प्रारम्भिक काल मे एक वडा संघर्ष "सिक्युरिटियो" (कम्पनियो के हिस्से आदि) के वाजार मे ईमानदारी लाने के लिए करना पडा था। सन् १६३३ के 'सिक्युरिटीज ऐक्ट' और सन् १६३४ के 'सिक्युरिटीज एण्ड एक्सचेन्ज ऐक्ट' द्वारा स्टॉक अर्थात् कम्पनियो की पूंजी वेचने वाले कार्पोरेशनो को वाधित किया गया कि वे कम्पनी की अवस्था का सच्चा-सच्चा विवरण दे और झूठे दावे करने पर नुक्सान के लिए जिम्मेवार उन्ही को ठहराया गया। "न्यू डील" (रूजवेल्ट की आर्थिक-नीति का नाम) का एक अन्य काम, जिसका वित्तीय वाजार पर प्रभाव पडा, सन् १६३५ का 'होल्डिग-कम्पनी-ऐक्ट' था। इस कानून का उद्देश्य सार्वजनिक उपयोगिता का काम करने वाले ऐसे वडे-वड़े व्यवसायिक साम्राज्यो का वनना रोकना था जो कम्पनियो की तह पर तह चढाते जाते थे, और उनमे से प्रत्येक कम्पनी अपने से निचली तह की कई-कई कम्पनियों के हिस्सों का नियन्त्रण करती थी। इन उलझे हुए व्यावसायिक साम्राज्यो के लिए लाभ को ऐसी जगह सरका देना वाये हाथ का खेल था जहाँ कम्पनियो की इन शृंखला पर नियन्त्रण करने वाले उसे आपस मे खपा लें, और साधारण शेयर होल्डरो को अपने हिस्से का कुछ भी लाभ न मिले।

जो वित्तीय कम्पनिया झूठे विज्ञापन देकर, स्टॉक मार्केट मे उतार-चढ़ाव करके और वे सिर-पैर की 'होल्डिग-कम्पनिया' अर्थात् कई-कई कम्पनियो का नियन्त्रण करने वाली कम्पनियां वनाकर, जनता से अनुचित लाभ उठाया करती थी उन्होने इन नियन्त्रणकारी कानूनों का तीव्र विरोधी किया। एक वार तो एल्मर-डेनिएलसन नामक एक चपरासी लडके ने गवाही देते हुए वतलाया था कि मुझे "होल्डिग-कम्पनी-ऐक्ट" का विरोध करने वाले तारो पर हस्ताक्षर इकट्ठे करने के लिए नौकर रक्खा गया था और मुझे प्रति तार तीन सेण्ट दिये जाते थे। इस प्रकार के संकेत मिले थे कि देश की कवरे तक मानो वडी तादाद मे वाशिंगटन को तार भेजने लगी थी और वे तार सदा ही इस विल के विरोध मे होते थे। ऐसी-ऐसी वेईमानियो से

कानून के विरोध का होना प्रमाणित हो जाने पर वित्तीय कानूनों के पास होने में बडी सहायता मिली। इनका व्यापक परिणाम यह हुआ कि वित्तीय बाजार की जोखिमे कम हो गयी और जनता का विश्वास बढ गया। परन्तु उस मन्दी का शिकार बने हुए लोगों के राजनीतिक दबाव के कारण ही ये कानून पास हो सके थे।

व्यापार-व्यवसाय के साथ शासन का एक और सम्बन्ध टेकनिकल सेवाएं करने के रूप मे है। इनमे से अनेक सेवाओ को शासन बिना मूल्य करता है। कृषि अन्वेषण और प्रशिक्षण की सेवाएं उन सेवाओ मे प्रथम थी जो संघीय शासन ने आरम्भ की थी। संघीय शासन अब वैज्ञानिक खोज, संख्याओ और गणनाओ की सूचना, ऋतु की रिपोर्ट और बाजार दरो की सूचना देने की सेवा देश और विदेश मे बिना मूल्य करता है। संविधान के निर्देशानुसार, शासन, पेटेण्ट और कापीराइट की रक्षा का कार्य भी करता है।

राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर के समय, जिन कम्पनियो या कार्पोरेशनो के सिक्युरिटियो का मूल्य गिर जाने के कारण दिवालिया हो जाने का भय होता था उन्हे ऋण देने के लिए एक "रिकन्स्ट्रक्शन-फाइनेंस-कार्पोरेशन" को अर्थात् धन की सहायता देकर कम्पनियो को पुनर्जीवित करने वाले कार्पोरेशन की स्थापना की गयी थी। द्वितीय विश्व-युद्ध के समय इसका खूब विस्तार हो गया और इसकी अनेक शाखा-प्रशाखाएं खुल गयी। "मेटल्स-रिजर्व-एजन्सी" (धातुओ का संग्रह करने वाली एजन्सी), "रबर-रिजर्व-एजन्सी" और "डिफेन्स-सप्लाइज-कार्पोरेशन" (रक्षा की सामग्री देने वाले कार्पोरेशन) आदि के रूप मे इसने अरबो डालर ऋण दिये और व्यय किये। इसके अतिरिक्त, सन् १९३४ में स्थापित "एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट-बैंक" विदेशी व्यापार को बढावा देने के लिए ऋण देता है। "फेडरल-हाउसिंग-ऐडमिनिस्ट्रेशन" अर्थात् संघीय-गृह-शासन ने ऋणदाताओ का बीमा करके और इस प्रकार उनकी जोखिम घटा कर मकानो के रेहन पर मिलने वाले ऋण की ब्याज-दर नीची कर दी है। ग्रामो मे बिजली के तार लगाने के लिए कम ब्याज पर ऋण देने के प्रयोजन से "रूरल-इलेक्ट्रिफिकेशन-ऐडमिनिस्ट्रेशन" अर्थात् ग्रामीण-बिजली-शासन की स्थापना की गयी।

संघीय शासन न केवल संसार का सब से बडा बैंकर (महाजन) है, वरन् वह सब से बडी बीमा कम्पनी भी है। वह न केवल बेरोजगारी का, बुढापे का, और युद्ध-निवृत्त सैनिको का बीमा करता है, वरन् मकानो, छोटे रोजगारो और खेतियो के लिए निजी ऋण देकर उनसे सम्बद्ध अन्य भी कई प्रकार के बीमे करता है।

अमेरिका के राजनीतिक जीवन मे यह विवाद निरन्तर चलता रहता है कि सरकारी उद्योगो और निजी उद्योगो मे ठीक ठीक विभाग-रेखा कहां खीची जाय। पन-बिजली की योजनाओ सरीखे जो काम निजी उद्योग से हो सकते हैं उन्हे सार्वजनिक उद्योग से करने का रिपब्लिकन लोग प्राय. सदा विरोध करते है। डिमोक्रेटो ने, न्यू डील के मातहत टेनेसी और कोलम्बिया नदियो सरीखे सार्वजनिक बिजली घरो का परीक्षण मात्र करके देखा था। उसमे उनका उद्देश्य कुछ तो प्रत्यक्ष प्रतिस्पर्धा का था और कुछ निजी बिजली घरो के दर नियन्त्रित करने के लिए एक "नपना" कायम कर देने का था।

परन्तु डिमोक्रेटो और रिपब्लिकनो मे से किसी का भी झुकाव 'सोशलिज्म' या समाजवाद को व्यावहारिक सिद्धान्त के रूप मे अपनाने का नही है। दोनो मे से कोई भी पार्टी किसी भी उद्योग का शासन द्वारा चलाया जाना तबतक पसन्द नही करती जबतक उसके लिए कोई प्रबल कारण न हो। साधारणतया सार्वजनिक और निजी उद्योगो मे से एक को अपनाने का निर्णय करने के प्रधान सिद्धान्त तीन होते हैं।

प्रथम यह कि जब जनता किसी काम को करवाना चाहे और उसके उपभोक्ताओ से उसका मूल्य वसूल करने का कोई सरल साधन न हो तब वह काम शासन के सुपुर्द कर देना चाहिए। बाढ की रोक-थाम और ऋतु सूचना देने के काम इसी प्रकार के है।

द्वितीय यह कि जिन कामो को शासन निजी उद्योग की अपेक्षा कम व्यय मे कर सकता है, उन्हे शासन को ही करना चाहिए। सार्वजनिक स्कूलो का संचालन और बुढापे का बीमा उन कामो के उदाहरण हैं।

तृतीय यह कि डाक विभाग या टेलिफोन जैसे प्राकृतिक एकाधिकार के जो

काम निजी रूप से नियन्त्रित उद्योग मे जनता को संतुष्ट नही कर सकेंगे उन्हे शासन के स्वामित्व मे चलाने की माग स्वयंमेव होने लगे। उदाहरणार्थ, डाक द्वारा पार्सल भेजने की पद्धति तभी आरम्भ की गयी थी जव कि एक्सप्रेस कम्पनियों से जनता असन्तुष्ट हो गयी थी। संयुक्त राज्य अमेरिका मे अधिकतर नगरो को पानी-वितरण की प्रणालियो को और कुछेक के विजली-वितरण प्रणालियो को भी म्युनिसिपल शासनो ने अपने हाथ मे ले लिया है। टेलिफोन कम्पनियां अपने काम की उत्तमता का विज्ञापन निरन्तर करती है, जिनसे जनता को असन्तोष न हो और राष्ट्रीकरण का भय जाता रहे। अमेरिकी लोग पसन्द यह करते हैं कि रेल टेलीफोन, टेलिग्राफ, रेडियो और हवाई सर्विस आदि प्राकृतिक एकाधिकार या अर्ध-एकाधिकार के नियन्त्रण मे निजी सगठनो द्वारा किये जायं। परन्तु नियंत्रणकारी संस्थाओ द्वारा औद्धत्य के प्रदर्शन या भ्रष्टाचार को रोकने के रूप मे सार्वजनिक स्वामित्व का भय सदा सामने रक्खा जाता है।

शासन और व्यापार मे अन्तर को प्रकट करने वाले ये सिद्धान्त, कार्य के इन अति उलझ भरे क्षेत्र मे अमेरिकी प्रवृति का एक नमूना है। संघीय राज्यीय और स्थानीय शासनो के वजटो—इनमे रक्षा का कार्यक्रम भी सम्मिलित है—का अधिकतर भाग ऐसे व्यवहारो से मिलकर वनता है जिन का सम्वन्ध व्यापारिक जगत से होता है। इन करोडो छोटे वडे व्यवहारो मे अमेरिकी लोग सदा मध्य-वर्गीय, स्वतन्त्र उद्योग के, और साधारण बुद्धि के मार्ग पर चलने का प्रयत्न करते हैं। राजनीतिक विवाद इस प्रश्न पर कभी नही होता कि मध्य मार्ग त्यागकर हमे फासिस्ट या कम्यूनिस्ट प्रणाली अपना लेनी चाहिए या नही, अपितु यह निश्चय करने के लिए होता है कि मध्य का मार्ग कौन सा है।

अध्याय ११

व्यक्तियों के अधिकार

"स्वतन्त्रता की घोषणा" के शब्दो मे "मनुष्य को उसके स्रष्टा ने कुछ अनपहरणीय अधिकारो से सम्पन्न किया है। उनमें जीवन, स्वतन्त्रता और सुख प्राप्ति का प्रयत्न भी है। इन अधिकारो को सुरक्षित करने के लिए ही मनुष्यो मे शासन-तन्त्रो की स्थापना होती है।"

सन् १९४६ मे राष्ट्रपति ट्रूमन द्वारा नियुक्त नागरिक अधिकार समिति ने ऊपर कहे गये इन अधिकारो को प्राप्त करने के लिए अधिक उत्तम साधनो की खोज करने के सिलसिले में ध्यान देने योग्य चार अधिकारो का उल्लेख किया था। वे चार वर्ग थे—

(१) शरीर को संकटो से बचाने और सुरक्षित रखने का अधिकार;

(२) नागरिकता के साधारण और विशेष अधिकार;

(३) विचार-स्वतन्त्रता और प्रकाशन का अधिकार;

(४) अवसर की समानता का अधिकार।

अधिकारो का विभाजन इस आधार पर भी किया जा सकता है कि वे नागरिक की रक्षा किससे करते हैं—शासन से, या अन्य नागरिको से, या बेरोजगारी से लेकर चेचक की बीमारी तक को सामान्य आपत्तियो से? यह वर्गीकरण राजनीति और शासन पर विचार की दृष्टि से बहुत उपयोगी है, क्योंकि मनुष्य के जीवन, स्वातन्त्र्य और सुख प्राप्ति के प्रयत्नो पर आक्रमण करने वाले तीन प्रकार

के शत्रुओ का सामना शासन विभिन्न प्रकारो से करता है; और राजनीतिक दृष्टि से उनके रूप भी विभिन्न है।

संविधान द्वारा संरक्षित अधिकारो का संघीय, राज्यीय और स्थानीय शासनों द्वारा उल्लंघन होने पर उसका प्रतिकार न्यायालयो की सहायता से किया जाता है। न्यायालय कानून के विरुद्ध बन्द किये गये बन्दी को रिहा करने की आज्ञा दे सकते हैं, और व्यवहार मे शासन न्यायालय के विरुद्ध आचरण कभी नही करते।

कोई नागरिक किसी दूसरे नागरिक की हानि करके अधिकारो का जो उल्लंघन करता है वह परम्परागत कानून के विरुद्ध भी हो सकता है, अथवा विधिनिर्मात्री संस्था के कानून-द्वारा भी गैरकानूनी ठहराया जा सकता है। कई प्रकार के अशोभन व्यवहारो की धर्माचार्य, और अन्य नैतिक नेता तो निन्दा करते है, परन्तु उन्हे कानून विरुद्ध कभी नही माना गया। जाति या धर्म के आधार पर भेद-भाव करना इसी प्रकार का व्यवहार है। इस प्रश्न पर अब तक राजनीतिक विवाद ही चल रहा है कि क्या कुछ प्रकार के भेद-भाव को कानूनन दण्डनीय ठहराना चाहिए ?

समाज और राष्ट्र का सदस्य होने के नाते नागरिक को सामान्य शत्रुओ से कई प्रकार की रक्षा पाने का अधिकार है। विदेशी आक्रान्ता बम वर्षको से तो रक्षा पाने का अधिकार उसे है ही, महामारी, अग्नि और बाढ से भी रक्षा पाने का वह अधिकारी है। इंगलैण्ड के पुराने परम्परागत कानून के अनुसार, यदि वह भूखा मर रहा हो तो उसे सार्वजनिक दातव्य-संस्था से सहायता पाने का अधिकार भी है। रक्षा पाने के अधिकार की ठीक-ठीक सीमा का निश्चय अब तक 'कन्जर्वेटिवो' और 'लिबरलो' अर्थात् अनुदार और उदार पार्टियो मे विवाद का एक बडा विषय बना हुआ है। 'रिपब्लिकन' और 'डिमोक्रेटिक' दलो मे, और उनके भीतरी उप-दलो में भी, इस प्रश्न पर मतभेद है।

क्रान्ति के पश्चात् जब अमेरिकी लोग अपने नये स्वतन्त्र देश का प्रबन्ध करने लगे तब उन्हे मुख्य चिन्ता अपने नये शासनो के अन्यायो और अत्याचारो से अपने अधिकारो की रक्षा करने की हुई। कई प्रकार के अधिकार प्रथा और परम्परागत

कानून द्वारा पर्याप्त-रूपेण रक्षित प्रतीत होते थे; और उस समय उसकी तत्काल रक्षा करना इतना आवश्यक नही जान पडता था जितना आगे चल कर जान पडने लगा ।

अब तो अमेरिकी नागरिको और शासन-अधिकारियो के बीच के प्राय: दैनिक व्यवहारो मे से वैधानिक अधिकारो को स्वयं प्राप्त मान कर चला जाता है। परन्तु अब भी बहुत से मामले कानून की सीमा-रेखा पर पहुँचकर विवादास्पद बन जाते हैं और उनका निर्णय न्यायालयो को करना पडता है कि उनमे नागरिक का कोई अधिकार है या नही और है तो कितना ।

उदाहरणार्थ, सन् १९५१ मे सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया था कि "थर्ड डिग्री" अर्थात् अपराधो की जाच करते हुए बल का प्रयोग करने की, प्रथा सविधान के पाचवे और चौदहवे संशोधनो का उल्लंघन है । इन दोनो संशोधनो मे कहा गया है कि शासन किसी भी व्यक्ति के जीवन, स्वातन्त्र्य या सम्पत्ति का अपहरण, कानून की उचित कार्रवाई के बिना, नही कर सकता । एक व्यक्ति पर अपराधी होने का सन्देह था । एक पुलीस अफसर ने उससे अपराध कबूलवाने के लिए उस पर बल का प्रयोग किया था । उस पुलीस अफसर को संघीय अपराध करने का दोषी माना गया । इस प्रकार एक पुराने अधिकार मे उसकी एक नयी परिभाषा जुड गयी ।

चौदहवें संशोधन मे कहा गया है कि कोई राज्य किसी भी व्यक्ति को अन्य सब के समान कानूनो का संरक्षण देने से इनकार नही करेगा । एक आदमी को कत्ल करने के अपराध मे दण्डित होने पर जेल मे बन्द कर दिया गया, और जेलर ने जेल के नियमानुसार उसकी अपील के कागजो को राज्य के सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंचने के लिए बाहर नही जाने दिया । संघीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि राज्य ने इस आदमी को कानूनो का समान संरक्षण देने से इनकार किया, इसलिए वह या तो इसकी अपील की ठीक प्रकार सुनवाई करवावे और या इसे छोड़ दे ।

चौथा संशोधन लोगों को अनुचित तलाशी और कब्जे के विरुद्ध गारंटी देता है। इसलिए न्यायालयो को बहुधा यह निर्णय करना पडता है कि क्या 'अनुचित' है और क्या नही। एक मामले मे पुलीस को सकारण सन्देह था कि एक मादक वस्तुओ की फेरी करने वाले ने कुछ नशीली चीजे अपने एक मित्र के घर मे छिपा दी है। वह तलाशी का वारण्ट लिये बिना उसके घर मे घुस गयी और चीजें बरामद कर ली। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि यह कार्रवाई संविधान का उल्लंघन है। सन्दिग्ध व्यक्ति कितना ही अपराधी क्यो न हो, कानून उसे पकडने के लिए पुलीस को कानून-विरोधी साधन काम मे लाने की अनुमति नही देता। ऐसा करने से निरपराधो के अधिकार भी संकटापन्न हो जायंगे।

न्यायालय द्वारा उचित सुनवाई के अधिकार की व्याख्या न्यायालयो को बार-बार करनी पडती है, जिससे नये-नये प्रकार के उल्लंघनो से बचा जा सके अथवा जो पुराने और अभ्यस्त उल्लंघन जनता के विवेक को अप्रिय लगने लगे है, उनको रोका जा सके।

फ्लोरिडा राज्य मे दो नीग्रो आदमियो पर बलात्कार का अभियोग लगाया गया और उन्हें सजा हो गयी। उनके मुकदमे मे 'ग्रैण्ड जूरी' (अभियोग की जाच करने वाले जूरी) और 'ट्रायल जूरी' (मुकदमा सुनकर निर्णय देने वाले जूरी) दोनो के सब सदस्य केवल गोरे व्यक्ति थे। राज्य के न्यायालय ने तो उनकी सजा को बहाल रक्खा, परन्तु सर्वोच्च न्यायालय ने उसे उलट दिया, और कारण जूरी मे केवल गोरे लोगों का होना बतलाया। इस मुकदमे की एक और विशेषता यह थी कि यद्यपि इस्तगासे ने न्यायालय मे दोनो अभियुक्तो का कोई इकबाली बयान पेश नही किया था परन्तु समाचारपत्रो मे यह छप गया था कि उन्होने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है। सर्वोच्च न्यायालय के दो जजो ने अपने निर्णय में लिखा कि समाचारपत्रो का यह हस्तक्षेप ही मुकदमे की सुनवाई को न्याय से असंगत बनाने के लिए पर्याप्त है।

जूरी के निर्णय से पूर्व, अपने अभियोग के विषय मे समाचारपत्रों को कुछ भी मत प्रकट न करने देने का अभियुक्त का यह अधिकार संयुक्त राज्य अमेरिका में

अभी तक उतनी स्पष्टता से नही माना गया है जितनी स्पष्टता से यह ब्रिटेन में माना जा चुका है। फ्लोरिडा के इस मुकदमे मे इस अधिकार का अंकुर जम जाने के लक्षण दिखलाई पडते हैं।

पाचवे संशोधन के अनुसार कोई गवाह किसी ऐसे प्रश्न का उत्तर देने से इनकार कर सकता है जिससे स्वयं उसके किसी फौजदारी मुकदमे मे फंस जाने का भय हो। परन्तु कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रधान नेताओ को बल और शक्ति से शासन को उलट देने का षड्यन्त्र करने के अपराध मे दण्डित किया जा चुका है, और १६४० के जिस स्मिथ ऐक्ट के अनुसार उन्हे दण्ड दिया गया था उसे असंवैधानिक ठहराने से सर्वोच्च न्यायालय भी इनकार कर चुका है। इसलिए अब यदि कांग्रेस की जाच-समिति किसी व्यक्ति को बुलाकर उससे उसके कम्यूनिस्ट सम्बन्धो के विषय मे प्रश्न करे तो वह इस आधार पर उत्तर देने से इनकार कर सकता है कि कम्यूनिस्ट काररवाईयाँ अपराध ठहरायी जा चुकी हैं और यदि मैंने उनके साथ अपना सम्बन्ध स्वीकार कर लिया तो मुझ पर भी अभियोग चलाया जा सकेगा। सर्वोच्च न्यायालय यह निर्णय भी दे चुका है कि कोई गवाह कोई ऐसी निर्दोष बात बतलाने से भी इनकार कर सकता है जो किन्ही साक्षियो की शृंखला की कडी बनकर गवाह पर मुकदमा चलाने का कारण हो सकती हो।

पाचवे संशोधन का लाभ उठाकर कोई गवाह कम्यूनिस्ट षड्यन्त्र के अभियोग मे फंसने से भले ही बच जाय, परन्तु वह उसका सहारा लेकर अपनी नौकरी जाने के खतरे से अपनी रक्षा नही कर सकता, क्योकि उसका मालिक उसकी इस काररवाई का अर्थ यही लगायेगा कि इसने अपने को हानि पहुँच जाने के भय से सत्य को प्रकट नही किया।

प्रथम संशोधन ने धर्माचरण की स्वतन्त्रता की गारण्टी दी है। परन्तु उस की समय-समय पर पुनः व्याख्या किये जाने की आवश्यकता अभी तक बनी हुई है। बहुत से धर्म-प्रचारको के मामले कानून की दृष्टि मे संदिग्ध होते है। वे गलियो के चौराहो पर या सार्वजनिक पार्कों मे भाषण करना चाहते हैं। परन्तु

सम्भव है कि वे ऐसे अजनवी लोग हो कि उनके भाषणो के कारण दंगा हो जाय। यह निर्णय नगर की पुलिस को करना पडता है कि किसी भाषण मे कहां धार्मिक स्वतन्त्रता की समाप्ति होकर दंगो के लिए उकसाहट की शुरुआत हो गयी। धार्मिक स्वतन्त्रता की सीमा-रेखा के संदिग्ध मामलो की एक अन्य कठिनाई यह है कि ठगो और धूर्तों को भी किसी धर्म का नाम लेकर इस संशोधन की आड़ मे छिप जाने का अवसर मिल सकता है।

समाचार पत्रो की स्वतन्त्रता संयुक्त राज्य अमेरिका मे बहुत आगे बढी हुई है, विशेषत. सार्वजनिक कर्मचारियो की उचित या अनुचित आलोचना करने मे इस स्वतन्त्रता को लोकतन्त्र की मूल रक्षिका माना जाता है। परन्तु समाचार पत्रो को कानूनी स्वतन्त्रता के साथ ही इतनी आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त नही होती कि बहुत से लोग जैसा पत्र पढना चाहते है वैसा ही वे छाप सकें। छपाई की कला का विकास कुछ इस प्रकार हुआ है कि बड़े पत्र विज्ञापन अपने छोटे प्रतिस्पर्धियो की अपेक्षा कम दरो पर ले सकते हैं। इसका फल यह होता है कि बहुत से स्थानो पर केवल एक पत्र जीवित रह सकता है और पाठको को अपने स्थानीय पत्रो मे उसके विरोधी विचार पढने की स्वतन्त्रता नही रहती।

समाचार पत्रो की स्वतन्त्रता की इस व्यावहारिक समस्या को हल करने मे राजनीतिक व्यवस्था अपने आपको प्राय. असमर्थ पाती है। हो सकता है कि कभी किसी पत्र को अपने प्रतिस्पर्धी पत्र से विज्ञापन छीन लेने के अपराध मे ट्रस्ट-विरोधी कानूनो के अनुसार दण्डित करा दिया जाय; परन्तु अधिकतर एकाधिकार कानून-विरोधी काररवाईयो का परिणाम नही है। वे स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा का चरम फल हैं और छोटे पत्रो को सरकारी सहायता देने से बढ कर अनुचित और कुछ हो नही सकता। इस समस्या का हल यही दीखता है कि छपाई कि कला मे कुछ ऐसा नया विकास हो जाय जो छोटे पत्रो के लिए लाभदायक हो।

समाचार पत्रो की स्वतन्त्रता की यह आंशिक हानि इस बात का उदाहरण है कि किस प्रकार कोई संवैधानिक अधिकार किसी ऐसे आर्थिक या सामाजिक

अधिकार की सीमा मे प्रविष्ट हो सकता है जिसकी रक्षा करने मे शासन भी पूर्णतया समर्थ न हो। इस प्रकार के अन्य उदाहरण जाति या धर्म के आधार पर किये जाने वाले भेद-भाव से सम्बद्ध समस्याओ मे मिल सकते है।

अमेरिका के लोग अनेक राष्ट्रो से आये हुए हैं। उत्तर-पश्चिमी युरोप से आये हुये लोग परस्पर घुल मिलकर अमेरिकी आबादी का एक प्रभावशाली भाग बन गये हैं। देश की अधिकतर सम्पत्ति के स्वामी वही हैं; और अधिकतर राजनीतिक शक्ति भी उन्ही के हाथ मे है। अन्य लोग जब अपने धर्म या रीति रिवाजो, या सबसे बढकर अपने रंग के कारण पहचान लिये जाते है कि वे औरो से भिन्न हैं तब उसके साथ भेद-भाव का व्यवहार होने की बहुत सम्भावना रहती है। नीग्रो, चीनियो, जापानियो, मेक्सिकनो, अमेरिकी इण्डियनो, और रायोग्रैण्डी की घाटी के प्रथम निवासी स्पैनिशो की सन्तान हिस्पानो-अमेरिकनो आदि सबके साथ अनेक प्रकार के भेद-भाव का व्यवहार होने की सम्भावना रहती है। यही बात यहूदियो, कैथोलिको, और 'जिहोवा के विटनेस' आदि छोटे-छोटे प्रोटस्टेण्ट सम्प्रदायो के विषय मे है। पूर्वी और दक्षिणी यूरोप के लोग जबतक बडी संख्या मे इकट्ठे रहते और अपनी भाषाएं बोलते रहते हैं, तबतक प्राय. उन सबके साथ विदेशियो का सा बरताव होने की सम्भावना बनी रहती ही है।

अल्पसंख्यकों के साथ भेद का बरताव होने का एक बडा कारण बेरोजगारी का डर है। श्रमिक लोग जाति, धर्म या मूल राष्ट्रीयता आदि ऐसी किसी भी प्रत्यक्ष भिन्नता का बार-बार चर्चा करते रहते हैं जिसे काम पर उनका एकाधिकार हो जाने के बहाने के रूप मे पेश किया जा सके। सन् १९४० से आगे बहुत समय तक अधिक रोजगार मिलने की जो परिस्थितियां बनी रही उन्होने इस पृथक्ता की भावना को मिटाने में बडी सहायता की थी। तब नीग्रो लोगो तक के विरुद्ध भावना कुछ मन्द पड़ गयी थी।

राष्ट्रपति ट्रूमन द्वारा नियुक्त नागरिक अधिकार समिति ने ऐसे अनेक प्रकार के अन्यायो की एक लम्बी सूची तैयार की थी, जिनका अल्पसंख्यक नागरिको को शिकार होना पड़ता था। इन अन्यायो का पता लगाने और उन्हें दूर करने के

उपाय सुझाने के लिए ही यह समिति नियुक्त की गयी थी। परन्तु इसने इन बडे-बडे अन्यायो की पृष्ठ भूमि का चित्रण करते हुए बतलाया था कि अमेरिकी जीवन मे अल्पसंख्यको तक के लिए स्वतन्त्रता की ओर अवसरो की प्रचुरता है, और हर दस-दस बरस पर नागरिक अधिकार अधिकाधिक सुरक्षित होते जा रहे है।

शरीर को संकटो से बचाने और सुरक्षित रखने के अधिकार की चर्चा करते हुए इस समिति ने बतलाया था कि इस शताब्दी के प्रथम दस वर्षों मे जहां प्रति वर्ष प्राय. डेढ सौ व्यक्ति उत्तेजित भीड की ज्यादतियो के कारण अपने प्राणो से हाथ धो बैठते थे, वहां सन् १६४० के पश्चात् यह संख्या प्रति वर्ष छ' से भी कम रह गयी है। परन्तु हाल के वर्षों मे जो थोडे से आदमी इस प्रकार मारे गये उनसे कई गुणा अधिक की स्थानीय अधिकारियो ने भीड की ज्यादतियो से रक्षा की। नीग्रो लोगो का टस्केजी इन्स्टिट्यूट 'लिन्चिंग' का अर्थात् व्यक्तियो के भीड द्वारा मारे जाने का पूरा-पूरा लेखा रखता है। उसने बतलाया था कि सन् १६४६ से पहले के सात वर्षों मे २२६ व्यक्तियो की 'लिन्चिंग' से रक्षा की गयी। इनमे २०० से ऊपर नीग्रो थे।

भीड़ की उग्रता मे कमी का कारण यह है कि लोग शिक्षित और समृद्ध हुए हैं और साथ ही साथ शेरिफो (कानून का पालन कराने वाले अधिकारियो) तथा पुलिस के चरित्र मे सुधार हुआ है। हाल के वर्षों मे जिन 'शेरिफो' ने भीड़ का सामना किया उन्होने देखा कि भीड उन्हे मारने को नही दौड़ पड़ती।

राष्ट्रपति ट्रूमन ने सिफारिश की थी कि कांग्रेस 'लिन्चिंग' को संघीय अपराध ठहरा दे, परन्तु सेनेट ने इस बिल का 'फिलिबस्टर' (नि.सीम विवाद) द्वारा अन्त कर दिया।

शरीर के बचाव और सुरक्षा के अधिकार का उल्लंघन पुलिस के पाशविक और अदालतो के पक्षपातपूर्ण व्यवहार से भी होता है। ये अपराध बहुधा संघीय संविधान का उल्लंघन करके किये जाते है और सर्वोच्च न्यायालय इनके विरुद्ध काररवाई कर सकता है। उसके ध्यान मे 'पिओनेज' अर्थात् शर्तबन्द गुलामी के जो

मामले आवें उनमे भी वह काररवाई कर सकता है। 'पिओनेज' के अपराध का होना वही सम्भव है जहां लोग गरीब, दब्बू और अपने अधिकारो से बिलकुल अनजान हो। कोई वेअसूला आदमी किसी शिकार को पकडकर उसे ऋण मे फंसा देता है ओर उसे किसी प्रकार यह विश्वास करवा देता है कि जबतक ऋण नही अदा कर दिया जायगा तब तक उसे बेगार करनी पडेगी।

किसी के पूर्वज कोई भी क्यो न हो, जिस किसी का जन्म संयुक्त राज्य अमेरिका मे हो उमे कानूनन नागरिकता का अधिकार प्राप्त हो जाता है। परन्तु एशिया के बहुत से निवासियो को, उनका जन्म इस देश मे होने पर भी, अमेरिकी नागरिकता के अधिकार नही दिये गये थे। कैलिफोर्निया मे और अन्य कई पश्चिमी राज्यो मे, जो विदेशी लोग नागरिक नही बन सकते थे, उन्हे खेतो का स्वामी नही बनने दिया गया, ओर कई मामले तो ऐसे भी हुए जिनमे नागरिक बनायी गयी उनकी सन्तान के खेतो से उन्हे निर्वाह तक नही लेने दिया गया। कानूनन संघीय सरकार को अधिकार है कि वह इस प्रकार के भेदपूर्ण व्यवहार को सन्धि करके या आगमन के नियमो मे परिवर्तन करके ठीक कर दे, परन्तु राजनीति मे ऐसी काररवाइयाँ करना शायद तब तक सम्भव नही होगा जब तक कि लोकमत अधिक सहिष्णु न हो जाय।

अब तक मताधिकार को नाना प्रकार की कानूनी चतुराइयो से सीमित किया जाता रहा है। परन्तु उनको एक-एक करके असंवैधानिक घोषित कर दिया गया है। दक्षिण के कई भागो मे नीग्रो लोगो को भीड की ज्यादतियो के डर से मत नही देने दिया जाता, परन्तु सन् १९५२ के आंकडो से ज्ञात होता है कि अधिकतर दक्षिणी बस्तियो मे नीग्रो मतो की संख्या पहले से बढ गयी है।

सन् १९२१ मे ग्यारह दक्षिणी राज्य ऐसे थे जिनमे मत देने के लिए एक "पोल-टैक्स" अर्थात् मतदान-कर लिया जाता था। परन्तु दोनो जातियो के गरीब लोग इस कर से मुक्त थे। सन् १९४४ मे पता लगा कि जिन राज्यो मे 'पोल टैक्स' लगा हुआ था उनमे मत देने मे समर्थ लोगो मे से लगभग दस प्रतिशत ने ही मत दिया था। डेढ सौ वर्ष पूर्व तो मताधिकारी बनने के लिए साम्पत्तिक योग्यता की शर्त सर्वत्र ही लागू थी। संघीय कानून बनाकर 'पोल टैक्स' समाप्त करने के

प्रयत्ना का सेनेट मे 'फिलिवस्टर' द्वारा अर्थात् विवाद को अनन्त लम्बा खीचकर विरोध किया गया। परन्तु अब कई राज्यो ने यह टैक्स स्वयं ही हटा दिया है।

नागरिकता का एक और विशेषाधिकार शस्त्र धारण कर सकने का है। यह अधिकार भयंकर होते हुए भी अल्पसंख्यको की नागरिक समानता के लोकतन्त्रीय लक्ष्य का सूचक है। पहले सेना मे नीग्रो और अन्य अल्पसंख्यक लोगो को साधारणतया ऐसे काम दिये जाते थे जिनमे लडना नही पडता था, या उनकी टुकड़िया अलग बना दी जाती थी। अफसरो के स्कूलो मे तो नीग्रो लोगो को यदा-कदा ही भरती किया जाता था। हाल के वर्षो मे सभी सेनाओ को आज्ञा दी गई है कि वे जातीय भेद-भाव का यथासम्भव शीघ्र अन्त कर दें।

सन् १९४५ मे फ्रान्स के युद्ध मे जब गोरे सैनिको को अपनी टुकडियो मे नीग्रो लोगो को भी सम्मिलित करने की आज्ञा दी गयी तब उनमे से बहुतो को अच्छा नही लगा। परन्तु उनको लडता देखकर प्राय. सभी गोरे सैनिक, दक्षिणी तक भी, उन्हे चाहने और उनका सम्मान करने लगे। सन् १९५३ मे रंग के भेद-भाव के बिना नीग्रो लोगो को सैनिक टुकडियो मे शामिल कर लेने का परिणाम इतना सन्तोषजनक निकला कि यह अब अपने ही वेग से आगे बढ रहा है। अब सेनाओ मे रंग के भेद की सर्वथा समाप्ति सम्भव हो गयी है।

कई परिस्थितियां ऐसी होती है जिनमे एक बार पृथकता का अन्त कर देने से रंग पक्षपात स्वयमेव शिथिल हो जाता है—उदाहरणार्थ, गोरे लोगो के नाटक घरो और जलपान गृहो मे नीग्रो लोगो का प्रवेश होने पर अब उनसे घृणा नही की जाती। अनुभव से यह भी देखा गया है कि कारखानो मे नीग्रो मजदूरो को गोरे मजदूरो के साथ काम पर लगाया जा सकता है। अब इसके कारण उतना झगडा नही होता जितना पहले हो जाया करता था।

यह देखकर कि एक बार पृथक्ता की समाप्ति कर देने पर रंग-पक्षपात आप ही दूर होने लगता है और उसके कारण मार-पीट नही होती, उन लोगो का उत्साह बढ गया है जो पृथक्ता के विरुद्ध कानून बनवाना चाहते हैं। उनका तर्क यह है कि बहुत-सी परिस्थितियो मे पृथक्ता की बाध्यतापूर्ण समाप्ति के सामने लोग सिर

झुका देंगे, परन्तु यदि हालात को योही चलने दिया गया तो वर्तमान रिवाजो का न जाने कब तक अन्त न होगा।

सन् १९४१ मे राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने एक 'फेयर-एम्प्लायेमेण्ट-प्रेक्टिस-कमिटी" अर्थात नौकरी देने मे पक्षपात न करने का रिवाज डालने वाली कमिटी नियुक्त की थी कि वह सरकारी नौकरियो और युद्ध का माल बनाने वाले कारखानो मे समानता की प्रथा चालू करे। इस कमिटी ने देखा था कि उसके सामने जो मामले आते थे उनमे पांच मे से चार का सम्बन्ध नीग्रो लोगो से होता था। उन्हे या तो नौकरी दी ही नही जाती थी और या गोरो की अपेक्षा कम वेतन लेने के लिए विवश किया जाता था। आठ प्रतिशत शिकायतो का सम्बन्ध धार्मिक पक्षपात से होता था। इनमें भी यहूदियो की शिकायते सबसे अधिक होती थी। सरकारी एजन्सिया, व्यापारिक संस्थाएं और मजदूर यूनियने आदि सभी अल्पसंख्यको के साथ असमान वर्ताव करने की अपराधी थी। युद्ध-काल मे जबतक राष्ट्रपति रूजवेल्ट की यह कमिटी काम करती रही तबतक नौकरिया देने मे असमानता का वर्ताव खासा कम हो गया था। मजदूरो की कमी के कारण भी इसमे बहुतेरी कमी हो गयी थी।

कई राज्यो मे भी "नौकरी देने मे पक्षपात न करने के कानून बनाये" गये हैं। जिन राज्यो मे इस प्रकार के कानून बन सकते हैं उनका लोकमत भी समानता का पक्षपाती है, और वहा कानून मालिको से अल्पसंख्यको को काम दिलवाने मे सफल हो जाता है। परन्तु सभी राज्यो मे असमानता दूर करने के लिए संघीय कानून बनवाने के प्रयत्नो को सेनेट मे सफल नही होने दिया गया।

कई राज्यो मे भी शिक्षण-संस्थाओ तथा सार्वजनिक नौकरियो मे नीग्रो लोगो को गोरो से पृथक् ही रखने का नियम है। सन् १८९६ मे सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया था कि यदि राज्य नीग्रो लोगो के लिए "पृथक् परन्तु समान" सेवा का प्रबन्ध कर देते है तो उनके पृथक्ता-सम्बन्धी कानून का चौदहवें संशोधन से कोई विरोध नही है। जस्टिस हार्लेन ने उस समय भी अपना पृथक् निर्णय लिखकर इस निर्णय का विरोध किया था।

परन्तु सत्य यह है कि नीग्रो लोगो के लिए जिन सरकारी स्कूलो और अन्य सेवाओ का पृथक् प्रबन्ध किया जाता है, वे सामान और सेवा के अच्छेपन आदि की दृष्टि से गोरो के स्कूलो आदि के समान कभी नही होते। इसके अतिरिक्त, जैसा कि जस्टिस हार्लेन ने कहा था, बलात् पृथक्ता के कारण, "हमारे बहुत-से साथी नागरिको पर, उनके कानून की दृष्टि से हमारे समान होते हुए भी, दासता और हीनता का कलंक लग जाता है। 'समान' व्यवस्था के झिल्लीदार परदे से कोई भी धोखे मे नही आ सकता।"

सन् १८९६ का यह निर्णय कोई चालीस वर्ष तक कायम रहा। इसके बाद न्यायालय धीरे-धीरे इस सत्य की ओर संकेत करने लगा कि दोनो की सेवा मे समानता नही है और जबतक पृथक्ता विद्यमान है तबतक अधिकतर सेवाओ मे समानता लायी भी नही जा सकती। धीरे-धीरे कुछेक दक्षिणी कालिजो मे नीग्रो विद्यार्थी लिये जाने लगे। इसके कारण अनेक थे। न्यायालय की दृढता का बढते जाना, केवल नीग्रो लोगो के लिए प्रथम श्रेणी की यूनिवर्सिटियां खोलने मे व्यय का बहुत होना, और दक्षिण मे, विशेषत कालिजो के विद्यार्थियो मे सहिष्णुता के भावो का विकसित होते जाना भी इन कारणो मे सम्मिलित थे। इस परिवर्तन के पश्चात् दगे, झगडे और अन्य अप्रिय प्रतिक्रियाएं न होने से आशा होती है कि यह धीरे-धीरे फैलता जायगा।

सरकारी क्षेत्र से सर्वथा पृथक, कई बडी-बडी पेशा-वर-बेसबाल 'टीमो' की कार्रवाइयो से भी सारी जाति की अवस्था सुधारने मे बडी सहायता मिली। है वे नीग्रो खिलाडियो को भी लेने लगी है। बेसबाल ऐसा खेल है कि करोडो अमेरिकी उसे राष्ट्रीय झण्डे या संविधान के समान पवित्र मानते हैं। उसका उनके दैनिक जीवन और रुचियो से बहुत घना सम्बन्ध है। किसी को दुनिया के खेलो की 'सीरीज' मे खेलने देना उसे पूरा-पूरा अमेरिकी नागरिक मान लेने की निशानी है। "ब्रुकलिन डोजर्स" नामक प्रसिद्ध टीम का एक खिलाडी नीग्रो होने के कारण कई टीमो ने विद्रोह करने की धमकी दी थी। उन टीमो को 'बेसबाल लीग' के अध्यक्ष ने जिन शब्दो मे उत्तर दिया उनसे प्रकट हो गया कि अब खिलाडियो मे समानता का

सिद्धान्त स्वीकृत किया जा चुका है। लीग के अध्यक्ष ने कहा था—"यह संयुक्त राज्य अमेरिका है। यहा खेलने का जितना अधिकार तुमको है, उतना ही दूसरो को भी है।"

किसी भी नागरिक को अधिकार है कि वह अपने मानव या अमानव शत्रुओ से रक्षा पाने का शासन से दावा कर सकता है। परन्तु यह अधिकार और समान व्यवहार का अधिकार कई बार एक दूसरे से टकराने लगते हैं। विशेषतः जब जनता पर बेरोजगारी, अज्ञान, गरीबी, और रोग आक्रमण करते हैं, तब पदारूढ बहुमत की अपेक्षा अल्पमत की ही सदा अधिक हानि होती है। परन्तु रोग और मृत्यु से भय तो सभी लोगो को लगता है, और प्रबल बहुमत वालो को भी बेरोजगारी का या आमदनी के नुकसान का डर होता ही है। बहुत बडी संख्या मे लोग केवल मजदूरी के लिए काम करते हैं, और यदि वे जीवन का एक उचित मान सुरक्षित रखना चाहे तो उन्हे मजदूरी तय करने के अपने बल के संरक्षण के लिए कानूनी सहायता की आवश्यकता पडती है।

युरोप और अमेरिका मे कई शताब्दियो से मजदूरो की अवस्था शासनो की चिन्ता का विषय रही है। मध्यकाल मे प्रवृत्ति यह थी कि शासनो का झुकाव बहुधा विद्रोही और उपद्रवी मजदूरो के विरुद्ध उच्चवर्गों की ही रक्षा करने का रहता था। उन्नीसवी शताब्दी मे इस प्रकार के मालिक मजदूरो के झगडो मे हस्तक्षेप का एक प्रचलित रूप यह था कि शासन मजदूर यूनियनो को दबा दिया करता था। तव वे परम्परागत कानून के अनुसार षडयन्त्रकारियो का गिरोह समझी जाती थी। आज कानून का भारी झुकाव मालिको की मनमानी कार्रवाइयो और अनेक प्रकार की सामान्य आपत्तियो से मजदूरो की रक्षा करने का हो गया है।

सन् १९३३ के "नेशनल इण्डस्ट्रियल रिकवरी ऐक्ट" (राष्ट्र के उद्योगो को सम्भालने के कानून) ने मजदूरो को संगठित हो सकने के अधिकार की गारण्टी दी थी, और मालिको को मजबूर किया था कि वे मजदूर-यूनियनो को, मजदूरो की शर्तें तय करने वाले एजण्ट के रूप मे' मान्यता प्रदान करें। वेगनर ऐक्ट और टैफ्ट-हार्टले ऐक्ट ने क्रमश. मजदूरो और मालिको के साथ अधिकारो को और भी

निश्चित कर दिया है। इनमे से प्रथम ऐक्ट का झुकाव मजदूरो की ओर को और द्वितीय का मालिको की ओर को है। इन सब कानूनो का सार्वजनिक प्रयोजन ऐसे नियम बना देना है कि उन्हे न्यायालयो द्वारा लागू करवाया जा सके और मालिको और मजदूरो के सम्बन्ध उचित तथा न्यायपूर्ण रहे।

जब "उचित" और "न्याय-पूर्ण" शब्दो की परिभाषा की जाने लगती है, तब यहा भी राजनीति का दखल हो जाता है। पहले अत्याचार मजदूरो को सहना पडा करता था। उन्हे संगठित होने का अधिकार प्राप्त करने के लिये लडाइया करनी पडती थी—उनमे कभी-कभी खून तक बह जाता था। उनके नेता लडने वाले अधिक और समझौता करने वाले कम होते थे। धीरे-धीरे कानून उनके पक्ष मे हो गया। जब यूनियनो ने दिखला दिया कि मजदूर दलित नही हैं, तब दलितो के प्रति जनता की जो सहज सहानुभूति थी वह धीरे-धीरे लुप्त हो गयी। सन् १९४७ मे राजनीतिक ज्वार भाटा के कारण कांग्रेस पर रिपब्लिकन पार्टी का नियन्त्रण हो गया और उसने मालिको के अधिकारो की रक्षा के लिए टैफ्ट-हार्टले ऐक्ट पास कर दिया। इस समय मजदूर-यूनियनो के प्रतिनिधियो मे भी, 'पूंजीपतियो' या रिपब्लिकन पार्टी के विरुद्ध जमकर संघर्ष करने के लिए पर्याप्त एकता नही है। सन् १९५२ के चुनाव मे उन्होने ही अपने मतो से रिपब्लिकन पार्टी को पदारूढ होने मे सहायता की थी। इन सबका साराश यह है कि इस समय मजदूरो के अधिकार इतने पर्याप्त रूप से सुरक्षित हैं कि वे अन्य अनेक प्रश्नो पर अपना मत स्वतन्त्रता पूर्वक दे रहे हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका बहुत समय तक राष्ट्रीय समाजिक-सुरक्षा की प्रणाली अपनाने मे अधिकतर सभ्य संसार से पीछे था। बहुत से राज्यो मे किसी न किसी प्रकार के समाजिक-सुरक्षा के कानून बहुत समय पहले बन चुके थे। सन् १९३५ मे एतद्विषयक राष्ट्रीय कानून बन जाने के पश्चात् बुढापे और परिवार मे बचे हुए लोगो (सर्वाइवर्स) का बीमा कुछ बढा दिया गया है और उसके लाभ मजदूरो के अधिक प्रकार के वर्गो के लिए प्राप्तव्य कर दिये गये हैं। बेरोजगारी के बीमे और विकलागो तथा अन्धो को और आश्रित बालको को सहायता आदि अन्य लाभो का भी

धीरे-धीरे संघीय शासन और राज्यो द्वारा अधिकाधिक विस्तार किया जा रहा है। अब इस तथ्य को अधिकाधिक अनुभव किया जाने लगा है कि समाजिक-सुरक्षा के कारण बीमारी या बुढापे मे और भारी बेरोजगारी फैल जाने पर भी जनता की क्रय-शक्ति बनी रहने मे सहायता मिलती है। व्यापारियो, व्यवसाइयो और श्रमिको सबको ही इन आर्थिक लाभो का अनुभव हो जाने के कारण सामाजिक-सुरक्षा की योजनाओ का समर्थन दोनो राजनीतिक पार्टियां व्यापक रूप मे करने लगी हैं।

अमेरिकी जनता अपने शासन से विविध स्तरो पर विविध प्रकार के जिन संरक्षणो की माग करती है उनके कारण जो राजनीतिक विवाद छिड जाते हैं, वे भी एक अलग नमूना है। 'कन्जर्वेटिव' या अपरिवर्तनवादी लोग कहते हैं कि सेवा का प्रत्येक नया सुझाव समाजवादी है, उससे कर-दाता के धन का अपव्यय होगा और जनता जो कुछ चाहती है, उस सबकी पूर्ति निजी उद्योग से हो सकती है। इससे विपरीत, 'लिबरल' अर्थात् उदार विचारो के नवीन लोग कहते है कि जिस वस्तु की आवश्यकता है उसकी पूर्ति निजी उद्योगो से न तो हो रही है और न कई कारणो से हो सकेगी और जिस सेवा का सुझाव दिया गया है, उसके करने से कई प्रकार के अपव्यय का अन्त हो कर वस्तुतः कर-दाता के धन की बचत ही होगी।

नि सन्देह प्रत्येक सुझाव की यथार्थता भिन्न-भिन्न होती है और उसका निर्णय तत्काल तो राजनीतिक तर्को से हो जाता है, परन्तु पीछे यदि नयी परिस्थितियो के कारण पहले निर्णय पर सन्देह हो जाय तो उस पर पुनर्विचार कर लिया जाता है। सब मिलाकर प्रवृत्ति की दिशा यह है कि जिन आपत्तियो से जनता की रक्षा, उसकी सम्मति मे, शासन की शक्ति से की जा सके, उन मे शासन की सेवाओ का अधिकाधिक उपयोग किया जाय।

संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बनते समय अमेरिकी जनता ने उसके सदस्यो का एक कर्तव्य यह भी समझा था कि मनुष्य-मात्र के अधिकारो और स्वतन्त्रताओ की रक्षा करने मे संयुक्त राष्ट्रो की सहायता की जाय। संघ के एक विशेष कमीशन ने "मानव अधिकारो का एक घोषणा पत्र" तैयार किया था और संयुक्त राष्ट्रों की असेम्बली (महासभा) ने, सोवियट यूनियन तथा उसके पिछलग्गुओ के विरोध के

वावजूद, उसे स्वीकार कर लिया था। उक्त कमीशन की अध्यक्षा तथा उसमे अमेरिका की प्रतिनिधि श्रीमती फ्रैंकलिन डी० रूजटवेल्ट थी।

"मानव अधिकारो का घोपणापत्र" अमेरिकी संविधान के 'विल-ऑव राइट्स' (अधिकार-सूची) से कही आगे है। इसका प्रधान कारण यह है कि हिटलर और सोवियट यूनियन ने कई प्रकार के नये अन्यायो को जन्म दे दिया है। उदाहरणार्थ, 'जेनोसाइड' या जाति-नाश अर्थात् किसी जाति, कवीले या धार्मिक मत को सर्वथा नष्ट कर देने के लिए सरकार की ओर से कार्रवाई का किया जाना एक पुराना अपराध था उसे एकवर्गाधिकारवादियो ने वीसवी शताब्दी मे पुनरुज्जीवित कर दिया। इसलिए उस पर संयुक्त राष्ट्र संघ मे विशेष ध्यान दिया गया।

"मानव अधिकारो का घोपणापत्र" तैयार करने के अतिरिक्त, उक्त कमीशन से एक सन्धि के रूप मे एक प्रतिज्ञापत्र को रचना करने के लिए भी कहा गया था, जो प्रत्येक सदस्य-राष्ट्र को स्वीकृति के लिए दिया जाने वाला था। मूल प्रस्ताव मे सभी प्रकार के अधिकार सम्मिलित किये जाने वाले थे, केवल अन्याय और अत्याचार से रक्षा पाने के नही, अपितु वेरोजगारी जैसे दुर्भाग्यो से रक्षा पाने के भी। अमेरिका चाहता था कि प्रतिज्ञापत्र दो लिखे जायं। प्रथम प्रतिज्ञापत्र मे तो हमारे 'विल-ऑव-राइट्स' सरीखी ऐसी जिम्मेवारिया रखी जायं, जिनका पालन किसी न्यायालय द्वारा करवाया जा सके। द्वितीय मे ऐसी जिम्मेवारिया हो, जिन्हे पूरा करने के लिए शासन, गरीवी और वीमारी जैसी बुराइयो से संघर्ष करने की प्रतिज्ञा करे, परन्तु जिनका निश्चित कोई एक प्रतिकार नही हो सकता। इस दूसरे प्रकार के "अधिकार" की रक्षा न्यायालय की शरण लेकर नही, प्रत्युत राजनीतिक कार्रवाई द्वारा ही की जा सकती है, अर्थात् यह देखकर कि पदारूढ पार्टी ने निजी और सार्वजनिक जिम्मेवारियो मे उचित सन्तुलन को स्थिर रखते हुए आपत्तियो से जनता के निर्णयानुसार उसे दण्ड या वढावा देकर जनता की रक्षा करने मे सफलता प्राप्त की या नही।

इनमे से कोई भी प्रतिज्ञापत्र स्वीकृति के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका की सेनेट के सामने आने की सम्भावना नही है। इसका प्रधान कारण यह है कि अमेरिकी

कानून मे सम्मिलित सब अधिकारो को संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य सदस्य-राष्ट्र प्रतिज्ञापत्रो मे सम्मिलित करने के लिए सहमत नही हुए हैं। यद्यपि कानून के जानकारो का प्रबल मत यह है कि अमेरिकी संविधान ने अमेरिकी नागरिको को जिन अधिकारो की गारण्टी दे दी है उन्हें किसी भी सन्धि द्वारा कम नही किया जा सकता, परन्तु इस मत को सब लोग नही मानते। सेनेट अपने ऊपर यह जोखिम लेने के लिए तैयार नही जान पडती।

अब संयुक्त राष्ट्र संघ मे संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थिति यह है कि हम तो सब राष्ट्रो मे व्यक्तियो के अधिकारो की कानूनी रक्षा का विकास और विस्तार करने के पक्ष मे हैं, परन्तु हमे कही भी पूर्णता तक पहुंचने की आशा नही है। हमारे अपने देश मे, अपने कानूनो और रीति-रिवाजो मे, हमे अनेक त्रुटियां दिखाई देती हैं, और उन्हे हम स्वीकार भी करते है, परन्तु साथ ही हम अधिक न्याय और समानता की दिशा मे प्रगति भी कर रहे हैं। हम वैयक्तिक अधिकारो को जितना-जितना समझते जाते हैं उतना-उतना हमारी राजनीतिक प्रणालिया उनके सिद्धान्त निश्चित करती जाती हैं। इससे अधिक अच्छे मार्ग का ज्ञान हमे नही है।

अध्याय १२

शासन का अमेरिकी दर्शन

संविधान के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका प्रत्येक राज्य को "शासन के गणतन्त्री रूप" की गारण्टी देता है। परन्तु संविधान के इस अनुच्छेद का हवाला देने की आवश्यकता कभी नही पडी, क्योकि इस देश मे राजनीतिक विवादो का विषय प्राय शासन का रूप नही, अपितु यह रहा है कि शासन किस प्रकार का काम अधिक भलीभाति कर सकता है। चरम-पन्थी लोग शायद आशा तो यह करते थे कि वे इस देश मे भी तानाशाही कायम कर सकेंगे, परन्तु स्थानीय संस्थाओ मे भी शायद ही कभी वे सत्ता प्राप्त कर सके हो। सन् १८७४ मे रोड् आइलैण्ड मे विद्रोह हो गया था, और राष्ट्रपति ने उस पक्ष की सहायता की थी जिसे वह न्यायपूर्ण समझता था। सन् १८७४ मे स्त्रियो को मताधिकार देने के पक्षपातियो ने यह सिद्ध करने का असफल प्रयत्न किया था कि संविधान के अनुसार जिस राज्य का शासन स्त्रियो को मताधिकार देने से इनकार करे वह "गणतन्त्रीय नही है"। साधारणतया न्यायालय इस प्रश्न का निर्णय करने से इनकार करते रहे हैं कि शासन का कौन-सा रूप गणतन्त्रीय है, वे इस प्रश्न को "राजनीतिक" बतलाते रहे हैं।

इसका परिणाम यह हुआ है कि इस प्रकार के प्रश्नो का निर्णय कि सन् १९३० मे आरम्भ ल्युइजियाना मे ह्यू लाग ने अपने नियन्त्रण मे जैसा शासन स्थापित कर लिया था वह तानाशाही था या नही और यह कि शेष संयुक्त राज्य अमेरिका को इसमे हस्तक्षेप करना चाहिये या नही; राजनीतिक विवाद के द्वारा अमेरिकी जनता

ही करती है, न्यायालय नही। यदि शेष संयुक्त राज्य अमेरिका कभी यह निर्णय कर दे कि अमुक राज्य को अपने हाथ मे ले लेना चाहिए, तो उस स्थिति को शासन के गणतन्त्रीय रूप का भंग हो जाना कहा जा सकेगा, परन्तु सर्वोच्च न्यायालय कुछ आपत्ति नही करेगा।

परन्तु साधारणतया शासन के जिन रूपो को अमेरिकी जनता "गणतन्त्रीय" मानती है उनकी सदा रक्षा की जाती है, उनकी भावना का भ्रष्टाचारी राजनीतिज्ञो ने भले ही उल्लंघन क्यो न कर दिया हो। प्रत्येक राज्य किसी ऐसे संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार के बल पर कार्य करता है जिसमे संशोधन जनता हिंसामय क्रान्ति के विना ही कर सकती है। इस शासन मे कानूनो की रचना जनता के प्रति उत्तरदायी प्रतिनिधि ही करते है। व्यक्तियो के जिन अधिकारो को जनता कानून के द्वारा रक्षणीय मानती है उन सब के रूप की रक्षा की जाती है, व्यवहार मे कानून का पालन भले ही भ्रष्टाचारपूर्ण क्यो न हो गया हो। शासन के अत्याचारो से बचने के लिए नागरिक न्यायालयो मे अपील कर सकते हैं। अमेरिकी जनता जिसे गणतन्त्रीय शासन का रूप कहती है, उसकी यह सब विशेषताएं है। सम्भव है कि उनका पालन सदा लिखित शब्द के अनुसार न किया जाता हो, परन्तु सत्ता तो मानी ही जाती है।

बीसवी शताब्दी मे हिटलर और सोवियट यूनियन को देख लेने के पश्चात्, लोग शासन के उन रूपो तक को अत्यन्त मूल्यवान मानने लगे है जिनका स्वतन्त्र लोग आदर करते हैं। सम्भव है कि सोवियट यूनियन सरीखे राष्ट्र मे भी संविधान उन सब अधिकारो की गारण्टी करता हो जिन्हे अमेरिकी अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए आवश्यक मानते है, परन्तु यदि व्यवहार मे शासन सूत्रो का संचालन करने वालो को चुनौती देने के लिए जनता के पास राजनीतिक विरोध संगठित करने के कोई भी साधन न हो तो वह गारण्टी व्यर्थ है। कानून के जिन सब रूपो से मिलकर "शासन के गणतन्त्रीय रूप" का निर्माण होता है उनका भ्रष्टाचारी होना भी सम्भव है, परन्तु यदि जनता को राजनीतिक संगठन करने का अधिकार हो तो वह इच्छा होने पर भ्रष्टाचार का अन्त कर सकती है और अपनी

परम्परागत स्वतन्त्रता को पुनः प्राप्त कर सकती है। यदि किसी स्वतन्त्र देश मे कानून कहता हो कि जब मतदाता मत दे रहा हो तब उसे न तो कोई देख सकता है और न डरा-धमका सकता है, और उस कानून के रूप का सब लोग आदर करते है, तो जनता अपने विधान मण्डल और राष्ट्रपति का निर्वाचन करके उनके द्वारा उन अधिकारो की रक्षा करवा सकती है जिन्हे कि वह आवश्यक समझती है।

जब जनता को शासन का ऐसा रूप प्राप्त हो जाता है जिसमे वह सर्व-प्रभुत्व-सम्पन्नता से आचरण कर सके तब मार्ग का निश्चय उनके परस्पर विरोधी स्वार्थों और उसके दर्शन अर्थात् निर्णय करने के सिद्धान्तो के अनुसार होता रहता है। अमेरिकी जनता का राजनीतिक दर्शन दुर्बोध तो है ही, कई दृष्टियो से परस्पर-विरोधी भी है।

शासन के अमेरिकी सिद्धान्त ब्रिटिश और अमेरिकी जनता के उन संघर्षों के लम्बे इतिहास से प्रभावित हैं जो उन्होंने शासन के अत्याचारो के विरुद्ध किये थे। इनमे प्रथम उल्लेखनीय संघर्ष, जो इतिहास की एक विशेष घटना बन चुका है सन् १२१५ मे "बेरनो" अर्थात् अंग्रेज ठिकानेदारो ने शाह जान के विरुद्ध किया था, उसके परिणाम स्वरूप प्रसिद्ध "मेग्ना चार्टा" अर्थात् उस समय के ठिकानो के नियमो की लिखित गारण्टी का 'बडा कागज' (अधिकार पत्र) दिया गया था। "मैग्ना चार्टा" का सम्बन्ध निम्न जनता की अपेक्षा 'बैरनो' के साथ ही अधिक था। परन्तु जनता ने शाह के विरुद्ध 'बेरनो' का साथ दिया था, क्योंकि उन्होने कहा था कि जनता मे व्याप्त कष्टो का कारण शाह की फजूल खर्चिया और जनता की रक्षा करने मे भ्रष्टाचारी अधिकारियो की लापरवाही है।

शासन की निम्न और उच्च शक्तियो मे इसी प्रकार के सम्बन्धो का उदाहरण अमेरिकी क्रान्ति के समय पुन. दिखाई पड़ा था। तब अधिकतर जनता ने शाह के शासन के विरुद्ध औपनिवेशिक शासनो का साथ दिया था। एक बार पुनः लोगो ने अनुभव किया था कि हमारे कष्टो का कारण शाह द्वारा कानून का दुरुपयोग है

जब औपनिवेशिक विधान मण्डलो और उनके उत्तराधिकारी राज्य शासनो को उन्होने अपने अधिकारो का रक्षक और समर्थक समझा था।

"मैग्ना चार्टा" से लेकर श्रमिको को सम्मिलित समझौता करने के अधिकार की गारण्टी देने वाले संघीय कानून तक, अमेरिकी परम्परा के मूल मे स्वतन्त्रता और समानता के जितने भी विचार निहित है उनका विकास, न्यून या अधिक अधिकारो के सम्पन्न लोगो ने ही किया था, गरीबो की वस्तियो मे से उठे हुए क्रान्तिकारियो ने नही। इतिहास के प्रारम्भिक काल में इंगलैण्ड की साधारण जनता कभी-कभी अपने से "ऊपर वालो" के विरुद्ध भी विद्रोह कर देती थी, जैसा उसने सन् १३८१ मे 'वैट टाइलर का विद्रोह' नाम से किया था। परन्तु बुद्धिमान और संयमी नेता के अभाव मे वह अभीष्ट सुधार प्राप्त करने मे सफल नही हो सकी थी। जनतन्त्रीय समाज की ओर अधिकाधिक प्रगति का नियम प्रायः यही रहा है कि शक्तिसम्पन्न और प्रभावशाली लोग अपने से अधिक शक्तिसम्पन्न लोगो का और शासनो का विरोध करते रहे। इस इतिहास के फल स्वरूप अमेरिकी सिद्धान्तो का रूप अत्यन्त मध्य-वर्गीय है। उदाहरणार्थ, अमेरिका के संगठित श्रमिक शायद ही कभी ऐसा कोई काम-काज करते हों जिससे यह प्रकट हो कि वे अपने आपको "प्रोलेटेरियट" अर्थात् निरा मजदूर समझते हैं। वे अपने यूनियन का साथ देते हैं, परन्तु कम्यूनिस्ट तानाशाही की स्थापना का साधन बनकर नही। वे यूनियनो का उपयोग मध्य-वर्गीय दर्जे के रहन-सहन का अपना अधिकार सुरक्षित करने तथा उसे विस्तृत करने के लिए और अमेरिकी समाज मे मध्य-वर्गीयो का जैसा आदर होता है वैसा ही अपने लिए भी प्राप्त करने के लिए करते हैं।

इसलिए अमेरिकी परम्परा, संगठित और सम्मानित स्वार्थो मे संघर्षो की एक लम्बी शृंखला के रूप मे चली आ रही है। अमेरिकी क्रान्ति इन संघर्षों का ही एक नमूना था। उसमे शाह का साथ वे बडे-बड़े व्यापारी और इंगलैण्ड के कारखाना-मालिक दे रहे थे; जो व्यापार मे अमेरिकियो के मुकाबले से बचना नही चाहते थे। उनका स्वार्थ, शाह और पार्लमेण्ट द्वारा प्रदत्त कानूनी अधिकार के आधीन पहले से संगठित थे। उनके विपरीत, अमेरिका के पक्ष मे अमेरिकी व्यापारी, तम्बाकू

वोनेवाले किसान, भूमिपति, और अन्य ऐसे मजदूर और किसान थे जिनको समझा-बुझाकर यह विश्वास करवा दिया गया था कि व्यापार पर लगायी गयी ब्रिटिश पाबन्दियो से और टैक्सो से उनको नुकसान होगा। अमेरिकी लोग अपने राज्यो के तथा कुछ शिथिल रूप मे महाद्वीप की कांग्रेस के नेतृत्व मे संगठित थे। जो प्रभावशाली अमेरिकी लोग शाह का साथ दे रहे थे वे वाद को बाहर निकाल दिये गये। जो नये राष्ट्र की स्थापना करने और उसके इतिहास की रचना करने के लिए पीछे रह गये उनका दृढ विश्वास था कि केन्द्रीय शासन के अत्याचारी हो जाने की सम्भावना रहती है, ओर उसके विपरीत स्थानीय शासन केन्द्रीय शासन का विरोध करने के लिए एक अच्छा और संगठित साधन होता है। इस सामले मे वे अपने उन पूर्वजो से मिलते-जुलते थे जिन्होने कि शाह जॉन के विरुद्ध 'वैरनो' का साथ दिया था।

केन्द्रीय शासन से यह भय और उसकी नापसन्दी ही टामस जेफरसन के अनुयायियो का प्रथम सिद्धान्त था। जेफरसनी जनतन्त्र का आदर्श-वाक्य था—"वही शासन सर्वोत्तम है जो न्यूनतम शासन करता है।"

दूसरी ओर, केन्द्रीय शासन कभी-कभी जनता के अधिकारो को पद-दलित भले ही करने लगे और स्थानीय शासन को उसका विरोध भले ही करना पडे, परन्तु जनता की कुछ आवश्यकतायें ऐसी होती है जो केन्द्रीय शासन द्वारा ही पूरी हो सकती हैं। क्रान्ति के तुरन्त वाद ही देश मे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी थी जिसमे केन्द्रीय शासन के विरोध की भावना गौण पड़ गयी थी। व्यापारियो, महाजनो और सार्वजनिक कार्यकर्ताओ को प्रत्यक्ष दिखलाई पडने लगा था कि व्यापार का ह्रास हो रहा है और देश की रक्षा-व्यवस्था निर्बल पडती जा रही है। इन लोगो का नेता ऐलेक्जण्डर हेमिल्टन था। हेमिल्टनी अथवा संघ पक्षपाती लोग यद्यपि इंगलैण्ड के केन्द्रीय शासन के कट्टर विरोधी थे, पर वे व्यवहारिक कारणो से विवश होकर संयुक्त राज्य अमेरिका में दृढ केन्द्रीय शासन की स्थापना का समर्थन करने लगे थे। जब राज्यो द्वारा इस पर स्वीकृति की छाप लगाने का अवसर आया तब जेफरसन तक ने अनिच्छापूर्वक संविधान के विचार का साथ दिया था।

आज तक भी अमेरिकी लोग, जब जो राजनीतिक प्रयोजन जिसके मन मे हो उसके लिए लाभदायक या हानिकारक होने के अनुसार, हेमिल्टन और जेफर्सन के सिद्धान्तो के मध्य मे कभी इधर को तो कभी उधर को उछलते-कूदते रहते हैं।

इस परिवर्तन का अत्यन्त आकर्षक और मनोरंजक उदाहरण डिमोक्रेटिक पार्टी की सन् १९३३ से सन् १९५३ तक की नीतिया हैं। श्री रूजवेल्ट और श्री ट्रूमन, दोनो ने, इस काल मे संघीय शासन के अधिकार और कार्य बहुत बढा दिये। यह नीति विशुद्ध हेमिल्टनी है, यद्यपि डिमोक्रेटिक पार्टी जेफरसन की उत्तराधिकारी है और अब तक उसके ही बहुत-से विचारो की दुहाई देती है। उत्तराधिकारी के इस विचित्र प्रकार परिवर्तित होने का कारण यह है कि अब तक शासनाधिकार दूसरे के हाथ मे था। सन् १९३३ मे लोग, सन् १७८६-१७८७ के कठिन समय की भाति, बड़े पैमाने पर भारी मन्दी का शिकार हो रहे थे। जिस प्रकार सन् १७८७ मे हेमिल्टन ने सोचा था उसी प्रकार अब डिमोक्रेटो ने सोचा की जनता की आवश्यकता पूरी करने का सर्वोत्तम उपाय संघीय अधिकार का प्रयोग है। इसलिए सिद्धान्तो को वस्तुस्थिति के अनुसार तोड़-मोड लेना पडा।

शासन के विषय मे हेमिल्टनी और जेफरसनी दृष्टिकोणो के अतिरिक्त, अमेरिकी राजनीतिक दर्शन, शासन के प्रयोजन और प्रकार के सम्बन्ध मे अधिक सूक्ष्म कल्पनाओ से भी प्रभावित हुआ है। प्रस्तुत विचार के लिए ऐसी चार प्रमुख कल्पनाओ की चर्चा की जा सकती है। इनमे से दो 'अनार्किज्म' और 'सोशलिज्म' तो चरम कल्पनाएं है, और शेष दो की विचारधारा उनकी मध्य-वर्ती है। 'अनार्किज्म' का अभिप्राय है किसी भी शासन का न होना अर्थात् अराजकता और 'सोशलिज्म' का आदर्श है सब कुछ शासन के ही सुपुर्द कर देना अर्थात समाजवाद। अमेरिकी लोगो के प्राय: सभी राजनीतिक और आर्थिक विचारो पर मध्य-वर्ती विचार-धाराओ का ही प्रभाव पडा है, चरम कल्पनाओ का नही। मध्यवर्ती विचारधाराओ मे से एक का नाम है 'इण्डिविजुअलिज्म' (व्यक्तिवाद),

अर्थात् व्यक्तियो के अधिकारो को प्रधानता देना । दूसरी विचारधारा का अमेरिकी भाषा मे निश्चित नाम तो कुछ नहीं है, परन्तु उसका सार यह है कि देश की समृद्धि मे शासन को सहायता करनी चाहिये। इसे "इण्टरवेन्शनिज्म" अथवा हस्तक्षेप का नाम दिया जा सकता है।

'अनार्किज्म' (अराजकतावाद) और 'सोशलिज्म' (समाजवाद) का अमेरिकी राजनीति पर प्राय कुछ भी प्रभाव नहो पड़ा। अराजकतावाद एक चरम कल्पना है कि शासन सदा अत्याचारी ही होता है, और इस कारण उसका अन्त कर देना चाहिए। दूसरी चरम कल्पना 'सोशलिज्म' (समाजवाद) मे यह दावा किया जाता है कि व्यापार और व्यवसाय पर निजी स्वामित्व के कारण ही जनता का पीडन होता है, और जो व्यापार और व्यसाय कुछ भी श्रमिक रखने के लायक बडे हो उन पर राज्य का स्वामित्व हो जाना चाहिए। इन दोनो कल्पनाओ से अमेरिकी जनता प्रभावित नही हुई। अपनी मध्य-वर्गीय प्रवृत्तियो के कारण अधिकतर अमेरिकी लोग चरम और अतिसरल कल्पनाओ से आकृष्ट नही हुए हैं। शायद हेमिल्टन और जेफरसन के मध्य में झूलते रहने के लम्बे इतिहास मे भी औसत अमेरिकियो को किन्ही काल्पनिक युक्तिवादो मे मध्य के समीप सर्वाधिक सुरक्षा का अनुभव करने का अभ्यासी बना दिया है। कम से कम, शासन के उचित उपयोग की चर्चा छिडने पर राजनीतिक विवाद मे जिन दो कल्पनाओ का बार-बार जिक्र होता है वे 'इण्डिविजुअलिज्म' (व्यक्तिवाद) और 'इण्टरवेन्शनिज्म' (शासन का हस्तक्षेपवाद) ही हैं। इनमें से प्रथम तो जेफरसनी विचारो सें मिलती-जुलती है और द्वितीय का अविर्भाव अमेरिकी राजनीति मे पहले-पहल हेमिल्टन के कारण हुआ था।

'इण्डिविजुअलिज्म' (व्यक्तिवाद) कल्पना के अनुसार, शासन का एक मात्र उचित उपयोग आन्तरिक व्यवस्था का रखना और बाह्य आक्रमणो से राष्ट्र की रक्षा करना है। इस कल्पना को "लेस्से-फेर"—"लोगो को अपनी व्यवस्था आप करने दो"—भी कहा जाता है। इसका आधार यह विश्वास है कि अपराधियों के अतिरिक्त अन्य लोगो को यदि अपने स्वार्थों की चिन्ता आप करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जायगा तो वे अपनी समस्याओं का हल स्वयमेव यथासम्भव उत्तम

उपाय से कर लेंगे। उनकी निर्णायक बुद्धि जैसा कहेगी उसके अनुसार वे परस्पर सहयोग या प्रतिस्पर्धा या अपने विरोधियो का विरोध करने लगेंगे। इसके समर्थको का दावा है कि मानवता के मामलो को कोई "अदृश्य हाथ" स्वयमेव उनके तर्क-संगत मार्ग की ओर ले जाता और सुविधाओ और बाधाओ का उचित विभाजन कर देता है। जो कुछेक उदाहरण आकस्मिक कष्टो या कठनाइयो के रह जाते हैं उनका प्रतिकार निजी परोपकारियो द्वारा किया जा सकता है।

'इण्डिविजुअलिज्म' (व्यक्तिवाद) की कल्पना के अनुसार यदि किसी काम में कुछ गडबड हो जाय, जैसे किसी बस्ती के निर्वाह का एक मात्र साधन कोई मिल दिवालिया हो जाय, तो वह भी आर्थिक नियम के प्रयोग का ही उदाहरण है। यदि देश मे मन्दी आ जाय तो वह भी आर्थिक नियम के पालन का फल है। प्राकृतिक नियमो मे हस्तक्षेप करने के प्रयत्न को भयावह और नासमझी का काम माना जाता है। वे डरते हैं कि प्रकृति के नियमो मे हस्तक्षेप करने से हालात और भी बिगड जायंगी। सन् १६२६ मे जो भारी मन्दी शुरू हुई थी उसके समय राजनीतिक विवादो मे ये सब युक्तियाँ पेश की गयी थी।

इसकी विरोधी कल्पना का निश्चित नाम कुछ नही है। इसका कारण शायद यह है कि उसे सदा अपनी सफाई देते रहना पडता है। अमेरिकियो का स्वभाव ही ऐसा बन चुका है कि वे शासन से सहायता स्वीकार करते हुए लज्जा का अनुभव करते हैं। वे सुगमता से यह भी नही मानते कि ऐसे कोई सिद्धान्त हैं जिनमे इस प्रकार की सहायता का समर्थन किया जा सके। इसलिए जब कभी अमेरिकी लोग किसी ऐसे काम की सोचते है जिसे उनकी समझ के अनुसार शासन् को करना चाहिए तब उनका प्राय यह विश्वास होता है कि "कुछ न कुछ नियम अवश्य होगा।" परन्तु इस विश्वास के बावजूद जब वे किसी अन्य की सहायता करने के लिए कर देने की बात मन मे लाते है तब वे अनुभव करने लगते हैं कि ऐसे कामो मे अमेरिका परम्परा बिगड जायगी।

'इण्टरवेन्शनिज्म' (शासन का हस्तक्षेपवाद) की कल्पना का सार यह है कि कुछ आवश्यकताएं ऐसी हैं जो पुलीस और सेना के वश की नही हैं और उन्हे

केवल शासन पूरा कर सकता है। संविधान लिखा ही न जाता यदि व्यापारी लोग निराशा के मारे यह अनुभव न करते कि विनाशक व्यापारिक प्रतिबन्धो तथा मुद्रा के मूल्य मे भयंकर उतार-चढाव से बचने के लिए व्यापार को पूर्णतया नियन्त्रित किया जाना आवश्यक है। संविधान की रचना विशेषत. इसी प्रयोजन से की गयी थी कि व्यापार, मुद्रा, डाक-व्यवस्था और 'पेटेण्टो' के कार्यालय नियन्त्रण करने और "सर्वसाधारण के हित" की अन्य व्यवस्थाएँ करने के लिए केन्द्रीय शासन को अधिक अधिकार दिये जा सके।

इसी प्रकार 'फेडरलिस्टो' अर्थात् संघ-पक्षपातियो के इतिहास का आरम्भ ही ऐसी पार्टी के रूप मे हुआ जो कि शासन को पुलीस और विदेशी शत्रुओ से रक्षा के कामो से कुछ अधिक काम सौंपना चाहती थी—और आज की 'रिपब्लिकन' पार्टी के पूर्वज 'फेडरलिस्ट' ही थे। वे चाहते थे कि समृद्धि और उन्नति के लिए जो कुछ भी करना आवश्यक है उसकी सीमाओ मे रहते हुए शासन व्यापार को भी सहायता करे।

जिन सिद्धान्तो के कारण 'फेडरलिस्टो' ने संविधान का समर्थन किया था उन्ही के कारण उनके उत्तराधिकारियो ने उद्योग-व्यवसायो को प्रोत्साहन देने के लिए संरक्षक तट-करो का समर्थन किया। देश के इतिहास के आरम्भिक समय में संघीय शासन के अधिकतर जनहितकारी कार्यो से, श्रमिको और किसानो की अपेक्षा व्यापारियो का प्रत्यक्ष लाभ अधिक हुआ था, इस कारण जेफरसन के अनुयायी शासन के कार्यो का विस्तार करने के विरोधी थे; वे "इण्डिविजुअलिज्म" (व्यक्तिवाद) कल्पना के ही पक्षपाती बने रहे। सन् १८२८ मे ऐण्डरू जैक्सन पश्चिमी सीमान्त की जनता का प्रतिनिधि बनकर 'ह्वाइट हाउस' में पहुचा और उसने 'नेशनल बैंक' (सरकारी बैंक) का विरोध किया, क्योंकि उसके कामो से सीमान्त के छोटे किसानो और व्यापारियो की अपेक्षा बड़े नगरो के व्यापारियो को अधिक लाभ पहुच रहा था।

अत. यह समझने के लिए कि कभी कोई पार्टी 'इण्डिविजुअलिज्म' की पक्षपाती और कभी कोई शासन की सेवाओ का विस्तार करने की पक्षपाती क्यो

वन जाती है, यह जान रखना चाहिए कि ऐसे परिवर्तन यह देखकर ही किये जाते है कि रोटी चुपड़ी हुई किधर से है। परन्तु जो कोई जो कुछ चाहता है उसे शासन से वही दिलवा कर दोनो पार्टियाँ समझौता क्यो नही कर लेती ? किसी हद तक वे ऐसा करती भी है। प्रत्येक कांग्रेस सदस्य चाहता है कि शासन उनके जिले मे डाक-घर खुलवा दे या नदी का बाँध बनवा दे, और यदि अन्य कांग्रेस-सदस्य उसके यहाँ के सार्वजनिक कार्यों के पक्ष मे मत दे दें तो वह उनके पक्ष में दे देता है। परन्तु संघीय शासन के काम का विस्तार करने के लिए इस प्रकार की सौदेवाजी की एक हद है। इसका एक अन्य कारण यह है कि जनता ऊँचे करो को पसन्द नही करती। एक अन्य कारण यह है कि बहुत सी सार्वजनिक सेवाओ के कारण किसी न किसी प्रकार का नियन्त्रण अथवा बड़े-बडे निजी कार-बारो में हस्तक्षेप होता है। उदाहरणार्थ, ट्रस्ट-विरोधी कानून लागू करने से साधारण व्यापारियो को भले ही लाभ हो, परन्तु कुछ कार्पोरेशनो को—प्राय अधिक प्रभावशालियो और शक्तिशालियो को—तो हानि ही होती है। स्वभावत. जिनको हानि होती है वे "इण्डिविजुअलिज्म" की वकालत और संघीय कार्यों के विस्तार का विरोध करने लगते हैं।

यद्यपि पार्टियो की ओर से जो युक्तिया दी जाती हैं उनका आधार प्रायः विशेष स्वार्थ होते है, परन्तु वे सर्वथा तर्क हीन या अर्थ हीन भी नही होती। अमेरिकी लोगो ने अनुभव से देखा है कि 'अनार्किज्म' (अराजकतावाद) और 'सोशलिज्म' (समाजवाद) की चरम कल्पनाओ के मध्य की द्विपक्षीय राजनीतिक कल्पना पर चलने से आर्थिक प्रगति तो होती ही है, अनेक सम्भावित आपत्तियो से रक्षा भी हो जाती है। वे सरकारी सहायता के लाभो और निजी प्रगति को दवाने की हानियो पर निरन्तर विवाद करके मध्य-मार्ग का अवलम्बन किये रहते हैं। तर्क की दृष्टि से ये दोनो ही युक्तिया अंशत. ठीक हैं, और जब मतदाता दोनो को तोलकर तुला को सीधा कर देते है तब उन्हे शासन की वही प्रणाली मिल जाती है जो कि अमेरिकी जनता को पसन्द है।

उत्तराधिकार का स्वरूप विकृत हो जाने के कारण जिस प्रकार 'फेडरलिस्टो'

(संघ-पक्षपातियो) के उत्तराधिकारी "इण्डिविजुअलिज्म" के पक्षपाती वन गये और टामस जेफरसन के अनुगामी शासन के कार्यो के विस्तार का समर्थन करने लगे, वह प्रधानतया विज्ञान और उसके आविष्कारो का परिणाम था।

सन् १८०० मे अमेरिकी जनता मे वहु संख्या किसानो की थी, और शासन उनकी सेवा वहुत कम कर सकता था। शासन ने पश्चिमी प्रदेश खरीद कर या जीतकर उसमे उन्हे स्वतन्त्र छोड़ दिया था। उसने केवल इण्डियन कवीलो से उनकी रक्षा करने का काम अपने जिम्मे रक्खा था। इससे आगे सीमान्त मे अग्रणियो को अपना मार्ग स्वयं निकालना पडा। जव वे स्वतन्त्र वस्तियो मे अपना संगठन करने लगे तव उनके शासक वे स्वाभाविक नेता वने जिनका निर्वाचन उन्होने स्वयं किया था। वे अपने घोडो के चोरो को फांसी भी स्वयं ही लगाते थे। इस प्रकार अपने शासन का निर्माण स्वयं करना सामाजिक संगठन का, आदि काल के कवीलो की अपेक्षा भी, अच्छा उदाहरण था। अग्रणी लोग पहले से जानते थे कि शासन का अमेरिकी रूप क्या होगा, और जव कभी उन्हे आवश्यकता होती थी, वे सभा वुला कर उसमे इतिकर्तव्यता का निर्णय कर लेते थे।

इस प्रकार के अनुभवो से न केवल पश्चिम के अग्रणियो का, अपितु साधारणतया सारी ही अमेरिकी जनता का विश्वास ऐसा वन गया कि यदि शासन की आवश्यकता हो ही तो व्यवहार की अधिकतर समस्याएं छोटे-छोटे स्थानीय शासनो से सुलझ सकती हैं।

इसके पश्चात् धीरे-धीरे विज्ञान का प्रभाव वढने लगा। विशाल महाद्वीप के आर-पार चलने वाली रेलें वढती-वढती प्रशान्त महासागर तट तक पहुँच गयी। कैलिफोर्निया के लोग भाडो की अधिकता और अपने विरुद्ध अनुचित पक्षपात की शिकायत करने लगे। रेलें इतनी प्रभावशाली थी कि उनका नियन्त्रण किसी एक राज्य-शासन के वश की वात नही रहा। मिट्टी का तेल निकल आया और लोग मोमवत्तियां तथा ह्वेल का तेल जलाना छोड कर "पहाडी तेल" के लैम्प जलाने लगे। मिट्टी के तेल का व्यापार शीघ्र ही शीघ्र एकाधिकारी व्यापार मे परिणत हो

गया और लोग इस परिणाम से प्रसन्न नही हुए । जनता रेलो का नियन्त्रण और एकाधिकार पूर्ण व्यापारो का दमन संघ द्वारा किया जाने की मांग करने लगी ।

बीसवी शताब्दी मे नवीन विकास और भी शीघ्र-शीघ्र होने लगे । उनमे से कइयो के कारण इतने बडे-बडे व्यवसाय खडे हो गये कि वे राज्यो की सीमाएं लांघ कर फैल गये और उन्हे राज्यों की अपेक्षा बडी शक्ति से नियन्त्रित करना पड गया । संयुक्त राज्य अमेरिका मे रेडियो लाभ पर न चल सकता यदि कोई अधिकारी उसकी सीमाएँ नियन्त्रित न कर देता। हवाई यातायात के सुरक्षा नियमों का पालन करवाने और जिन मार्गो पर एकाधिकार की आवश्यकता हो उनका लाइसन्स देने के लिए भी संघीय अधिकारी की आवश्यकता है । प्रत्येक ऐसा नया आविष्कार होने पर जिसके प्रयोग मे संघीय प्रबन्ध के हस्तक्षेप की या सहायता की आवश्यकता हो, वाशिंगटन के पहले से बहुसंख्यक सरकारी विभागो मे एक और विभाग की वृद्धि हो जाती है । मोटर-गाडी का मालिक प्रायः कोई व्यक्ति होता है और वही उसे चलाता भी है, परन्तु उसके लिए इतनी दूर-दूर तक फैली हुई सडको की आवश्यकता पडती है कि उनकी सन्तोषजनक व्यवस्था, बिना संघ की सहायता के, केवल राज्य नहीं कर सकते ।

प्राकृतिक विज्ञानो ने अनेक ऐसी जनोपयोगी सेवाओ का आविष्कार किया है जो लाभदायक केवल तभी हो सकती हैं जबकि संघीय शासन उन्हे जनता के लिए अति स्वल्प मूल्य मे या बिना मूल्य सुलभ कर दे । ऐसी प्रथम सेवा वैज्ञानिक कृषि का विकास थी । उसे संघीय कृषि-विभाग ने राज्यो की सहायता से छोटी-छोटी पुस्तिकाओ और जिला-एजन्सियो द्वारा जनता के लिए सुलभ बना दिया । वैज्ञानिक कृषि का ज्ञान फैल जाने का लाभ यह हुआ कि खेती मे लगी हुई आबादी का बहुत बडा भाग अन्य कार्यो के लिए मुक्त हो गया और वह संयुक्त-राज्य अमेरिका मे औद्योगिक उत्पादन को उच्च स्तर तक पहुँचा देने का कारण बना । जो कुछेक लाख किसान अब खेती कर रहे है वे पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक फसले पैदा करते हैं, यहा तक कि उनकी पैदावार के लिए बाजार तलाश करना भी एक समस्या बन गया है, और उसे हल करने का भार संघीय शासन के सिर पड़ गया है ।

सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र मे नये आविष्कारो के कारण लोगो की औसत आयु बहुत बढ गयी है, और उससे न केवल निजी डाक्टरो पर नये कर्त्तव्यो का बोझ पड गया है, स्थानीय शासनो पर भी शुद्ध पानी और स्वास्थ्य, सफाई आदि की व्यवस्था करने का भार आ पडा है। उनके कारण ऐसे अनेक नये अवसर भी उपलब्ध हो गये हैं कि उनका लाभ राष्ट्र-व्यापी पेमाने पर ही उठाया जा सकता है। संयुक्त-राज्यो की सार्वजनिक स्वास्थ्य-सेवा का संगठन इसी उद्देश्य से किया गया है। चिकित्सा-विज्ञान का और खेतो से उठ कर लोगो के नगरो मे जा बसने का, एक और परिणाम यह हुआ है कि बुढापे मे पेन्शन की व्यवस्था न केवल अधिक परिमाण मे करनी पड गयी है, अपितु यह भी ध्यान रखना पडा है कि नागरिक को उसका लाभ एक राज्य से सरे राज्य मे चले जाने पर भी मिलता रहे।

कुछेक अन्य सेवाओ का, जैसे कि ऋतु-विभाग, नापतोल आदि के स्टैण्डर्डो (मान) के ब्यूरो, जन गणना और अनेक संख्या विभागो का, केवल नाम निर्दिष्ट कर देना पर्याप्त होगा। ये विभाग खेती की और कारखानो की पैदावार आदि का तखमीना देते रहते हैं। इन सेवाओ की आवश्यकता इस कारण है कि वैज्ञानिक और टेकनिकल कुशलताओ का उपयोग करने मे ये अमेरिकी जनता के लिए सहायक रहें। कुछ निजी संगठन और स्थानीय तथा राज्यीय शासन भी, इस प्रकार की कुछ सेवाएं करते हैं परन्तु कुछ सेवाएं केवल संघीय शासन सुलभ मूल्य पर कर सकता है।

अन्त मे, अत्यन्त ध्यान आकर्षित करने वाला संघीय शासन का जो विस्तार हुआ वह सन् १९३२ मे श्री फ्रैंकलिन रूजवेल्ट के राष्ट्रपति निर्वाचित हो जाने पर भारी मन्दी के कारण हुआ। जनता मन्दी के मारे तंग आ चुकी थी। वह "विश्वास" उत्पन्न करने के लिए "लेस्से-फेर" के अर्थात् लोगो को अपना काम आप करने देने के प्राकृतिक उपाय को भी परख कर देख चुकी थी। निजी परोपकार और स्थानीय तथा राजकीय सहायताओ द्वारा भी बेरोजगारी कम करने का प्रयत्न करके देखा जा चुका था। अन्त मे उसने संघीय शासन से सहायता लेने

का निश्चय किया। श्री रूजवेल्ट ने कई-एक प्रयत्न केवल परीक्षण के रूप में किये थे, परन्तु जब उनके द्वारा धीरे-धीरे समृद्धि वापस आने लगी तब उनमे से अधिकतर को जनता भी पसन्द करने लगी। सन् १९२६ के 'एम्प्लायमेण्ट ऐक्ट' मे शासन द्वारा जनता की सेवा करने का जो सिद्धान्त अपनाया गया था उस पर भी जनता ने अपनी स्वीकृति की छाप लगा दी। उस ऐक्ट मे कांग्रेस ने माना था कि मन्दी को रोकने के लिए "सब सम्भव साधनो का प्रयोग" करना शासन का ही उत्तरदायित्व है।

परन्तु इस मानने मात्र से इस विवाद का अन्त नही हो जाता। अमेरिकी जनता अब भी निजी उद्योग-व्यवसाय को और स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा को ही पसन्द करती है। पहले जो सेवाएं शासन द्वारा की जाने या न की जाने के औचित्य पर विवाद हुआ करता था उनमे से बहुतो को अब दोनो पार्टियो ने शासन के सपुर्द करना स्वीकार कर लिया है; परन्तु जनता अब भी उन उद्योगो का शासन द्वारा संचालित होना पसन्द नही करती जिनको उसके द्वारा चलाने की आवश्यकता नही है अथवा जो निजी प्रयत्न से भी चल सकते हैं। सन् १९५२ मे जनरल आइजनहोवर को जनता ने मितव्ययिता के "प्लैटफार्म" पर चुना था। अर्थात् जनता ने उन्हे शासन की छानबीन करने, आवश्यक व्यय छांट देने, और जिन सेवाओ को वह मितव्ययिता के कुल्हाडे से बचाना आवश्यक नही समझती थी उनका अन्त कर देने का निर्देश दिया था।

जब एलेक्जण्डर हेमिल्टन ने संघीय शासन का विचार करने का आन्दोलन किया था तब जिन लोगो को उससे प्रत्यक्ष लाभ पहुचा था वे व्यापारी थे। इस कारण वे हेमिल्टन के पक्षपाती बन गये थे। परन्तु उसके डेढ़-सौ वर्ष पश्चात् जब श्री फ्रेकलीन डी० रूजवेल्ट ने शासन का विस्तार किया तब प्रत्यक्ष लाभ बेरोजगारो को पहुँचा और इसलिए श्री रुजवेल्ट का समर्थन न करने वाले वही थे। अन्त मे लाभ व्यापारियो को भी हुआ, परन्तु उनको कर देना पडता था; और करो का बिल देखते ही जो दु ख होता है, वह उस सुख से कही अधिक होता है जो अगले वर्ष आय बढ़ जाने पर मिलता है। वे यह भी देख चुके थे कि सर्वजनोपयोगी

सेवाएं अनिवार्य रूप से शासन के नियन्त्रण मे जायेंगी ही, परन्तु संघ के नियन्त्रणों की अपेक्षा राज्यो के नियन्त्रण से भुगतना आसान था, इस कारण सार्वजनिक उपयोग की सेवाओ के स्वामियो ने संघीय शासन का विरोध और राज्यो के अधिकारों का समर्थन किया। इस प्रकार विज्ञान और आविष्कारों के कारण परिवर्तित परिस्थितियों ने डिमोक्रेटो को हेमिल्टनी और रिपब्लिकनो को जेफर्सनी बना दिया।

परन्तु अपने हृदय मे प्राय. सब अमेरिकी अपना एक-एक पाव दोनो ओर रखना पसन्द करते हैं। इस संघीय शासन के विस्तार की आवश्यकता अनिच्छा से ही स्वीकार करते हैं। सिद्धान्त. हम यही पसन्द करेंगे कि संघीय शासन का काम राज्यो को, और यथा सम्भव स्थानीय शासनो को, सौंप दिया जाय। प्रत्युत इससे भी आगे बढकर यदि सम्भव हो तो तीनो का काम निजी उद्योगो के सपुर्द कर दिया जाय। सन् १९५२ मे जनरल आइजनहोवर और गवर्नर स्टीवन्सन के आन्दोलन भाषणों से बार-बार यही प्रतिध्वनि निकलती थी कि संघीय शासन का विस्तार घटा दिया जाय।

जहा तक शासन के विकेन्द्रीकरण और संकोच की दिशा मे प्रगति की आशा का प्रश्न है, अमेरिकी लोगो का इस सम्बन्ध मे कोई स्थिर सिद्धान्त नही है। साधारणतया उनकी कार्य-दिशा यह रहती है कि वे पहले तो "मितव्ययिता" की माग करते है, परन्तु पीछे अपने कारबार के लिए वे शासन की जिन सेवाओ को आवश्यक समझते है, उनका समर्थन करने लगते हैं। साथ ही विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त जड पकड चुका है और सम्भव है कि समय पाकर वह अधिक लोकप्रिय हो जाय। श्री फ्रेडरिक डिलानो, जो कि राष्ट्रपति रूजवेल्ट के आधीन "नेशनल-रिसोर्सज-बोर्ड (राष्ट्रीय साधनो के बोर्ड) के चेयरमैन थे, इस सिद्धान्त को वि-योजना कहा करते थे। इसका सर्वोत्तम उदाहरण शायद 'टेनेसी-वेली-अथारिटी" है।

'टेनेसी-वेली-अथारिटी' अर्थात् टेनेसी घाटी की प्रबन्ध कर्त्ता संस्था का आरम्भ से ही सबसे बड़ा गुण यह था कि उसने अपने जिम्मे केवल नदी के

नियन्त्रण, सस्ती बिजली पहुंचाने और कुछ ऐसे अनुसन्धान का काम लिया था जो और कोई उठाने को तैयार नही था। आगे चलकर वह ऐसे अवसरो को बतलाने और सूचनाओ को भी देने लगी जिनके सहारे टेनेसी घाटी के राज्य, काउण्टिया और नगर, और व्यापारी तथा किसान, स्वयंमेव अपनी योजनाएं बना सकते थे। 'वि-योजना' का अर्थ है कि संघीय निर्माण, नियन्त्रण, सहायता अथवा वैज्ञानिक अनुसन्धान का कार्य इस प्रकार किया जाय कि संघ के हाथो मे यथाशक्ति कम काम रहे। 'वि-योजना' का कोई भी कार्य भली-भाति करने का लक्ष्य यह होता है कि ऐसी परिस्थितिया उत्पन्न कर दी जाय कि उनमे केन्द्रीय अधिकारियो को स्थानीय तथा अन्य विस्तार की बातो की चिन्ता करने की आवश्यकता न रहे।

विकेन्द्रीकरण का यह सिद्धान्त एक अन्य विचार से भी प्रकट होता है, जो द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात् प्रचलित हो गया है। वह विचार यह है कि संघीय शासन का काम ऐसा "मौसम" उत्पन्न कर देता है कि उसमे रोजगार की तरक्की होती रहे। इसका अर्थ अपरिष्कृत अथवा कच्ची "इण्डिविजुअलिज्म" की ओर लौट जाना नही है। इसमे यह मान लिया गया है कि पहियो को चलता रखने के लिए सब उपाय करने के जिम्मेवारी शासन की ही है। परन्तु इसका यह मतलब भी नही कि शासन प्रत्येक पहिये के पास एक-एक सरकारी कर्मचारी तैनात कर दे कि जब वह धीमा पड़ने लगे तब वह उसे धक्का लगाकर तेज कर दे। अच्छा उपाय यह है कि ऐसे कुछ विशेषज्ञ रख लिए जायं जो व्यापारिक ऋतु के प्रतिकूल परिवर्तनो को पहचान सके और शासन की विविध शक्तियो को अर्थ-व्यवस्था सुधारने की दिशा मे प्रवृत्त कर दें।

द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात् राजनीतिक अर्थ-शास्त्र के विद्यार्थियो का काम प्राय. यही रह गया है कि वे शासन की शक्तियो को अमेरिकी पद्धति 'वि-योजना' मे लगाते रहे, उसमे आवश्यकतानुसार सुधार करते रहे और अमेरिकी जनता की सृजनात्मक योग्यता का अधिकाधिक उपयोग करते रहे। आशा है कि जब इस

प्रकार संघीय अधिकारों के प्रयोग की विधियाँ निकल आयेंगी और उनकी अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में परीक्षा हो चुकेगी तब अमेरिकी जनता एक बार फिर अपने शासन के सिद्धान्तों को अमेरिकी जीवन की वास्तविकताओं के अनुसार ढाल लेगी ।

अध्याय १३

परराष्ट्र सम्बन्ध

अमेरिकी विदेश-नीति की बहुत-सी विशेषताएं ऐतिहासिक अनुभवो का परिणाम हैं। ये अनुभव संसार के अन्य अधिकतर लोगो के ऐतिहासिक अनुभवो से कुछ भिन्न प्रकार के हैं।

प्रथम तथ्य यह है कि अमेरिकी इण्डियनो के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका के सब लोग बाहर से "आगत जातियो" के हैं। वे या उनके पूर्वज उत्तरी अमेरिकी मे गत चार शताब्दियो मे आये थे और वे इस बात को पूर्णतया विस्मृत नहीं कर सकते कि हम कौन है और यहा कहा से आये हैं। उनकी विशाल बहुसंख्या यूरोप से आयी थी और अन्तर्राष्ट्रीय तनाव के समय वे अब भी इस "पुराने देश" से प्रेम और घृणा करते हैं जिससे वे नाता तोड चुके है।

जिन शक्तियो ने यूरोपियनो को समुद्र पार करने के लिए विवश किया उनमे राजनीतिक अत्याचार से भय और घृणा का प्रबल मिश्रण, निराशापूर्ण दरिद्रता, और वे धार्मिक अत्याचार भी थे जिन्हे इन आगन्तुको को अपने गृह-देश मे सहना पडा था। उनके हृदय एक ओर स्वदेशानुराग और दूसरी ओर क्रोध के कारण विदीर्ण हो चुके थे। अमेरिकी क्रान्ति के आदि से लेकर सन् १८१२ के युद्ध के अन्त तक इंग्लैण्ड के साथ उन्हे जो दीर्घ और दारुण संघर्ष करने पडे थे उनकी स्मृतियो से उनकी क्रोध की भावना उद्दीप्त थी। इस प्रकार अमेरिका के इतिहास की सब परम्पराओ मे एक भावना यह भी रही है कि "हम यूरोप से निकलकर आये थे, अब हम वहा वापस फिर नहीं घसीटे जायंगे।"

परन्तु साथ ही एक अंग्रेजी कहावत के अनुसार "खून पानी से गाढ़ा होता है" अर्थात्, रक्त-सम्बन्ध या आपत्य-प्रेम अत्यन्त दृढ होता है । अमेरिकी लोगो के अधिकतर कानून, रीति-रिवाज, प्रथाएं, और आचार-विचार के आदर्श आदि पश्चिमी सभ्यता के ही अंग हैं । युरोप न केवल उस सभ्यता की मातृभूमि है, उसके अनुयायियो का लगभग आधा भाग बसता भी वही है । जब कभी युराप के विनाश का भय होता है तभी अमेरिकी लोग चौकन्ने हो जाते है कि यह खतरे का घण्टा हमारे लिए भी है । जब कभी युरोप मे संकट आता है तब अमेरिका मे भी इन परस्पर-विरोधी शक्तियो के कारण भारी राजनीतिक संघर्ष उत्पन्न हुए बिना नही रहता । बीसवी शताब्दी मे भी ऐसा होता रहा है । ये संघर्ष इस कारण और भी अधिक तीव्र हो जाते है और उलझ जाते है कि लगभग आधे अमेरिकी लोग जिन ब्रिटिश परम्पराओ के अनुगामी है उनका बहुधा अन्य युरोपियन परम्पराओ से, विशेषत. आयरिश और जर्मन परम्पराओ से, विरोध रहता है । पूर्वजो की ये भावनाएं अमेरिकी जीवन के 'गलते हुए घडो' मे पिघलकर अभी तक घुली नही ।

अमेरिकी प्रवृत्तियो पर दूसरा सर्वाधिक प्रबल और निश्चित प्रभाव उस भौगोलिक पृथकता का पडा है, जिसके कारण कुछ ही समय पूर्व तक अमेरिका की रक्षा होती रही थी । एक फ्रेंच राजदूत श्री ज्यूले जस्सरेन्द ने एक बार कहा था कि यह देश ऐसा भाग्यशाली है कि उत्तर और दक्षिण मे तो इसकी सीमाओं पर निर्बल पडोसी बसते हैं और पूर्व और पश्चिम मे मछलिया ।

परन्तु सन् १९४२ मे हैट्टरस अन्तरीप के सामने शान्त मछलियो के बीच मे जर्मन पनडुब्बियों को तैरता देखकर सब धक् से रह गये थे और बाद को यह जानकर और भी बड़ा धक्का लगा कि डिटरौयट और शिकागो नगरो पर उत्तर के साइबेरिया से आकर वायुयान बम बरसा सकते है । यह भी शताब्दियो से जमी हुई सुरक्षा की भावना और आकस्मिक आक्रमण की सम्भावना मे, एक संघर्ष ही है । युरोप की पीढियो पुरानी जिन आशंकाओ और विपत्तियो से, हम समझते थे, हम बच आये हैं, वे अकस्मात् ही आकर अमेरिकी दरवाजो को खटखटाने लगे हैं ।

न केवल अमेरिकी लोगो का पालन-पोषण युरोप की सामरिक अभ्यास करती हुई सेनाओ से निश्चिन्ततामय दूरी पर हुआ था, उन्होने गणतन्त्र के आरम्भिक वर्षो मे, युरोपियन शक्तियो के, विशेषतः फ्रान्स, ब्रिटेन और स्पेन के, निरन्तर पारस्परिक झगडो का लाभ भी उठाया था। उदाहरणार्थ, नेपोलियन ने ल्युजियाना प्रदेश को लेकर पहले संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिम में एक खतरनाक पडोसी वसाने का निश्चय कर लिया था। परन्तु पीछे उसे अमेरिकियो के हाथ बेच डाला; क्योंकि उसे अपनी सव शक्ति अंग्रेजो के साथ युद्ध करने मे लगानी थी। हमारे आरम्भिक इतिहास के काल मे चूंकि बालक और निर्बल अमेरिका युरोपियन युद्धो के कारण वाह्य हस्तक्षेपो से बचा रहा, इसलिए अमेरिकियो के मन मे यह विश्वास ही बैठ गया कि संयुक्त राज्य अमेरिका को युरोप के युद्धो से किसी प्रकार का भय नही, प्रत्युत कुछ लाभ ही है। बीसवी शताब्दी मे जब संयुक्त राज्य अमेरिका को दो विश्व युद्धो का सामना करना पड़ा तब उसे यह पुराना विश्वास छोड देना पड़ा।

तीन सौ वर्ष तक एक ऐसे विशाल महाद्वीप मे निवास का अमेरिकी विचार-धारा पर गहरा प्रभाव पड़ा है, जिसमे नयी वस्तियो के लिए खुला स्थान था। जब पहले-पहल युरोपियन यहाँ आकर उतरे तब उत्तरी अमेरिका प्राय. खाली ही था। क्रान्ति के पश्चात् निवासार्थियो का प्रवाह अप्पेलेशियन पर्वतो को पार करके पश्चिम की ओर को उमड पडा। उनके सामने दो हजार मील से अधिक विस्तृत देश खुला पड़ा था। सीमान्त के दीर्घ अनुभवो ने विचारो का और भौतिक प्रगति के सम्बन्ध मे आशामय भावनाओ का ऐसा अभ्यास करवा दिया है कि उसकी आज की शताब्दी की यथार्थताओ के साथ सदा संगति नही बैठ पाती।

एक अन्य प्रभाव समुद्र मार्ग से व्यापार का दीर्घ इतिहास रहा है। पूर्वी तट के साथ वसती हुई अंग्रेज वस्तियाँ तैयार माल के लिए तो गृह-देश पर निर्भर रहती थी, और बदले मे तम्बाकू, फर की खालें, लकड़ी और अन्न, समुद्र पार भेज कर बेच देती थी। विभिन्न वस्तियो के मध्य मे भी कई पीढियो तक, समुद्र के मार्ग ही यातायात के, यदि एक मात्र नहीं तो, मुख्य साधन थे। इसलिए संयुक्त राज्य

अमेरिका के पुरातनतम और समृद्धतम भाग का स्वभाव समुद्र मे घूमने-फिरने का था और उसने लोगो के राजनीतिक विचारो को भी प्रभावित किया। यहाँ तक कि मध्य पश्चिम की ओर को फेलकर वसे हुए अग्रणी लोग भी वडे तथा दुर्गम पर्वतो के विस्तार के कारण तटवर्ती नगरो के व्यापार का अन्य सरल मार्ग न पाकर अपना अन्न मिसीसिपी नदी द्वारा ले जाकर न्यू ऑर्लियन्स के मार्ग से युरोप के साथ व्यापार करने लगे।

उन्नीसवी शताव्दी मे भीतर देश के विकास के लिए पूँजी की वडे परिमाण मे आवश्यकता पडने लगी। इसका अधिकतर भाग ब्रिटिश और डच पूँजीपतियो ने दिया। अमेरिकी लोग विदेशी ऋणो के और अपने वैदेशिक व्यापार पर उन ऋणो के प्रभाव के अभ्यासी हो गये। विदेशियो को इस देश मे लगाई हुई पूंजी पर जो व्याज मिला था उससे ही वे अमेरिकी पशु और गेहू खरीद लेते थे। उन्हे अपने विल चुकाने के लिए अपना तेयार माल इस देश मे वडी मात्रा मे नही वेचना पडता था। इस कारण अमेरिकी व्यापारियो-व्यवसायियो को अपना माल विदेशी वाजारो मे वेचने का और विदेशी माल को तट-कर की दीवारें खड़ी करके अमेरिकी वाजार मे न आने देने का अभ्यास पड गया। विदेशों के साथ व्यापार का सन्तुलन नही होता था, इस कारण उन्हे कोई हानि होती दिखाई नही देती थी। यह अभ्यास कई पीढियो तक पडता चला जाने के कारण अमेरिकी लोग वीसवी शताव्दी की सर्वथा भिन्न परिस्थितियो को समझने की तैयारी भली-भाँति नही कर सके।

अन्त मे, अमेरिकी लोगो की प्रवृत्तियो को उनकी लोकतान्त्रिक प्रथाओ और जीवन शैलियो के प्रकाश मे समझ लेना चाहिए। अमेरिकी राजनीतिक व्यवहार मे अन्य दोष चाहे जितने हो, खुले और स्वतन्त्र विवाद का अभाव उन दोषो मे नही है।

अमेरिका की स्थापना होने के पश्चात् जिस किसी भी विदेशी को कभी यहा आने का अवसर हुआ होगा, उसने यहा परस्पर विरोधी मतो को वड़ी मात्रा मे सुना होगा। समाचारपत्र जो चाहते हैं सो लिखते हैं, और कांग्रेस के सदस्य उन नीतियो का नि संकोच प्रतिवाद कर देते है जिन्हे कि 'स्टेट डिपार्टमेण्ट' (परराष्ट्र-

विभाग) अति सावधानता-पूर्ण विचार के पश्चात् घोषित करता है। ऐसा लगता है कि मित्रो या शत्रुओ के साथ बहुत नाजुक बातचीत भी किसी बोदे तम्बू मे की जा रही हो और उसे भी हल्ला-गुल्ला मचाती हुई भीड ने घेर रक्खा हो । हो सकता है कि कोई व्यक्ति रेडियो पर भाषण करते हुए अपने श्रोताओ को समझाये तो यह कि देशभक्त नागरिको को अपने देश के भेद शत्रु पर प्रकट नही करने चाहिए और इस बात का उदाहरण देने के लिए कि देशभक्त लोग कैसे-कैसे भेद प्रकट कर देते हैं, स्वयं किसी बहुत खतरनाक सैनिक भेद को प्रकट कर बैठे ।

इस प्रकार की अनुशासनहीनता के कारण हो सकता है कि कुछ लोगो को लगता हो कि सोवियट यूनियन सरीखी अपने भेदो को गुप्त रखने वाली और एक-वर्गाधिकारी शक्ति के साथ मुकाबला पडने पर संयुक्त राज्य अमेरिका भारी घाटे में रहेगा । ऊटपटाग बातचीत करने का स्वभाव इस दशा मे इतनी गहरी जड पकड चुका है कि उसे नियन्त्रण में रखने के लिए कुछ नही किया जा सकता । कुछ अमेरिकी लोग यह सोच कर आत्मसन्तोष कर लेते हैं कि वाद-विवाद कितना ही उच्छृङ्खल क्यो न हो उसमे, सोवियटो (रूसियो) के ऊपर छाई हुई तीखी और कटु रहस्यमयता की अपेक्षा तो कुछ नैतिक लाभ है ही।

इससे अन्य स्वतन्त्र लोगो को यह विश्वास दिलवाने मे भी सहायता मिल सकती है कि अमेरिकी लोग स्थिर और भरोसे योग्य भले ही न हों, वे संसार की 'स्वतन्त्रता नष्ट करने के लिए कोई गुप्त षड्यन्त्र नही रच रहे हैं ।

सन् १८१२ के युद्ध के पश्चात् कोई सौ वर्ष तक अमेरिकी लोगो का ध्यान मुख्यतया अपने देश के आन्तरिक विकास पर केन्द्रित रहा । "स्टेट डिपार्टमेण्ट" (परराष्ट्र-विभाग) अति उपेक्षित था और जो परराष्ट्र नीति थोडी बहुत थी भी उस पर भी कांग्रेस छाई रहती थी । युरोपियन देशों की तुलना मे,जो कि सदा कूटनीति मे गहरे डूबे रहते थे, संयुक्त राज्य अमेरिका की कूटनीति विभाग अपने नौसिखियेपन और भद्देपन के लिए बदनाम था । केवल सम्पन्न लोग राजदूत बनने का व्यय उठा सकते थे, और उनमे से बहुतो मे कूटनीतिज्ञता की योग्यता इसके अतिरिक्त कुछ नही होती थी कि उन्होने चुनाव मे जीती हुई पार्टी को दान

उदारतापूर्वक दिया होता था। परन्तु संकटो के समय वेंजामिन फ्रैंकलिन के काल से लेकर आज तक संयुक्त राज्य अमेरिका को राजदूतो और परराष्ट्रमन्त्रियो का काम करने के लिए कुछ अतियोग्य व्यक्तियो की सेवा प्राप्त करने मे सफलता मिलती रहती है।

किसी भी देश के लोग अपने शासन के परराष्ट्र कार्यालय पर स्वभावत. सन्देह करते है, क्योकि उसमे अधिकतर आदमी ऐसे होते है जिनका विदेशियो के साथ मेल-जोल होता है। अमेरिका का स्टेट डिपार्टमेण्ट (परराष्ट्र विभाग) भी इसका अपवाद नही है। इसका काम ही ऐसा है कि लोकमत की दृष्टि मे उसे घाटा उठाना पडता है। यदि इसे किसी विदेशी शासन के साथ बातचीत करके, जो जनता चाहती है वह प्राप्त करने मे सफलता न हो, तो अपने देश के लोग उन राजनैतिक शक्तियो को तो समझते नही जो अपना असर डाल रही होती हैं, और यह सन्देह करने लगते है किसी ने संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ धोखा कर दिया—और इस सन्देह मात्र के आधार पर राजनीतिक आलोचनाएं होने लगती है। यदि स्टेट डिपार्टमेण्ट (परराष्ट्र विभाग) परिस्थिति-वश ऐसी नीति अपना ले जो सर्वसाधारण के शताब्दी भर पहले के विश्वासो के विरुद्ध हो तो ऐसे चिन्ताग्रस्त लोग है जो सदियो मे प्रचलित सिद्धान्त का उल्लंघन होते देख कर क्षुब्ध होकर चिन्ता प्रकट करने लगेंगे। इस प्रकार स्टेट डिपार्टमेण्ट (परराष्ट्र विभाग) अनायास ही सबकी आलोचना का शिकार बन जाता है।

पहले विदेशी शासनो के साथ सम्पर्क रखने का काम केवल स्टेट डिपार्टमेण्ट का समझा जाता था। सन् १९०० के पश्चात् वह पुराना नमूना बिल्कुल बदल गया और अब तो वह निरन्तर अधिकाधिक उलझन-भरा बनता जा रहा है। अब विदेशो के साथ व्यापार, मित्रता, आक्रान्ताओ के आक्रमणो का निरोध और राष्ट्रीय संस्थाओ की सदस्यता आदि अनेक कामो मे विदेशी शासनो के साथ सम्पर्क करना पडता है। आज संयुक्त राज्य अमेरिका से शासन की प्राय प्रत्येक एजन्सी का सम्बन्ध अमेरिकी जीवन के किसी ऐसे पहलू से है कि उसका प्रभाव देश के परराष्ट्र सम्बन्धो पर पड सकता है। बहुत-सी एजन्सिया तो सीधा विदेशियो या विदेशी शासनो के

साथ ही व्यवहार करती हैं। इसके अतिरिक्त, इस देश के स्थानीय स्वार्थ भी संसार व्यापी महत्त्व की विदेश-नीतियो का बहुधा विरोध करने लगते हैं। उदाहरणार्थ, 'विदेशो की सहायता नही, उनके साथ व्यापार' की नीति के समर्थक राष्ट्रपति ट्रूमन भी थे और आइजनहोवर भी हैं। दोनो ने इसे अमेरिका की सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण माना है। परन्तु व्यापारियो, किसानो और श्रमिको के बहुत से प्रतिनिधि इसकी निन्दा करते हैं। वे सब अपने-अपने रोजगार के संरक्षण के लिए किसी न किसी प्रकार का तट-कर लगवाना चाहते हैं परन्तु उससे विदेशो के साथ शर्तें तय करने की अमेरिका की शक्ति बहुत निर्बल हो सकती है।

स्टेट डिपार्टमेण्ट अर्थात् परराष्ट्र-विभाग अपनी परराष्ट्र-नीति को प्रभावशाली बनाने के लिए चाहे भी तो इन सब पृथक्-पृथक् और बहुधा परस्पर-विरोधी विभागो, एजन्सियो और कांग्रेस की कमिटियो को एक ही दिशा मे नही चला सकता। केवल राष्ट्रपति मे इतनी सामर्थ्य है कि वह सब शासिका एजन्सियो के सूत्र अपने हाथ मे रखकर कृषि-विभाग और प्रतिरक्षा-विभाग सरीखे विभिन्न संगठनो को एक ही लक्ष्य की पूर्ति मे प्रवृत्त कर सके। अब ह्वाइट हाउस (अमेरिकी शासन-कार्यालय) मे ऐसे कर्मचारी रखे भी जाने लगे हैं जो एकमात्र राष्ट्रपति के नियन्त्रण मे रहते हैं और जिनके द्वारा वह सब विभागो की जानकारी प्राप्त कर सकता है। परन्तु पहले की सब न्यूनताएं दूर होकर पूर्णता-प्राप्ति की आशा शीघ्र ही पूरी नही हो सकती।

स्थानीय स्वार्थ जब परराष्ट्र-नीति मे हस्तक्षेप करने लगें तब कांग्रेस को उनके प्रभाव से स्वतन्त्रता रखने की आशा भी राष्ट्रपति ही पूरी कर सकता है, क्योकि राष्ट्रपति जनता से सीधी बात कर सकता है। स्टेट डिपार्टमेण्ट भी यदि विदेशी समस्याओ का विस्तृत विवरण राष्ट्रपति को देता रहे तो उसकी बहुतेरी सहायता हो सकती है, परन्तु इसके लिए परराष्ट्र विभाग के पास अच्छे और चतुर सूचना अधिकारियो का रहना आवश्यक है। सभी बड़े राष्ट्रपति सदा जनता के समर्थन पर निर्भर करते आये हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे सफलता का थोडा-बहुत दारोमदार इस बात पर होता है कि कांग्रेस मे दोनो पार्टिया शासन का समर्थन कितना करती हैं । कांग्रेस मे कुछ सदस्य ऐसे रहते हैं जिन्हे अपने राजनीतिक लाभ के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मामलो मे शासन की स्थिति को खोखला करते हुए संकोच नही होता, परन्तु दोनो पार्टियो का बहुमत शत्रुओ के विरुद्ध राष्ट्र का ही पक्ष लेता है । पद ग्रहण करते समय सब सदस्य प्रतिज्ञा भी इस आशय की करते हैं । देश के सीमान्तर दोनो पार्टियो का परस्पर विरोध शान्त हो जाने की इच्छा नेता ही पूरी कर सकते हैं, परन्तु उनका प्रभाव और संगठन अभी इतने दृढ नही हुए हैं कि वे सदा सफल हो जायं । उन्नीसवी कांग्रेस से मार्शल योजना को स्वीकृत करवाने मे नेताओ को सफलता हुई थी, और उसका श्रेय सेनेटर वेण्डनबर्ग को प्रतिभा को दिया जाता है । द्विदलीय विदेश नीति की सफलता साधारणतया इस आशा पर निर्भर करती है कि कांग्रेस के नेता नि स्वार्थ रहेगे, सौभाग्यवश उनकी एकता भंग नही होगी, और राष्ट्रपति कुशलता से विरोधी नेताओ के साथ भी निभा लेंगे ।

'उडरो-विलसन-फाउन्डेशन' की एक समिति ने सिफारिश की है कि संविधान मे संशोधन करके कांग्रेस-सदस्यो का कार्यकाल चार वर्ष कर देना चाहिए । समिति ने बतलाया है कि जब कांग्रेस के साथ-साथ राष्ट्रपति का भी चुनाव नही होता तब मत कम पडते हैं और स्वस्थ परराष्ट्र-नीति के विरोधी विशिष्ट स्वार्थों को ऐसे कांग्रेस सदस्य चुनने मे सफलता हो जाती है, जो कि शायद राष्ट्रपति के निर्वाचन के समय मतदाताओ के सजग रहने के कारण न चुने जाते । इस समिति ने यह सिफारिश भी की है कि राष्ट्रपति कांग्रेस को अपनी परराष्ट्र-नीति के भावी लक्ष्यो से पूर्णतया परिचित रक्खा करे, जिससे संकीर्ण स्वार्थों की तथा अल्पकालीन स्वार्थसिद्धि की नीति और प्रस्ताव का विरोध अधिक अच्छी प्रकार हो सके ।

ऐसी किसी विदेश-नीति के तय होने में जिसका उग्र विरोध न हो, बडी कठिनाइया दो हैं । एक तो बार-बार दुविधाओ का खडा हो जाना और दूसरी

वर्तमान शताब्दी की परिवर्तित परिस्थितियो के कारण कुछेक अत्यन्त बद्धमूल और चिरसमाहृत अमेरिकी धारणाओ के विपरीत कार्य करने की आवश्यकता।

सोवियट यूनियन (रूस) सरीखे धूर्त और साधन-सम्पन्न शत्रु के साथ भुगतते समय दुविधाओ का खडा होना अवश्यम्भावी है। शत्रु विशेष प्रयत्न करके ऐसी परिस्थितिया उत्पन्न कर देता है जिनमे अमेरिका को दो मे से एक बुराई अपनानी पड जाय। उदाहरणार्थ, कोरिया का प्रकरण ऐसी दुविधाओ से भरा पडा था। जो भी मार्ग चुना जाता उसे बुरा कहकर उसकी निन्दा की जा सकती थी। सम्भव है कि वैसा करने की प्रेरणा विश्वासघातियो द्वारा दी जाती हो। ऐसी निन्दाओं को कोई भी परराष्ट्र-नीति अपनाने के मूल्य का भाग मानना चाहिए।

बीसवी शताब्दी मे संयुक्त राज्य अमेरिका के परराष्ट्र सम्बन्धो के कारण अपने ही देश मे बार-बार भारी राजनीतिक तनाव उत्पन्न हो गया, क्योकि उनसे पुरानी बद्धमूल नीतिया उलट गयी। उदाहरणार्थ, एक शताब्दी से संयुक्त राज्य अमेरिका की नीति उलझन-भरी मित्रताओं मे न पडने की थी। वाशिंगटन तक का श्रद्धास्पद नाम इस नीति के साथ जुडा हुआ था। अब उस पर नयी दृष्टि से विचार करना पड गया।

राष्ट्रपति वाशिंगटन ने सन् १७९३ मे, फ्रान्स की सहायता और मित्रता से देश की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के कुछ ही वर्ष पश्चात्, फ्रान्स और इंग्लैण्ड के झगडो मे तटस्थ रहने की नीति अपनायी थी। वाशिंगटन का लक्ष्य यह था कि शिशु संयुक्त राज्य को बलवान होने के लिए कुछ समय मिल जाय। उन्होने केवल फ्रान्स के प्रति कृतज्ञता का निर्वाह करने के लिए सयुक्त-राज्य को युरोप के दानवो की कुश्ती मे उलझाने से इनकार कर दिया। अपनी बिदाई के भाषण मे उन्होने अमेरिकी लोगो से कहा था कि "विदेशी लोगो के साथ व्यवहार करने का बडा नियम यह है कि उनके साथ व्यापारिक सम्बन्ध तो बढाओ, परन्तु राजनीतिक सम्बन्ध उनके साथ यथाशक्ति कम रक्खो।" वह ऐसे समय की प्रतीक्षा कर रहे थे "जब हम विदेशो के भड़काने पर भौतिक हानि की उपेक्षा कर उसका विरोध कर सकेंगे.. .. .., जब परस्पर लड़ते हुए देश यह समझ लेने के कारण कि हमसे

कुछ भी लाभ उठाना सम्भव नही है हमे उत्तेजित करने की जोखिम उठाने को सुगमता से तैयार नही होंगे; और जब हम शान्ति या युद्ध का चुनाव अपने न्याय संगत लाभ को देख कर कर सकेंगे।"

सन् १८२३ मे राष्ट्रपति मनरो ने कहा था—"युरोप के सम्बन्ध मे हमारी नीति उसकी किन्ही भी शक्तियो के आतरिक झगडो मे न पड़ने की है। भूमण्डल का वह भाग (युरोप) युद्धो के कारण बहुत समय से क्षुब्ध होता चला आ रहा है। परन्तु हम इस नीति को इन युद्धो के आरम्भ मे ही अपना चुके थे और वह अब तक यथापूर्व चली आ रही है।" यह पुनर्घोषणा यूनान के स्वातन्त्र्य-युद्ध के प्रसंग मे की गयी थी, क्योकि उसके साथ बहुत-से अमेरिकियो की गहरी सहानुभूति थी। युरोप मे चाहे जो कुछ होता रहे, अमेरिकी नीति उससे पृथक् रहने की थी, और अमेरिकी जनता का प्रबल बहुमत उनका समर्थक था।

सन् १९१४ से सन् १९१७ तक के संकटपूर्ण काल मे जब उडरो विलसन अमेरिकी तटस्थता को रक्षा करने का यत्न कर रहे थे तब भी अमेरिका की नीति यही थी। परन्तु तब अतलान्तक महासागर का पाट सिकुड चुका था, और अमेरिका की एक अन्य आधारभूत नीति पर आक्रमण होने लगा था। वह थी समुद्र मे यातायात की स्वतन्त्रता। घटना चक्र के वेग ने विलसन को अपना विचार बदलने के लिए विवश कर दिया और उन्होने सन् १९१७ मे जर्मनी के साथ युद्ध छेड़ने की माग की। इस उलझन मे से निकलने के पूर्व ही, उन्होंने सेनेट से यह असफल प्रार्थना की कि वह अमेरिका का "लीग ऑव् नेशन्स" अर्थात् राष्ट्र-संघ मे सम्मिलित होना स्वीकृत कर ले। आधे से अधिक अमेरिकी जनता तब संयुक्त राज्य को लीग मे उलझाने की पक्षपाती थी।

परन्तु पृथक्ता की परम्परा तब तक मृत नही हुई थी। द्वितीय विश्व-युद्ध के छिडने पर अमेरिकी जनता शीघ्र ही यह मानने को तैयार नही हुई कि नात्सी अपने युरोपियन पड़ोसियो के साथ-साथ समस्त स्वतन्त्र ससार पर भी आक्रमण कर रहे है। जबतक पर्ल हार्बर पर आक्रमण नही हो गया और जर्मनी तथा इटली ने संयुक्त राज्य अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा नही कर दी तबतक पृथकता की

भावना का ही जोर रहा । अब भी अमेरिका की राजनीति मे यह एक प्रबल अन्तर्धारा के रूप मे विद्यमान है ।

पृथकता की भावना के मूल मे युरोप के प्रति जनवर्ग की परम्परागत अरुचि है । परन्तु यह भावना संसार के अन्य भागो पर, यह ठीक उसी प्रकार लागू नही होती । कहावत है कि "अमेरिकी पश्चिम की ओर मुंह करके जन्म लेते हैं ।" पृथकता का अर्थ पश्चिम की ओर—चीन तक—स्थित देशो से पृथक् रहना कभी नही हुआ ।

परराष्ट्र-नीति मे दूसरा महत्वपूर्ण पलटा, जिसके कारण राजनीतिक विवाद उठ खडा हुआ है, ऊंचे तट-करो को नीचा कर देना है । सन् १९३३ में जब डिमोक्रेट पदारूढ हुए तब उन्होने तट-कर घटाने पर जोर दिया था । यह उनकी पार्टी की परम्परा है । देशी उद्योगो का संरक्षण करने के लिए भी तट-कर लगाने का वे सदा विरोध करते रहे हैं । परन्तु इस सम्बन्ध मे पार्टियो की स्थिति तब कुछ अस्पष्ट थी ; क्योकि दक्षिण मे भी उद्योगो की जड जम गयी थी और दक्षिणी डिमोक्रेट अपने उद्योगो के संरक्षण के पक्षपाती बन गये थे । इतिहास का प्रवाह भी ऊंचे तट-करो के विरुद्ध था ।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार मे अमेरिका ऋणी देश से महाजन देश बन गया था । उसके पश्चात् जो विदेशी लोग अमेरिकी गेहूँ या मोटरे खरीदना चाहते थे उनके लिए अपना कुछ माल अमेरिकियो के हाथ बेचकर जरूरी डालर कमाना आवश्यक हो गया था । और इसके अतिरिक्त, यदि उन्हे अमेरिका से लिये हुये ऋण पर ब्याज देना होता था तो उन्हे और भी माल बेचना पडता और, और भी डालर कमाने पडते थे । संक्षेप में, ऋणो की वसूली और अमेरिकी माल की विदेशो मे बिक्री के लिए, अमेरिकियो के लिए आवश्यक हो गया कि वे निर्यात की अपेक्षा आयात अधिक करें । उधार पर माल बेच देने से बात टल सकती थी, परन्तु उत्तमर्ण (महाजन) देश के लिए तो अतिरिक्त आयात करना आवश्यक हो ही जाता है; वरना संकट खडा हो सकता है । अतः उसे अपने तट-कर घटाने पड़ते है, नही तो कठिनाइया बढ जाती है ।

परन्तु अमेरिकी उद्योगो को ऊँचे तट-करो की आदत पडी हुई थी, और देश की राजनीति पर उनका प्रभाव भी था। प्रथम विश्व-युद्ध के कोई बारह वर्ष के पश्चात् तट-कर किसी भी गत काल की अपेक्षा ऊँचे थे; फलत. संकट खड़ा हो गया। युद्ध-ऋण डूब गये और साथ ही पश्चिमी अर्थ-व्यवस्था भी डूब गयी। जो भारी मन्दी आयी उसके लिए अमेरिकी तट-कर भी उत्तरदायी थे।

द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात् युद्ध-ऋण की समस्या उतनी गम्भीर नही थी, क्योकि उधार-पटटे की व्यवस्था द्वारा अमेरिकी शस्त्रास्त्र मित्र-राष्ट्रो को पूरा मूल्य लिये विना दे दिये गये थे। इसके पश्चात् वह समय आया जब अमेरिकी धन की वड़ी-वड़ी राशिया सहायता और पुर्ननिर्माण के लिए विदेशो को दी गयी। जवतक अमेरिका कई अरव डालर प्रति वर्ष देता रहेगा तवतक व्यापार के सन्तुलन का प्रश्न खड़ा नही होगा। परन्तु सहायता दिये विना भी काम चलता रखने के लिए अमेरिका को अपने द्वार अधिकाधिक विदेशी व्यापार के लिए भी खोलने ही पड़ेंगे। विदेशो को सहायता नही देनी चाहिये, उनके साथ व्यापार करना चाहिये, की नीति अपनाने का कारण यही है। संसार की परिस्थितियो ने ही इसे हम पर लाद दिया है, परन्तु इससे वहुसंख्यक अमेरिकियो के वंश परम्परागत विश्वासो को ठेस लगती है और इस कारण भावनाएं भड़क जाने पर विदेश-नीति का निर्धारण सरल काम नही रह जाता।

नीति मे इन काया-पलटो के कारण तो बहुत-से अमेरिकी लोग क्षुब्ध हो उठे हैं, परन्तु अन्य अनेक अमेरिकी परम्पराओ मे परिवर्तन या उनका नया विकास अपेक्षाकृत कम क्षोभ के साथ हो गया है।

इनमे से एक मनरो-सिद्धान्त है। इसका जन्म पहले-पहल ब्रिटिश सरकार के इस सुझाव से हुआ था कि दोनो देश मिलकर युरोपियन महाद्वीप की शक्तियो को नये और निर्वल दक्षिण-अमेरिकी गणतन्त्रो पर आक्रमण करने से रोके। ब्रिटेन और संयुक्त-राज्य अमेरिका, दोनो ही, फ्रान्स या स्पेन या रूस को पश्चिमी गोलार्ध मे नये साम्राज्य खडे करने देना नही चाहते थे। राष्ट्रपति मनरो ने अंग्रजो के साथ उलझन मे न पड़ने का निर्णय किया; क्योकि भविष्य मे उनकी कुछ नीतियो का

ऐसा होना सम्भव था जो संयुक्त राज्य अमेरिका को पसन्द न आती। इसलिए उसने २ दिसम्बर सन् १८२३ को घोषणा कर दी कि संयुक्त राज्य अमेरिका नये महाद्वीप मे युरोपियन साम्राज्यो के विस्तार को "अपनी शान्ति और सुरक्षा के लिए भय का कारण" मानेगा। उस समय समुद्रो पर ब्रिटिश जल-सेना का नियन्त्रण था और उसे ब्रिटेन के हित मे मनरो-सिद्धान्त का समर्थन करना पड़ गया।

उन्नीसवी शताब्दी के शेष भाग मे स्थिति यही रही। सन् १९०० के पश्चात् लेटिन-अमेरिकी देशो मे अनचुके ऋणो का एकत्र होते चले जाना मनरो-सिद्धान्त के लिए गम्भीर और क्रमशः बढ़ते हुए भय का कारण बन गया। यह भय होने लगा कि कही युरोपियन उत्तमर्ण बहुत समय से देय हो चुके अपने ऋणो की वसूली के लिए अपनी सशस्त्र शक्तियो का प्रयोग करते हुए केरिबियन समुद्र के तट तक आकर यही न बस जायं। इसलिए राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट ने मनरो-सिद्धान्त के "रूजवेल्ट परिणाम" की घोषणा कर दी। युरोपियन उत्तमर्णों को चेतावनी दे दी गयी कि वे अमेरिका महाद्वीप से परे रहे, और संयुक्त राज्य अमेरिका ने 'रिसीवर' बनकर, जबतक दिवालिया देश अपने पांव पर खडे न हो जायं तब-तक, तट-कर एकत्र करने, व्यवस्था रखने और भ्रष्टाचार को रोकने की जिम्मेवारी अपने सिर ले ली।

लेटिन-अमेरिकी लोगो को एक के बाद दूसरे देश मे अमेरिकी जल-सैनिको का उतरना बहुत बुरा लगा। इसलिए राष्ट्रपति हर्बर्ट हूवर ने "रूजवेल्ट-परिणाम" का प्रत्याख्यान कर दिया और लेटिन-अमेरिका के साथ नया तथा मित्रता पूर्ण व्यवहार आरम्भ किया। सन् १९२८ मे निर्वाचित हो जाने पर सन् १९२९ मे अपना पद सम्भालने तक उन्होने लेटिन-अमेरिको की मित्रता-पूर्ण यात्रा की। "अच्छे पडोसी की नीति" का पालन राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट और ट्रूमन के समय भी किया जाता रहा। संयुक्त राज्य अमेरिका ने जिम्मा लिया है कि वह अन्य अमेरिकी राष्ट्रो के अन्दरूनी मामलो में दखल नही देगा। "अमेरिकी राष्ट्रो के सगठन" मे गोलार्द्ध की रक्षा करना सब सदस्यो का कर्त्तव्य मान लिया गया है।

मनरो-सिद्धान्त के इस रूपान्तर से स्वतन्त्र संसार की रक्षा सम्बन्धी सामान्य दुविधा कुछ स्पष्ट हो जाती है। कोई भी स्वतन्त्र राष्ट्र अपने यहा आन्तरिक व्यवस्था की पुन स्थापना करने के लिए अपने तट की ओर आते हुए संयुक्त राज्य अमेरिका के जल सैनिको का स्वागत नही करेगा। स्वतन्त्र राष्ट्र स्वतन्त्रता की इच्छा, अपनी आन्तरिक समस्याओ को अपने ही ढंग से हल करने के लिए करते हैं। साथ ही, स्वतन्त्र ससार के सभी भागो मे उदार विचार के लोगो को यह देखकर बुरा लगता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण अमेरिका मे तथा अन्यत्र भी, तानाशाही शासन वाले देशो की सहायता करता है। कम्यूनिस्ट पार्टी भी अपने प्रचार आन्दोलन मे इसका लाभ उठा लेती है।

अमेरिका एक शताब्दी से अधिक समय से, कुछ अपवादो को छोड कर, इस दुविधा को स्थिर रखता चला आ रहा है, और इसका उत्तर वह यह देता है कि किसी विदेशी आक्रान्ता द्वारा किसी छोटे देश को जीत लिये जाने की अपेक्षा उसी देश मे जन्मा हुआ तानाशाह संसार के लिए कम खतरनाक होता है। इसलिए यदि कोई देश अभी लोकतन्त्रीय शासन न अपना सका हो तो भी संयुक्त राज्य अमेरिका उसकी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए उसे सहायता देना अधिक अच्छा समझता है।

"समुद्रो मे यातायात की स्वतन्त्रता" का परम्परागत अमेरिकी सिद्धान्त ब्रिटिश लोगो से उत्तराधिकार मे मिला हुआ है। ब्रिटिश लोग रानी एलिजाबेथ प्रथम के समय से ही संसार भर के समुद्रो मे घूमने और व्यापार करने का आग्रह करते रहे हैं। परन्तु यह सिद्धान्त, एकवर्गाधिकारी आक्रान्ताओ से स्वतन्त्र संसार की सहयोग पूर्वक रक्षा करने के लिए उपयुक्त सिद्ध नही हुआ। प्रथम विश्व-युद्ध के समय व्यापार करने के अधिकार की, विशेषत युद्ध-काल मे तटस्थ-व्यापार के अधिकार की, आधुनिक अवस्थाओ के साथ टक्कर हो गयी थी। राष्ट्रपति विलसन ने क्रुद्ध होकर अंग्रेजो और जर्मनो, दोनो के साथ बहुतेरी बहस की थी, परन्तु न तो ब्रिटेन ही अमेरिकी जहाजो को शत्रु के साथ व्यापार करने की इजाजत दे सका

ओर न जर्मनी, क्योंकि दोनो को युद्ध हार जाने का भय था। अन्त मे संयुक्त राज्य अमेरिका ने युद्ध मे पड़कर इस समस्या को टाल दिया।

द्वितीय विश्व-युद्ध मे कांग्रेस ने "न्यूट्रैलिटी ऐक्ट" अर्थात् तटस्थता का कानून बनाकर अमेरिका के तटस्थता के अधिकारो का ही त्याग कर दिया। अमेरिकियो का युद्ध-क्षेत्रो मे जाना वर्जित कर दिया गया, और ज्यो-ज्यो अमेरिका मित्र-राष्ट्रो का पक्ष अधिकाधिक लेता गया त्यो-त्यो वह स्थिति भी समाप्त होती गयी।

अब अन्त मे सन् १९४५ से आरम्भ हुए आतंक-युद्ध मे, सोवियट देशो के साथ व्यापार करने पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग करने मे संयुक्त राज्य अमेरिका संसार का नेतृत्व कर रहा है। परिस्थितियो ने समस्याओ को परिवर्तित कर दिया है। अब समुद्री यातायात की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त मे राजनीतिक उत्तेजना तनिक भी नही रही। अब युक्तियां इस सिद्धान्त के समर्थन मे नही, अपितु यह निर्णय करने के लिए दी जाती है कि कितना नियन्त्रण करने से परिणाम उत्कृष्ट निकलेंगे।

चीन का द्वार खुला रखने का सिद्धान्त भी समुद्री यातायात की स्वतन्त्रता से सम्बद्ध था। संयुक्त राज्य अमेरिका चीन के साथ व्यापार करने मे अन्य सब देशो के समान सुविधाएं पाने का आग्रह किया करता था। चीन मे कम्यूनिस्ट क्रान्ति के पश्चात् वह समस्या ही अब नही रही।

अन्त मे, यह भी मानना पड़ेगा कि संयुक्त राज्य अमेरिका की परराष्ट्र नीति साम्राज्यवाद की दशा मे से गुजर चुकी है। परन्तु सन् १८९८ के स्पेनिश युद्ध के पश्चात् उसका अन्त होने लगा था। उन्नीसवी शताब्दी मे संयुक्त राज्य अमेरिका पश्चिम मे प्रशान्त सागर की ओर और दक्षिण मे रायो ग्रेण्डी की ओर को फैल रहा था। इस विस्तार का सबसे हिंसामय प्रकरण सन् १८४६-४८ का मेक्सिकन युद्ध था। बीच-बीच मे क्यूबा और अन्य केरिबियन प्रदेशो पर अधिकार कर लेने का आन्दोलन भी उठता था, परन्तु उसका फल साम्राज्य विस्तार के किसी बड़े प्रयत्न के रूप मे प्रकट नही हुआ।

सन् १८९८ मे क्यूबा के निवासी स्पेनिश राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे। स्पेनिश युद्ध, उनके साथ अमेरिकी जनता से महानुभूति के कारण और इस भय के कारण छिड़ा था कि जर्मन लोग स्पेन की ओर बढते हुए कही क्यूबा पर भी अधिकार न कर ले। इसी समय हवाना बन्दरगाह मे अमेरिका का 'मेन' युद्ध पोत बारूद से उडा दिया गया। बस, सनसनी फैलाने वाले समाचार पत्रो ने संयुक्त राज्य अमेरिका के सुलगते हुए क्रोध को भभका कर ज्वाला मे परिणत कर दिया। युद्ध के पश्चात् अमेरिकियों से अधिक आग्रह किसी को नही हुआ, क्योकि जब उनको होश आया तब उन्होने देखा कि क्यूबा, प्यूअटो रिको, और फिलिपाइन-द्वीप-समूह उनके अधिकार मे आ चुके थे।

इसी समय रुडियार्ड किपलिंग ने अमेरिकी लोगो को सम्बोधन करके लिखी हुई एक कविता मे उनसे "गोरे लोगो का बोझ उठा लेने" का अर्थात् संसार की रंगीन जातियो पर शासन करने का गोरे लोगो का कर्तव्य पालन करने का अनुरोध किया था। जब देश यह निर्णय कर रहा था कि इन विजित प्रदेशो का क्या किया जाय, तभी राष्ट्र भर मे साम्राज्यवाद पर विवाद चल रहा था। फल यह हुआ कि हवा का रुख साम्राज्यवाद के विरुद्ध हो गया। अब अमेरिकियो का प्रबल बहुमत स्पष्ट इस विचार का पक्षपाती बन चुका है कि हम भिन्न भाषा बोलने वाले और भिन्न रीति रिवाजो पर चलने वाले लोगों के किसी भी दूरस्थ देश पर शासन करना नही चाहते। अब किसी भी विदेश में "तारो और पट्टियो" को अर्थात् अमेरिकी झण्डे को, नीचा न होने देने के पुराने नारो मे कुछ भी राजनीतिक उत्साह नही रह गया है। जब अमेरिकियो को जर्मनी या जापान जैसे किसी विदेश पर कभी शासन करना भी पड जाता है, तब उनकी सर्वोपरि इच्छा घर लौट जाने की ही रहती है।

विदेशी मामलो मे राजनीतिक पार्टियो का रुख ठीक वही नहीं रहता जो कि स्वदेशी मामलो मे रहता है। विदेशी शत्रुओ या मित्रो के साथ व्यवहार के समय दोनो पार्टियो की भावना साधारणतया परस्पर सहयोग की और देश भक्ति की रहती है। निहायत गैर जिम्मेवार लोकप्रिय नेता ही इस भावना से अप्रभावित रह

सकते है । दूसरी ओर, सार्वजनिक व्यय के सम्बन्ध मे नेकनीयत मतभेदो के कारण विदेशो को सहायता देने सरीखे प्रश्नो पर अनिवार्य रूप से विवाद खड़ा हो जाता है । इसके अतिरिक्त कांग्रेस सदस्यो को स्थानीय आर्थिक स्वार्थों का भी उचित ध्यान रखना ही पड़ता है, वरना उसके स्थान पर अन्य कोई ऐसा व्यक्ति चुना जा सकता है जो इन स्वार्थों का ध्यान रखने वाला हो । और अन्त मे, संसार की नयी परिस्थितियो के कारण परम्परागत नीतियो में जो काया पलट हो गये हैं, उनका भी राजनीतिक प्रभाव पड़ता ही है । संसार की अवस्था अमेरिकी लोगो को नये मार्ग पर चलने के लिए विवश कर रही है और वे लम्बे चौडे राजनीतिक विवादो पश्चात् ही यह निश्चय कर सकेंगे कि वे क्या कर रहे है और उन्हे क्या करना चाहिए ।

अध्याय १४

राजनीति और लोकतन्त्र

संयुक्त राज्य अमेरिका इस भूमण्डल का एक अत्यन्त मानुषिक राष्ट्र है और सोवियट यूनियन सभी तुलनात्मक दृष्टियो से अत्यन्त अमानुषिक राष्ट्र है। इन दोनो महान् प्रतिस्पर्धियो मे दोष रहित तो कोई भी नही, परन्तु दोनो के दोषो मे अन्तर बहुत बडा है। इस अन्तर का वर्णन आर्थिक संगठन की भाषा, धर्म की भाषा, अथवा अल्प-संख्यको के प्रति शासको के रुख की भाषा मे भी किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियट यूनियन मे अन्तर को स्पष्ट करने का एक उपाय दोनो की राजनीति मे अन्तर दिखला देना भी है।

सोवियट यूनियन की सरकार अपनी जनता के विषय मे जो कहती है उसे हम यदि सत्य मान लें तो उस देश के लोगो की रुचि राजनीतिक विचारो और कार्यों मे अत्यन्त अधिक है। कहा जाता है कि वहाँ कोई चालीस लाख से दो करोड तक "राजनीतिक" बन्दी बेगार के कैम्पो मे बन्द पडे हैं। इन अभागो पर राजनीतिक कार्य करने या राजनीतिक प्रश्नो पर विचार करने का सच्चा या झूठा अभियोग लगाया गया था। इन कैम्पो मे मामूली चोरो और खूनियो के साथ पक्षपात करके उन्हे राजनीतिक बन्दियो के ऊपर अधिकारी बना दिया जाता है। सोवियट-शासन-पद्धति की अमानुषिकता का सब से बडा उदाहरण यह है कि वहा अन्य समस्त अपराधो की अपेक्षा राजनीतिक अपराधो के लिये कठोरतम दण्ड दिया जाता है।

परन्तु संयुक्त राज्य मे और अन्य लोकतन्त्रीय देशो मे भी, राजनीति मात्र को अपराध नही समझा जाता। हाँ, कुछ प्रकार की राजनीतिक अपराध हो भी सकती

है, क्योकि आखिर राजनीति भी मनुष्यो का ही काम है; इसका सम्बन्ध व्यवहार-नीति से लेकर भ्रष्टाचार तक सभी व्यवहारो से है।

संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियट यूनियन मे एक और अन्तर नागरिक अधिकारो के प्रति उनके रुख में है। दोनों देशो मे विभिन्न स्वभाओ और रीति-रिवाजो के और विभिन्न भाषाओ के बोलने वाले लोग बड़ी संख्या मे बसते हैं, जब ये विभिन्न प्रकार के लोग एक ही केन्द्रीय शासन की, और एक ही आर्थिक व्यवस्था की अधीनता में लाये जाते हैं तब अनिवार्य-रूपेण बहुत-से संघर्ष उत्पन्न हो जाते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियट यूनियन इन अनिवार्य संघर्षों का सामना सर्वथा विभिन्न उपायो से करते हैं।

सोवियट यूनियन मे जो भी जाति या कबीला अपने विशिष्ट स्वभावो या रीति-रिवाजो को सुरक्षित रखता है—जो 'सोवियट मानव' के नीरङ्ग ढेर मे घुल-मिल नही जाता या समा नही पाता—उसे निकम्मा बतलाकर अलग फेक दिया जाता और उसे समाप्त कर डालने के लिए उस पर नजर रक्खी जाती है। इन अभागे शिकारो को ढोकर दूर ले जाने के लिए केन्द्रीय सरकार अपनी रेलगाडिया भेज देती है। इनमे से कुछ तो गुलामो के कैम्प मे भर जाते हैं, कुछ को उत्तरी ध्रुवो के समुद्री तटों पर बसा दिया जाता है, और कुछ रूसी जनता मे इधर-उधर बिखर कर खो जाते हैं। अपने धर्म और अपनी संस्कृति का पालन करने वाले पृथक् लोगो के रूप मे इस भूतल पर से इनका अस्तित्व मिटा डाला जाता है।

जिस प्रकार के "स्वाभाविक निर्वाचन" से, सोवियट यूनियन की कृपा-भाजन जातियां अपने से कम भाग्यशाली जातियो का उन्मूलन करके स्वयं भविष्य के लिए देश की आबादी बनाने के लिए जीवित बची रह जाती हैं, वह पशु जातियो के पारस्परिक संघर्ष से बहुत मिलता-जुलता है। उस संघर्ष मे निर्बल जीव नष्ट हो जाते और बलशाली बचे रह जाते हैं। पुलीस राज मे जो समर्थतम बचे रह जाते हैं, वे सभ्यतम नही अपितु निर्दयतम होते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे भी बहुत सी जातियां, धर्म, और संस्कृतियां हैं। उनमे से कुछ एक दूसरे से इतनी भिन्न हैं कि उनके लोग, कल्पना चक्षुओ से दृश्य

भविष्य मे कभी भी साधारण जनता मे घुल मिल नही सकेंगे । यहाँ भी बाजारो मे संघर्ष होते हैं । जातियो, धर्मों और संस्कृतियो मे भी संघर्ष होते रहते हैं और कुछ तो बहुत गहरे और कटु भी होते है । उस समय की कोई भी कल्पना नही कर सकता जब गोरे और नीग्रो, यहूदी और गैर-यहूदी और कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट, सबके सब पारस्परिक सन्देह और विरोध को भूल जायंगे और किसी भी प्रकार की विषमता का अनुभव किये बिना एक साथ खाने-खेलने लगेंगे । इस समय तो बहुत से लोग, भिन्न जाति और धर्म के अपने पडौसियों से घृणा करते और डरते हैं । कभी-कभी वे अपने साथी नागरिको को हानि पहुंचाने का यत्न भी करते है । सम्भव है कि वे इन घृणित अल्पसंख्यको के जीवन मे उन्नति के अवसरो को सीमित करने मे भी सफल हो जायं । यह सब मानव स्वभाव सुलभ है ।

परन्तु विभिन्न जातियो और धर्मो के लोगो मे मित्रता और सद्भावना का होना भी मानव-स्वभाव सुलभ है और लोकतान्त्रिक समाज मे अन्त को जीत इन्ही भावा की होती है । यह 'अन्त' बहुत विलम्बकारी होता है, और मधुर सम्बन्धो की दिशा मे प्रगति भी मन्द होती है, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका मे हमे मधुरता और सद्भावना की ओर प्रगति के चिह्न अनेक दिखलाई पडते हैं । इस प्रगति को देखकर हमे विश्वास हो जाता है कि अमेरिकी जीवन-पद्धति की संस्थाओ और रीति-रिवाजो मे कुछ न कुछ सत्य अवश्य है ।

अमेरिकी जनता अपने शासन को, जातियो की यह कठिन समस्या जाति-विनाश के द्वारा—नापसन्द वर्ग के सब लोगो को मार डालने के द्वारा—हल करने का अधिकार नही देती । इसके विपरीत, वह सब नागरिको के अधिकारो को सुरक्षित और विस्तृत करने के लिए, शिक्षण, कानून और सार्वजनिक वाद-विवाद के उपायो मे अधिकतम व्यावहारिक संगति लगाने का प्रयत्न करती रहती है ।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे अश्वेत जातियो के साथ जो बुरा व्हहार किया जाता है उसका प्रचार कम्यूनिस्ट प्रचारक बहुत बढ़ा-चढ़ाकर करते हैं—

विशेषतः संसार की अश्वेत जातियो में अमेरिकी लोग इस प्रकार के प्रचार से बचकर भाग नही सकते । हमे इसका सामना करना, और सुधार के प्रमाण देकर इसका उत्तर देना पडेगा । अमेरिकी लोग, अल्पसंख्यको को नष्ट कर देने का और अपने अपराध को गोपनीयता की दीवार के पीछे छिपा देने का सोवियट उपाय नही अपनायेंगे । अमेरिकी मार्ग जनता के अधिकारो की समस्या लोकतान्त्रिक उपायो से हल कर लेने का है । लोकतान्त्रिक उपाय की गति मन्द तो है, परन्तु असन्दिग्ध है ।

संयुक्त राज्य अमेरिका के सब दोषो के बावजूद उसमे कुछ गुण ऐसे हैं जो विदेशियो को अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं । इसका प्रमाण यह है कि जो प्रवासी इस देश के अशोभनतम पहलू को देख लेते हैं उनमे से भी अधिकतर यहां रुककर संयुक्त राज्य को अपना घर बना लेने का निश्चय कर लेते हैं । अमेरिकी जनता की स्वतन्त्रता कई दृष्टियो से अपूर्ण तो है, परन्तु फिर भी जीवन की अनेक आवश्यकताएं इससे पूर्ण हो रही हैं और यह निरन्तर उन्नति के स्वस्थ चिह्न प्रकट कर रही है । अमेरिकी स्वतन्त्रता की इस जीवनी शक्ति का सम्बन्ध इसके उद्भव की विशिष्ट परिस्थितियो से है ।

प्रथम बात यह है कि जो लोग अमेरिका आये थे उनमे से अधिकतर ऐसी परिस्थिति से बचकर यहां आये थे जिसमे वे अपने आप को बन्दी बना हुआ अनुभव करते थे । वे एक ऐसे नये देश मे आये थे जहां का जीवन कठोर और भयानक था । बहुत से तो भूख-प्यास और ऋतु की कठोरता से मर गये और बहुत से इण्डियनो के कुल्हाडे का शिकार हो गये । फिर भी उन्होने अनुभव किया कि हम स्वतन्त्र हो गये है, हमारे बन्धन टूट गये हैं ।

द्वितीय बात यह कि लगभग तीन शताब्दियो तक अमेरिकियो को ऐसी भौगोलिक सुरक्षा और सुअवसर मिलते रहे कि उनके कारण उनकी स्वतन्त्रता स्वयं-सिद्ध सी हो गयी। उनकी पीठ पर अतलान्तक महासागर था। देश की प्रगति की सब अवस्थाओ मे हम ऐसी सेनाएं संगठित कर सके, जो ब्रिटेन य

अन्य किसी शक्ति द्वारा समुद्र के तीन सहस्र मील पार भेजी हुई फौज का खासा मुकाबला करने में सफल रही। यह आरम्भिक लाभ उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे बालक संयुक्त राज्य अमेरिका के इस सौभाग्य से और समृद्ध हो गया कि युरोपियन शक्तियाँ परस्पर ही तीखे झगडो मे उलझ गयी और इस कारण उनमे से कोई भी अपने बल को अमेरिकी तट के विरुद्ध केन्द्रित नही कर सकी।

स्वतन्त्रता का एक अन्य भौगोलिक तत्त्व पश्चिम की ओर का रिक्त-प्रदेश था। इस कहावत मे बहुत सचाई है कि कही ओर जा सकने की सामर्थ्य ही स्वतन्त्रता है। सबको इस बात की जानकारी हो जाना अत्याचार के विरुद्ध एक बलवान् गारण्टी है कि शिकार जब चाहे तब अपना डेरा डण्डा उठाकर गायब हो सकता है। भाग सकने की यह स्वतन्त्रता अब भी अमेरिकी जीवन की एक उल्लेखनीय विशेषता है। खुले सीमान्त के दिनो मे, अधिकारियों और व्यक्तियो के अधिकारो के प्रति अमेरिकी रुख की यह एक प्रमुख विशेषता थी।

अन्तिम बात यह कि अमेरिकी लोगो को इंगलैण्ड के कानून और संस्थाएँ उत्तराधिकार मे मिले थे। इन कानूनो और संस्थाओ की रचना राजा और प्रजा मे दीर्घ संघर्ष के पश्चात् हुई थी। इनका प्रयोजन शासन मे नागरिक की रक्षा करना था। अमेरिकी सविधान के पाचवें संशोधन मे कहा गया है कि बिना उचित कानूनी काररवाई के, शासन, किसी भी नागरिक को जीवन, सम्पत्ति और स्वतन्त्रता से वंचित नही कर सकेगा, और न उसकी सम्पत्ति को बिना उचित मुआवजा दिये सार्वजनिक उपयोग के लिए ले सकेगा।

अमेरिका को जो ये सस्थाएँ उत्तराधिकार मे मिली वे मध्य-वर्ग की थी, और युरोप की दूरी तथा खुले सीमान्त के कारण भी अमेरिकियो को मध्यवर्गीय विचार-शैली की ओर बढने मे सहायता मिली। किसी भी अमेरिकी श्रमिक की प्रवृत्ति अपने आपको उन मेहनतकश मजदूरो के मजमे का मेम्बर समझने की कम होती है जो सरमायेदारो का सरमाया जब्त कराने की जद्दो-जहद कर रहे होते हैं, और अपना मकान या व्यापारिक सम्पत्ति मे अपना भाग खरीद लेने की अधिक

होती है। इतने अधिक श्रमिक पश्चिम की ओर जाकर और भूमि लेकर खेती मे लग चुके अथवा अपना व्यापार आरम्भ कर चुके है कि वर्गों के परिवर्तित हुए बिना उनके वर्ग-युद्ध मे उलझ जाने की कल्पना कोई सुगमता से करता ही नही।

इस प्रकार अमेरिकी जनता के कानून और संस्थाएँ, जनता की स्वतन्त्रता को रक्षा के लिए राजनीतिक साधनो के रूप मे प्रयुक्त होने के लिए, भली भाति अपनायी जा चुकी हैं। विस्तृत समुद्र की आप से आप मिली हुई रक्षा के सिकुड जाने और सीमान्त की ओर स्वतन्त्रता से बढ़ने के अवसर क्रमशः समाप्त हो जाने पर भी, शासन के साधनो को, जनता की आवश्यकतानुसार नये प्रकार का संरक्षण देने के लिए, विस्तृत और परिवर्तित किया जा सकता है।

अमेरिकी इतिहास की आरम्भिक अवस्था मे लोकतन्त्र की सृष्टि सीमान्त ने स्वयमेव कर दी थी, क्योकि जिस किसी को भी अपने साथ दुर्व्यवहार किया जाने की शिकायत होती, वह पृथक् होकर अपने सामर्थ्यानुसार अपना मार्ग आप बना सकता था। परन्तु पूर्वी तट के साथ-साथ बसे हुए देश मे इंगलैण्ड के ही सामाजिक और आर्थिक वर्ग स्थिर हो गए थे। राजनीतिक लोकतन्त्र सम्पत्तिशाली लोगो तक ही सीमित था। केवल उन्ही को मत देने का अधिकार प्राप्त था।

परन्तु सीमान्त का विस्तार पश्चिम की ओर को होता गया और मतदाताओ मे साधारण व्यक्तियो की संख्या भद्र जनो से अधिक होती गयी। ज्यो-ज्यो मताधिकार अधिकाधिक वर्गों के लोगो को, और अन्त मे स्त्रियो को भी दिया जाने लगा; त्यो-त्यो राजनीतिक लोकतन्त्र का भी विस्तार होता गया। राष्ट्रपति को और सेनेट के सदस्यो को चुनने का अधिकार भी जनता ने अपने हाथ मे ले लिया। ज्यो-ज्यो राजनीतिक शक्ति केवल उच्च वर्गों के नियन्त्रण से निकलती गयी त्यो-त्यो राजनीति मे सारी आबादी के सामान्य गुण और दोष अधिक निकटता से प्रतिबिम्बित होने लगे। बीसवी शताब्दी के संघर्ष मे संयुक्त राज्य अमेरिका का उत्थान या पतन इन्ही गुणो और दोषो के सहारे होगा।

क्या सही है, क्या गलत और क्या बुद्धिमत्ता है और क्या मूर्खता, इन प्रश्नों का निर्णय जनता स्वयं ही कर रही है। जनता की वाणी ही ईश्वर की वाणी है, इस

प्रचलित कहावत का अर्थ यह किया जा सकता है कि जिस साधन से अमेरिकी समाज की रचना हो रही है, वह वास्तव मे अपनी स्वयं-प्रभु इच्छा का प्रकाशन करने वाली जनता की ही वाणी है। जब किसी अस्पष्ट प्रश्न का उत्तर केवल परीक्षण मे भूलें करके देखने से मिल सकता है तब लोग परीक्षण करते है। भूलें कर के वे सीखते है कि बुद्धिहीनता क्या है और गलती करने पर उन्हे पता लगता है कि गलती क्या थी। कभी-कभी जनता ठीक काम भी करती है और उसके परिणाम से प्रसन्न होती है।

प्रतीत होता है कि प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात्, जनता ने 'लीग ऑव नेशन्स' अर्थात् राष्ट्र-संघ मे सम्मिलित होने से इनकार करके, संसार की सुरक्षा का उत्तर-दायित्व उठाने से पीछे हटकर, और शान्ति की निरर्थक प्रतिज्ञाओ के साथ खिलवाड करके भूल की थी। उन्हे यह कैसे ज्ञात हुआ कि वे भूल कर रहे थे ? जब युद्ध रोकने के लिए खडी की हुई उनकी कागजी दीवारें पर्ल हार्बर मे ढह गयी तब, कठोर अनुभव से अगली बार वे अधिक अच्छी तरह जान चुके थे।

अगली बार सयुक्तराष्ट्र सघ को सस्थापना करने, उसे जीवित रखने और बल संचय करने मे सहायता देने के कार्य मे अमेरिकी जनता ने अधिक उत्साह से योग दिया। कोरिया की चुनौती का सामना करने मे मार्ग दिखलाने का काम संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी किया। उस समय संयुक्त राष्ट्रसघ की मृत्यु से रक्षा, साहस-पूर्ण उत्तर के कारण ही हो सकी थी। पर्ल हार्बर से पूर्व भी उधार-पट्टा कार्यक्रम के लिए स्वीकृति अमेरिकी जनता ने ही दी थी, और द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् मार्शल योजना की स्वीकृति भी उसने ही दी। इन सब कार्यों से प्रकट होता है कि जनता किस प्रकार पिछली भूलो से सीख गयी और नयी आपत्तियों का सामना करने के लिए नये उपायो की परीक्षा करने के लिए तैयार हो गयी।

नि सन्देह भविष्य मे भी जनता कभी भूल करेगी और कभी ठीक करेगी और यदि वह जीवित रह गयी तो वह नया पाठ सीख चुकी होगी। उसका मन उसे आपत्तियो मे भी प्रगति की ओर ले जाता है, क्योकि उसके इतिहास ने उसे प्रगति मे ही विश्वास करना सिखलाया है। यह भी भूल ही हो सकती है, परन्तु यही एक

मात्र मार्ग है जो अधिक अच्छे भविष्य की ओर ले जा सकता है। अमेरिकी जनता को न केवल प्रगति की भावना उत्तराधिकार मे मिली है, वह आज अनिच्छापूर्वक सबसे आगे चलने के लिए भी विवश हो गयी है। वह आज इतिहास की सीमा पर खडी है और वहा उसे अज्ञात शक्तियो का सामना करना पड़ रहा है और शेष प्रश्नो का उत्तर देना पड रहा है। गलत या सही जो सामने आयेगा उसका सामना उसे करना ही पडेगा।

यह स्वाभाविक और उचित ही है कि संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक शक्तिया न केवल आगे बढें, साथ ही पीछे का भी ध्यान रक्खें। इतिहास के सीमान्त पर साहस की आवश्यकता तो है ही, सावधानता की भी है। साहस की आवश्यकता जो कुछ किया जाना चाहिए उसे करने के लिए तो है ही, जिन आशंकाओ को भीतर-भीतर दबा रहने देना उचित नही उन्हे प्रकट करने के लिए भी है। सब आशाओ और आशंकाओ पर विचार करने के पश्चात् जो भी निश्चय किये जायं उन पर दृढ़ रहना चाहिए। यह कार्य अमेरिकी राजनीतिक पद्धति, विवाद के समस्त उच्छृङ्खल और संघर्षमय चक्र के बावजूद, पर्याप्त सफलता से कर रही है।

सयुक्त राज्य अमेरिका का सौभाग्य है कि अमेरिकी जनता का निर्माण अनेक आबादियो से मिलकर हुआ है; इस कारण वह संसार का नेतृत्व करने के भयंकर कार्य का सामना भली-भांति कर सकता है। संयुक्त राज्य की जनता, मानव जातियो की उलझी हुई आशाओ, आशंकाओ और विश्वासो से, उनकी घृणाओ और सन्देहो से, और उनमे परस्पर सद्भावना की आवश्यकता से, अपरिचित नही है। ये सब समस्याएं हमारे अपने देश मे भी विद्यमान हैं। ये सब यहा सद्भावना और सहयोग की समरसता मे परिणत नही हुई हैं। परन्तु इन सबके बावजूद, गृह युद्ध के भडके बिना, हम सब एकत्र मिल जुलकर रहते हैं। संसार को इसी की आवश्यकता भी है, किसी असम्भव स्वप्न या कल्पना की नही और अमेरिकी जनता का भाग्य है कि वह अपने घर की कठिनाइयो के कारण इस सबके अभिप्राय से सर्वथा अनभिज्ञ नही है।

अमेरिकी स्वप्न मे असम्भव कुछ नही है। तीन-सौ वर्ष से हम निरन्तर यात्रा

कर रहे है। हम बहुतेरा चल चुके हैं, परन्तु उसका अन्त कही दिखलाई नही पडता। हमारा संकल्प भी किसी लक्ष्य पर पहुचने का नही, यात्रा करते चले जाने का है। दुर्गमता को भी सुगमता के साथ मिलाते हुए, हम यात्रा का आनन्द ले रहे हैं। हमे लगता है कि साधारणतया हम ऊंची भूमि पर पहुचते जा रहे हैं और पहले की अपेक्षा अब अच्छा दिखाई देने लगा है।

एक शताब्दी से अधिक समय हुआ कि फ्रेंच यात्री डो-ताकेविले ने कहा था, "अमेरिकी शासन का ढांचा उन लोगो के लिए उपयुक्त नही होगा जिन्हे अपने मामलो का प्रबन्ध स्वयं करने का बहुत पहले से अभ्यास न हो, या जिनके समाज मे राजनीतिक विज्ञान निम्नतम वर्गो तक न पहुच चुका हो।" अमेरिकी लोग यह सिफारिश नही कर सकते कि जो देश अभी-अभी पीढियो पुरानी स्वच्छन्द शासन प्रणालियो से मुक्त हुए हैं, वे भी उन तमाम विशेषताओ सहित अमेरिकी प्रणाली का अनुकरण करने लगे जो कि अमेरिकी जनता को अपने विशिष्ट अनुभवो के पश्चात् प्राप्त हुई है। अन्य जो लोग राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने मे सफल हो गये हैं, उनसे अमेरिकियो की सिफारिश यह है कि वे लोकतन्त्रीय प्रगति के मार्ग की यात्रा अपने ही परम्पराओ और अपनी ही प्रतिभा के भरोसे, इस विश्वास के साथ आरम्भ करे कि समस्त कठिनाइयो के बावजूद किन्ही भी लोगो के लिए यही मार्ग सर्वोत्कृष्ट है।

लोग अपनी यात्रा के मार्ग की खोज अनेक प्रकार से करते हैं। विज्ञान से सीख सकने वाले हर पदार्थ का वह उपयोग करते हैं। वे धर्म के द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का भी उपयोग करते हैं। और, अन्त मे नित्यप्रति के जीवन के साधारण आदान-प्रदान मे वे अमेरिकी मार्ग पर ही पहुँच जाते हैं।

अपने शासन का संगठन करते हुए वे विवाद, समझौते और सहमति के लोकतन्त्रीय उपायो का उपयोग अपनी जानकारी के अनुसार करते हैं। तानाशाहियो मे राजनीति की कला का प्रयोग नही हो सकता, और लोकतन्त्रीय मार्ग मे कुछ न कुछ कोलाहल तथा अव्यवस्था रहती ही है। इन दोनो के बीच मे अमेरिकी लोग बीसवी शताब्दी के भविष्य की खोज लोकतन्त्रीय मार्ग से ही कर रहे हैं—उसका परिणाम चाहे भला हो चाहे बुरा।